संयुक्तांक: 76–77 जनवरी–जून 1997

राजभाषा भारती

राजभाषा विभाग गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

नेताजी सुभाष चन्द्र बोस की जन्म शतवार्षिकी के अवसर पर
राजभाषा भारती परिवार की भावभीनी श्रद्धांजलि

भारति जय विजय करे, कनक-शस्य-कमल धरे —निराला

राजभाषा भारती

राजभाषा की त्रैमासिकी

वर्ष : 19-20
संयुक्तांक : 76-77
पौष-फाल्गुन, 1918 जनवरी-मार्च, 1997
चैत्र-ज्येष्ठ अप्रैल-जून, 1997

☐ **संपादक :**

प्रेम कृष्ण गोरावारा
निदेशक (अनुसंधान)
फोन: 4617807

☐ **उप संपादक :**

नेत्र सिंह रावत
फोन: 4698054
सुरेन्द्र लाल मल्होत्रा
फोन: 4698054

☐ **संपादन सहायक :**

शांति कुमार स्याल
फोन: 4698054

निःशुल्क वितरण के लिए

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। सरकार अथवा राजभाषा विभाग का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

पत्र-व्यवहार का पता :

संपादक, राजभाषा पुष्पमाला,
राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय,
लोकनायक भवन, (दूसरा तल)
खान मार्किट, नई दिल्ली-110003

अनुक्रम

अनुक्रम		पृष्ठ
☐ संपादकीय		3
☐ इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार वितरण समारोह के अवसर पर महामहिम राष्ट्रपति डॉ॰ शंकर दयाल शर्मा का भाषण		5
☐ लेख		
1. गिरा अर्थ जल वीचि सम कहियत भिन्न न भिन्न	— डा॰ गार्गी गुप्त	7
2. भारतीय भाषाई सांस्कृतिक एकता और हिंदी	— डॉ॰ जी॰ पी॰ श्रीवास्तव	10
3. आधुनिक हिंदी में शब्द प्रयोग की प्रवृत्तियां	— श्रीमती ल्यू ह्वी	12
4. शब्द संकल्पना को रूपायित करती नव परिकल्पना	— डॉ॰ पूरनचन्द टण्डन	14
5. हिंदी में फारसी और अंग्रेजी शब्दों का लिंग-निर्णय	— अनीता गुप्ता	16
6. अनुवादः प्रकृति, प्रक्रिया और प्रकार	— रमेश चन्द्र	19
7. राजभाषा प्रबंधन की आवश्यकता	— डॉ॰ किरन पाल सिंह तेवतिया	23
☐ साहित्यिकी		
8. संस्कृत साहित्य का परिचयात्मक इतिहास	— डॉ॰ शशि तिवारी	28
9. निराला प्रांसगिक क्यों!	— अनिल त्रिपाठी	33
☐ पुरानी यादें: नए परिप्रेक्ष्य		
10. जैनेन्द्रः पुनर्मूल्यांकन की पेशकश	— विश्वंभरनाथ उपाध्याय	35
11. अज्ञेयः मेरे आईने में	— पवन चौधरी 'मनमौजी'	37
☐ भाषा संगम		39
पंजाबी कविताः भारत के गगन इन्दु	— मूल कविः भाई वीर सिंह	
सिंधी कविता	कवयित्रीः कला प्रकाश	

□ पुस्तक समीक्षा 42
(इस स्तम्भ में लेखक का नाम/समीक्षक का नाम पूर्वापर क्रम में दिया गया है)
स्वाधीनता संग्रामः बदलते परिप्रेक्ष्य (डा० राम विलास शर्मा/डा० गीता शर्मा), भारतीय इतिहास और ऐतिहासिक भौतिकवाद (डा० रामविलास शर्मा/डा० गीता शर्मा) बैंकिंग शब्दावली (ब्रजकिशोर शर्मा/कृष्ण गोपाल अग्रवाल), कानूनश्री (पवन चौधरी 'मनमौजी'/रसिक बिहारी मंजुल), सनातन धर्म और महात्मा गांधी (डा० पुखराज/कंवर सिंह), कल से बेखबर (पुष्पा हीरालाल/जस्सी सिद्धू), गजानन माधव मुक्तिबोध (रणजीत सिंह/रमणिका गुप्ता), प्रशासनिक हिंदी (डा० ओमप्रकाश सिंह/प्रो० मुकुल चंद पाण्डेय,), प्रतिनिधि बाल कहानियां (सं० जय प्रकाश भारती/राजेश श्रीवास्तव), भारत के प्रसिद्ध तीर्थ (श्रीनाथ मिश्र/शांति कुमार स्याल), प्रपंच (श्रीमती बाला शर्मा/अशोक त्यागी) तिरूप्पावै (पा० वेंकटाचारी/नेत्रसिंह रावत)

□ हिंदी दिवस/सप्ताह/पखवाड़ा/माह, 1996 54

□ कार्यशालाएं 64

□ समिति समाचार 67

□ संगोष्ठी/सम्मेलन 68

□ विविधा 73

● प्रशिक्षण ● प्रतियोगिताएं ● समाचार ● आदेश-अनुदेश ● पाठकों के पत्र

संपादकीय

अपने सभी प्रिय पाठकों के लिए नव वर्ष की शुभकामनाओं के साथ राजभाषा भारती का संयुक्तांक-76-77 आपके सम्मुख प्रस्तुत है।

वर्ष 1997 कई दृष्टियों से एक महत्वपूर्ण वर्ष है। इसी वर्ष जनवरी, 23 को स्वाधीनता संग्राम के अविस्मरणीय सेनानी नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की जन्म शताब्दी सम्पूर्ण देश में मनाई गई और इस उपलक्ष्य में जगह-जगह पर समारोहों का आयोजन किया गया। सभी ओर नेताजी के इन अमर शब्दों:

"कदम-कदम बढ़ाए जा
खुशी के गीत गाए जा
यह जिंदगी है कौम की
तू कौम पे लुटाए जा"

की गूंज से ऐसा आभास होने लगा मानो नेताजी स्वयं हमारे मध्य उपस्थित हों, इसमें लेशमात्र भी संदेह नहीं कि भले ही शारीरिक रूप से वह आज हमारे बीच न सही परन्तु उनकी याद हमेशा हमारे दिलो-दिमाग में ताजा रहेगी और वह सबके लिए प्रेरणास्रोत बने रहेंगे। स्वतंत्रता की 50वीं वर्षगांठ भी इसीवर्ष पड़ रही है जिसके बारे में अगले अंको में अपने विचार आपके समक्ष रखूंगा।

"राजभाषा भारती" के सम्पादक के रूप में यह मेरा पहला अंक है। आशा है इस संयुक्तांक में समाविष्ट लेख पाठकों को रूचिकर लगेंगे। मेरा सतत् प्रयास रहेगा कि पूर्ववर्ती अंकों की भांति भविष्य में भी राजभाषा भारती आपके लिए सुरूचिपूर्ण व ज्ञानवर्धक लेख प्रस्तुत करती रहे। मुझे पूरा विश्वास है कि इस प्रयास में हमें पहले की तरह आप सबका सहयोग और समर्थन मिलता रहेगा। धन्यवाद!

–प्रेम कृष्ण गोरावारा

जो राष्ट्रभाषा का अपमान करता है वह देश द्रोही है।

—— महात्मा गाँधी

मेरे देश में हिन्दी को इज्जत नहीं यह मैं नहीं सह सकता।

—— विनोबा भावे

देश के सबसे बड़े भूभाग में बोली जाने वाली हिन्दी ही राष्ट्रभाषा पद की सही अधिकारिणी है।

—— सुभाष चन्द्र बोस

इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार वितरण समारोह के अवसर पर महामहिम राष्ट्रपति डा० शंकर दयाल शर्मा का भाषण

[संघ की राजभाषा नीति-कार्यान्वयन में उत्कृष्ट उलब्धियों के लिए भारत सरकार के मंत्रालयों/विभागों, सरकारी क्षेत्र के बैंकों व वित्तीय संस्थाओं और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों को वर्ष 1986-87 से इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार दिए जा रहे हैं। वर्ष 1995-96 के इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार दिनांक 14.9.96 को राष्ट्रपति भवन में आयोजित एक समारोह में महामहिम राष्ट्रपति डॉ० शंकर दयाल शर्मा द्वारा प्रदान किए गए। इस अवसर पर महामहिम राष्ट्रपति जी ने एक सारगर्भित भाषण दिया जिसे 'राजभाषा भारती' के पाठकों के लिये यथावत प्रस्तुत किया जा रहा है-संपादक]

आज 'हिंदी दिवस' है। इस अवसर पर इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार प्रदान करते हुए मुझे अत्यंत प्रसन्नता हो रही है। मैं पुरस्कार प्राप्त करनेवाले मंत्रालयों, विभागों, बैंकों, उपक्रमों, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों तथा लेखकों को अपनी बधाई देता हूं। साथ ही यह आशा करता हूं कि आप लोगों से प्रेरणा पाकर अन्य लोग भी राजभाषा का प्रयोग अधिक-से-अधिक करने के लिए सामने आएंगे।

श्रीमती इंदिरा गांधी जी को जन्म से ही हिंदी के संस्कार मिले थे। और जीवन भर वे हिंदी के प्रति अपने राष्ट्रीय दायित्व को निभाती रहीं। सरकारी कामकाज में हिन्दी को बढ़ावा देने के उद्देश्य से उन्होंने राजभाषा विभाग की स्थापना की थी। हिंदी को विश्व-स्तर तक ले जाने में भी उनकी भूमिका रही है। वे हिंदी की शक्ति तथा लोगों के लिए उसकी उपयोगिता से अच्छी तरह परिचित थीं। इसलिए वे हमेशा भारत की भाषाओं को महत्व देते हुए हिंदी के विकास की बात किया करती थीं। 10 जनवरी, 1975 को नागपुर में आयोजित प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन का उद्घाटन उन्होंने इन शब्दों के साथ किया था—

> "हिंदी विश्व की महान् भाषाओं में से है। यह करोड़ों की मातृभाषा है, और करोड़ों लोग ऐसे हैं, जो इसे दूसरी भाषा के रूप में बोलते हैं.... हिंदी को न केवल सब क्षेत्रों के बीच बल्कि सब वर्गों के बीच जीवंत भाषा बनाना है। इसके लिए भाषा को सादा-लचीली होना है, ताकि यह बदलती स्थितियों और नये ज्ञान को अपना सके। जहां जरूरी हो, दूसरी भाषा से शब्द लेने में संकोच नहीं होना चाहिए।"

इसमें कोई दो मत नहीं कि हिंदी सदियों से हमारे देश के व्यापारियों, मज़दूरों और आम लोगों की भाषा रही है। यही वे लोग हैं, जिन्होंने इस भाषा को न केवल देश के कौने-कौने तक, बल्कि विदेशों तक पहुंचाया है। तेरहवीं शताब्दी में ही महान् कवि अमीर खुसरों ने कहा था—

> "तुर्क हिन्दुस्तानियत मन हिन्दवी गोयम जन्नब,
> चु मन तूतिए हिन्दम्, अर असम पुर्सों
> जे-मन हिन्दवी पुर्स, ता नम्ज गोयम"

अर्थात्, "मैं हिंदुस्तानी की तूती हूं। अगर तुम वास्तव में मुझसे कुछ पूछना चाहते हो, तो हिन्दवी (हिंदी) में पूछो। मैं "हिन्दवी" में अनुपम बातें बता सकूंगा।"

यह तब की बात है, जब हिंदी का रूप धीरे-धीरे उभर रहा था। कवि खुसरो का यह कथन इस बात का प्रमाण है कि भाषा आरंभ से ही संकीर्ण मनोवृति से ऊपर रही है। इसने हमेशा अपनी दोनों बाहें फैलाकर दूसरी भाषा के शब्दों को गले लगाया है। इसके कारण इसकी शक्ति बढ़ी है तथा यह अधिक-से-अधिक लोगों तक पहुंचकर उनके हृदयों को जीत सकी है। हमें यह बात याद रखनी चाहिए कि जिस काल में हिंदी भाषा फली-फूली और फैली, उस समय इसके पीछे कोई राजनीतिक ताकत काम नहीं कर रही थी। यह आगे बढ़ी; क्योंकि लोग इसे अपना समझते थे। यही कारण था कि हमारे पूरे देश की सभी भाषाओं ने इस भाषा के नेतृत्व में आज़ादी की लड़ाई लड़ी। हिंदी को उस समय राष्ट्र को जोड़ने वाली एक शक्ति के रूप में स्वीकार किया गया। स्वतंत्रता-संघर्ष के हमारे जननेता राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने साहित्य सम्मेलन के इंदौर में आयोजित अधिवेशन में 10 अप्रैल, 1935 को कहा था—

> "अगर हिंदुस्तान को सचमुच एक राष्ट्र बनाना है, तो चाहे कोई माने या न माने, राष्ट्रभाषा तो हिंदी ही बन सकती है, क्योंकि जो स्थान

हिंदी को प्राप्त है, वह किसी दूसरी भाषा को कभी नहीं मिल सकता। हम किसी भी हालत में प्रान्तीय भाषाओं को मिटाना नहीं चाहते। हमारा मतलब तो सिर्फ़ यह है कि विभिन्न प्रान्तों के पारस्परिक संबंध के लिए हम हिंदी भाषा सीखें।"

अहिंदीभाषी नेता हिंदी की व्यावहारिकता से परिचित थे। इसलिए इसके विकास में सभी ने अपना-अपना योगदान दिया। स्वामी दयांनद सरस्वती, लोकमान्य तिलक, सुब्रह्मण्यम भारती, सुभाष चंद्र बोस तथा विनोबा भावे आदि का इस दिशा में जो योगदान रहा है, उससे हम सब परिचित हैं।

मैं यह मानता हूं कि कोई भी राष्ट्र अपनी भाषा के बिना गूँगा हो जाता है। कोई भी लोकतांत्रिक व्यवस्था लोक-भाषा के अभाव में गूँगी हो जाती है। स्वतंत्रता के बाद हमने लोकतांत्रिक व्यवस्था अपनाई है। हमारी व्यवस्था जनकल्याणकारी व्यवस्था है। ऐसी स्थिति में राष्ट्रभाषा के महत्व की अनदेखी कदापि नहीं की जानी चाहिए। यदि इस रास्ते में किसी तरह की कठिनाई आ रही हो, कोई बाधा आ रही हो, तो उस पर अच्छी तरह विचार करके उन्हें दूर करने की कोशिश होनी चाहिए, बजाए इसके कि हाथ बाँधकर अलग खड़े हो जाँए।

मैंने लोगों को अक्सर यह कहते सुना है कि हिन्दी अक्षम भाषा है। इसके पास विधि, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी जैसे आधुनिकतम् विषयों की शब्दावली का अभाव है। मैं इस आरोप से सहमत नहीं हो पाता। मेरा यह माना रहा है कि कोई भी भाषा अक्षम नहीं होती। यदि ऐसा लग रहा है, तो यह अक्षमता भाषा की नहीं, बल्कि उसके प्रयोग करनेवालों की है। जिस समाज ने एक भाषा को जन्म दिया है, उस समाज के अंदर ही वह क्षमता मौजूद रहती है कि वह उसकी क्षमता का किसी भी सीमा तक विस्तार कर सके। जब तक आवश्यकता के अनुसार शब्द गढ़े नहीं जाएंगे, आवश्यकता के अनुसार नये शब्द ग्रहण नहीं किए जाएंगे, तब तक भला कोई भाषा सक्षम कैसे हो सकती है।

यही बात हिंदी के बारे में भी कही जा सकती है। कुछ लोग यह भी कहते हुए सुने गए हैं कि कार्यालयों का काम हिंदी भाषा में करना कठिन काम है। यह बात हिंदीभाषी तक कहते हैं। मज़ेदार बात तो यह है कि जिन्हें अच्छी अंग्रेजी नहीं आती, जो अपने घर तथा दैनिक जीवन में हिंदी का ही प्रयोग करते हैं, वे भी कार्यालयों में काम अंग्रेजी में करना पंसद करते हैं। मुझे लगता है कि यदि ऐसे लोगों की अंग्रेजी शब्दावली को देखा जाए, तो उनके पास अंग्रेज़ी के करीब 500 शब्द ही होंगे, जिनका कार्यालयीन कार्यों के लिए प्रयोग करते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि यदि कोई भी व्यक्ति हिंदी के 500 कार्यालयीन शब्दों को याद रख ले, तो आसानी से हिंदी में काम कर सकता है। मैं नहीं समझता कि इतने शब्दों को याद रख पाना कोई मुश्किल बात है। लेकिन यह तभी हो सकता है, जब कि लोगों में ऐसा करने की भावना आए। कोई काम यदि एक बार शुरू हो जाता है, तो वह पूरा भी होता है। मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि राजभाषा विभाग के प्रयास से यह काम शुरू हो चुका है। इसलिए आशा की जानी चाहिए कि यह काम पूरा भी होगा।

आज विश्व-प्रतिस्पर्धा का युग है। आर्थिक तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में एक जबर्दस्त होड़ शुरू हो गई है। विश्व के देश इस प्रतिस्पर्धा में भारत की महान शक्ति को स्वीकार करने लगे हैं। हमारे पास प्रचुर संसाधन है। मानव संसाधन की दृष्टि में भी भारत अग्रणीय देश है। प्रतिस्पर्धा में आगे बढ़ने के लिए हमें अपने इस मानवीय संसाधन का अधिकतम और सर्वोत्तम उपयोग करना होगा। मुझे लगता है कि इसके लिए राजभाषा की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है।

हमें यह देखना है कि कार्यालयों में, कारखानों में और खेतों में कौन लोग काम कर रहे हैं। आज चाहे औद्योगिक क्रांति हो या कृषि क्रांति, यह तभी संभव होगी, जब हम लोगों तक अपनी बात पहुंचा सकेंगे। कोई भी प्रौद्योगिकी और तकनीकी तभी संस्कृति में तब्दील होती है, जब कि वह लोगों तक उनकी भाषा में पहुंचाई जाए। संप्रेषण केवल दिमाग़ को ही नहीं छूता, बल्कि उससे कहीं अधिक दिल को भी छूना चाहिए। और जब किसी भी काम में दिल और दिमाग़ दोनों लगते हैं, तभी उसकी क्षमता का सर्वोत्तम रूप सामने आ पाता है। इस दृष्टि से भी हमें राजभाषा को देखना चाहिए, उस पर विचार करना चाहिए और उसे व्यवहार में लाना चाहिए।

यहीं पर राजभाषा को जनभाषा के करीब ले जाए जाने की बात आती है। मुझे लगता है कि इस बारे में कुछ महत्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार किया ही जाना चाहिए। यह सोचा जाना चाहिए कि क्यों राजभाषा जनभाषा नहीं बन पा रही है? क्यों जनभाषा का राजभाषा के साथ तालमेल नहीं बैठ पा रहा है?

राजभाषा पर अक्सर क्लिष्टता और रूखेपन का आरोप लगाया जाता है। कहा जाता है कि उसकी शब्दावलियां कठिन हैं, तथा उसका वाक्य विन्यास लंबा और जटिल है। हमारे विद्वान, भाषाविद् और लेखकों को इस बारे में गंभीरता से विचार करके कोई सही रास्ता निकालना चाहिए। यदि इतने वर्षों बाद राजभाषा का प्रभाव पत्रकारिता की भाषा पर नहीं पड़ा है, साहित्य पर नहीं पड़ा है, संचार माध्यमों पर नहीं पड़ा है, तथा लोगों के व्यवहार की भाषा पर नहीं पड़ा है, तो इस बारे में गंभीरता से विचार किया जाना चाहिए। वही भाषा समृद्ध और उपयोगी होती है, जो व्यवहार में लाई जाए। विशेषकर एक लोकतांत्रिक व्यवस्था में राजभाषा को लोगों के करीब की ही भाषा होनी चाहिए। यदि हिन्दी में सोचकर काम किया जाए, तो इस बारे में मदद मिल सकती है। इसके लिए मौलिक हिन्दी में काम किया जाना जरूरी है।

मुझे यह भी लगता है कि हिंदी भाषा के मानकीकरण की ओर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। मैंने देखा है कि हिंदी-क्षेत्रों में ही एक पदनाम के लिए अलग-अलग शब्दों का प्रयोग किया जाता है। कहीं वह निदेशालय है, तो कहीं संचालनालय। कहीं वह मंडल, है, तो कहीं संभाग। इससे निश्चत रूप से अहिंदीभाषियों को समझने में परेशानी होती है।

आज ही के दिन सन् 1949 में हिंदी को राजभाषा के रूप में स्वीकार किया गया था। इसलिए यह हमारे देश के नागरिकों का संवैधानिक दायित्व है कि हिंदी के विकास में अपना-अपना योगदान करें। यह हमारी अपनी संस्कृति और अपनी राष्ट्रीयता के लिए भी एक जरूरी तत्व है।

आप लोगों ने मुझे इस कार्यक्रम में शामिल किया, इसके लिए मैं आप सबका आभारी हूं।

जय हिंद!

गिरा अर्थ जल वीचि सम कहियत भिन्न न भिन्न

—डॉ॰ गार्गी गुप्त

जब से मनुष्य ने बोलना सीखा, शायद तभी से अनुवाद का भी आरम्भ हुआ। प्रारम्भ में मौखिक रूप से और कालान्तर में लिखित रूप में। जार्ज स्टेनर ने अनुवाद सिद्धान्त सम्बन्धी अपनी पुस्तक "आफ्टर बाबेल" में कहा है कि अनुवाद का अस्तित्व इसलिये है क्योंकि लोग अलग-अलग भाषाएं बोलते हैं और फिर हम कोई एक या आधी दर्जन, बीस-तीस भाषाएं तो बोलते नहीं। मोटे अनुमान के अनुसार विश्व में कम से कम चार-पांच हजार भाषाएं तो प्रयोग में आ ही रही होंगी। भाषायी दृष्टि से वस्तुतः विश्व ही नहीं, भारत भी बाबेली मीनार से कम नहीं। बाबेल का अर्थ ही है कि अनेक भाषाओं के कारण उत्पन्न होने वाला बावेला अथवा फसाद। भारत एक बहुभाषी देश है, आज से नहीं बल्कि शताब्दियों से। प्राचीन काल में यहां वैदिक संस्कृत के पूर्व भी कुछ स्थानीय भाषाएं चल रही थीं जिन्हें आर्य मलेच्छ या मृध्र भाषाएं कहते थे। वैदिक रचनाओं के संदर्भ में अम्भृर्ण ऋषि की पुत्री वाक् ने प्रोक्ताओं के आधार पर देवों द्वारा सेवित और मनुष्यों द्वारा सेवित दो भेदों की चर्चा की है। वाक् तथा मृध्र वाक् का उल्लेख आर्यों तथा असुरों की भाषा के अर्थ में हुआ है। सुहोत्र भारद्वाज तथा शुनहोत्र ने विभिन्न बोलियां बोलने वाले व्यक्तियों के लिए "विवाच" शब्द का और अथर्व संहिता में अथर्व ऋषि ने "विवाचस जनम्" अर्थात् भिन्न-भिन्न भाषा-भाषी लोग, शब्दों का प्रयोग किया है। ऋग्वेद संहिता के कुछ मंत्रों में वाक् की संख्या तीन और वाणियों की संख्या सात बताई गई है। वाक् का सम्पूर्ण व्यापार अर्थ के अभियान के लिये ही होता है। व्यक्ति स्वभाव से संवेदनशील तथा सम्प्रेषणप्रिय होता है और चाहता है कि उसके सुख-दुख के अनुभव एवं चिन्तन-मनन दूसरों तक संप्रेपित किया जाए। यह संप्रेषण भाषा के द्वारा ही सम्भव है क्योंकि भाषा ही अर्थ की संवाहिका है और जब कई-कई भाषाएं प्रयुक्त होती हैं तो भावनात्मक एवं वैचारिक आदान-प्रदान के लिये अनुवाद ही एकमात्र सम्बल होता है।

व्यक्ति अपना मन्तव्य सीधे-सादे अभिधात्मक ढंग से भी प्रकट करता है और लाक्षणिक तथा व्यंजनात्मक शैली के द्वारा भी। अभिव्यक्ति के इसी कौशल के अनुरूप अनुवादक की समस्याएं भी घटती-बढ़ती रहती हैं। जिस प्रकार नदी पार करने में कर्णधार का कौशल अपेक्षित होता है उसी प्रकार मूल रचना के आशय को सहज और सुबोध अभिव्यक्ति देने का कौशल भी सतत् प्रयत्न कर अभ्यास साध्य ही होता है।

रामायण काल में ऐसे कई संकेत मिलते हैं जिनसे पता चलता है कि संस्कृत का एक रूप लोकभाषा का भी था। वाल्मीकि ने लव-कुश को आदेश दिया था कि वे आश्रमों, ब्राह्मणों के घरों, राजमार्गों, यज्ञ-मंडपों तथा प्रसादों में जाकर लोक-भाषा में रामचरित का गान करें। इल्वन नामक असुर ब्राह्मण वेश धारण कर और संस्कृत बोलकर ब्राह्मणों को श्राद्ध में आमंत्रित किया करता था। स्पष्ट ही इन सभी वर्गों द्वारा संस्कृत अच्छी तरह समझी-बोली जाती थी। अशोक-वाटिका में सीता का दर्शन होने पर हनुमान के सामने प्रश्न था कि उनसे किस भाषा में वार्तालाप किया जाए। उन्हें डर था कि यदि यह द्विजालियों जैसी संस्कृत में बोलेंगे तो सीता उन्हें कहीं संस्कृतविज्ञ रावण का दूत न समझ लें। इसलिये उन्होने निश्चय किया कि उन्हें आम जनवाणी ही बोलनी चाहिए। हनुमान ने संस्कृत के तीन प्रचलित रूपों की ओर संकेत किया है — (1) मानुषी संस्कृत, जो सामान्य बोलचाल की भाषा थी। (2) द्विजाति संस्कृत, जो शिष्ट ब्राह्मणों की भाषा थी तथा (3) वानर संस्कृत, जो संभवतः दक्षिण में संस्कृत और द्राविड कुल की भाषाओं का एक मिश्रित रूप थी। ऐसा लगता है कि आर्यों के लिये यह वानरी संस्कृत द्रविड़ भाषाओं के मिश्रण के कारण शायद दुर्बोध थी क्योंकि जब दधिमुख ने मधुवन भंग का वर्णन सुग्रीव के समक्ष किया तो लक्ष्मण उनकी बात नहीं समझ सके थे।

समय के साथ-साथ पाली, प्राकृत अपभ्रंश आदि अनेक भाषाओं का उद्भव, विकास एवं ह्रास हुआ। अशोक के शासनकाल में पालि जनता की भाषा बनी और उसमें प्रचुर बौद्ध साहित्य की रचना हुई। बौद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार के लिये अशोक ने देश-देशान्तरों में अपने प्रतिनिधियों को भेजा और इस प्रकार अनुवादों की एक लम्बी तथा सुनियोजित परम्परा आरम्भ हो गई।

अब विचारणीय बात यह है कि जब वैदिक काल से ही भारत में अनेक भाषाएं और बोलियां प्रयुक्त हो रही थीं और परस्पर संवाद, तथा वैचारिक आदान-प्रदान के लिये अनुवाद भी हो रहा था तो अनुवाद विषय पर प्राचीन विद्वानों ने कोई भाष्य क्यों नहीं लिखा? तत्कालीन वैयाकरणों ने भाषा सम्बन्धी प्रायः सभी अंगो-उपांगों पर विस्तृत विवेचन किया है। भाष्य और टीकाएं लिखी हैं परन्तु अनुवाद के बारे में वे मौन क्यों रहे? संस्कृत साहित्य में "अनुवाद" शब्द के जो छिटपुट प्रयोग मिलते हैं उनसे इतना ही पता चलता है कि प्रारम्भ में इस शब्द का प्रयोग आवृति अथवा पुनर्कथन के लिये होता था। आगे चलकर न्यायसूत्र के वात्स्यायन भाष्य में कहा गया कि अनुवाद मात्र पुनरुक्ति नहीं है क्योंकि वह निरर्थक भी हो सकती है और सार्थक भी। जब बात को स्पष्ट करने के लिये सार्थक या सप्रयोजन पुर्नकथन हो तभी वह अनुवाद होता है। जैमिनी न्यायमाला तथा मनुस्मृति आदि अन्य ग्रन्थों में भी अनुवाद को पुर्नकथन ही कहा गया है। इनसे अनुवाद विधा पर तो कोई विशेष प्रकाश नहीं पड़ता, केवल इतना ही निष्कर्ष निकलता है कि अनुवाद के लिये एक पूर्व कथन, वक्तव्य अथवा पाठ का सामने होना आवश्यक था ताकि उसे अज्ञ या अल्प भाषा-ज्ञान वाले व्यक्तियों को बारम्बार दोहरा कर और टीका व्याख्या करते हुये भली-भांति समझाया जा सके।

तत्कालीन वैयाकरणों तथा पंडितों द्वारा अनुवाद को चर्चा का विषय न मानने का प्रमुख कारण मेरे अनुसार यही हो सकता है कि उन्होंने अनुवाद

और मौलिक लेखन के बीच कभी भी लक्ष्मण-रेखा नहीं खींची। सच तो यह है कि मौलिक लेखन भी लेखन है, और अनुवाद भी। दोनों ही के लिए भाषाओं की पकड़ तथा उनके व्याकरण का गहन ज्ञान होना आवश्यक है। उदाहरण के लिये कालिदास ने जब अभिज्ञान शाकुन्तलम् की रचना की तो उन्हें वैदिक संस्कृत, लौकिक संस्कृत और प्रान्तीय प्राकृतों का खूब ज्ञान था और लिखते समय तीनों में आन्तर-अनुवाद की सामान्तर प्रक्रिया उनके चिंतन एवं लेखन में निरन्तर चलती रहती थी। इसी प्रकार यदि कोई अनुवादक आज उसका उर्दू या मराठी, अथवा जर्मन या फ्रेंच में किसी नाटक का अनुवाद करता है तो उसे नाटक में प्रयुक्त भाषाओं के अतिरिक्त अपनी भाषा और उसके व्याकरण का सम्यक ज्ञान होना भी अनिवार्य है। भाषा और व्याकरण के सम्यक ज्ञान के अभाव में न तो अच्छा लेखन संभव है और न ही लेखन का उपांग अनुवाद। इसलिये स्तरीय मौलिक लेखन के समान स्तरीय अनुवाद की भी पहली शर्त यही है कि अनुवादक को मूल की भाषा और लक्ष्य भाषा के व्याकरण का पूरा-पूरा ज्ञान हो। यह ठीक है कि लेखक केवल एक भाषी हो सकता है परन्तु अनुवादक के लिये दोनों सम्बद्ध भाषाओं तथा उनके व्याकरणों का अच्छा ज्ञाता होना परम आवश्यक है।

आचार्य कुन्तल ने शब्द और अर्थ की परस्पर स्पर्धी चारूता के साथ-साथ रहने के भाव को साहित्य कहा है। जिस प्रकार कोई शब्द अपने समस्त सौन्दर्य के बावजूद साहित्य नहीं हो सकता उसी प्रकार अर्थ कितना भी सुन्दर क्यों न हो, स्टीक शब्द के बिना पंगु रहता है। स्तरीय साहित्य के लिये शब्द और अर्थ दोनों का साथ-साथ सुन्दर एवं सटीक होना परम आवश्यक है। जहां शब्द और अर्थ अर्थात् पद और पदार्थ में होड़ लग जाये कि कौन कितना सुन्दर है, शब्द अर्थ को और अर्थ शब्द को मात देने को उद्यत हो, तो ऐसी ही परस्पर स्पर्धी चारूता के संयोग को कुन्तल साहित्य कहते हैं। उनके अनुसार सुन्दरता, सामजस्य में है, विलगता में नहीं। ऊपर से देखने पर यों "अर्थ" शब्द बहुत छोटा-सा प्रतीत होता है परन्तु इसकी परिधि में सब कुछ आ जाता है — नया-पुराना, आगत-अनागत, वस्तु-विचार, भाव, रस-रसाभास, अभिधा, लक्षणा और व्यजंना सभी कुछ। कहते हैं कि समस्त देवियों तथा अप्सराओं के सर्वोत्तम अंगों का संग्रह करके सर्वांग सुन्दरी पौराणिक तिलोमा का सृजन हुआ था। परन्तु यदि विधाता इस समग्र सौन्दय को यथा स्थान केन्द्रित न करता तो रूपसी के स्थान पर एक विरूपा तिलोत्तमा का जन्म होता। सृष्टि के कुशल स्रष्टा के समान शब्द तथा अर्थ दोनों का सामंजस्य करने वाला व्यक्ति ही कुशल साहित्यकार होता है और यही बात एक कुशल अनुवादक पर भी लागू होती है। "शब्दार्थी साहिताकाव्यम्" भामह ने काव्यादर्श में कहा है।

"सेस, महेस गनेस, सुरेसहु जाहि निरन्तर गावै" में यदि हम नाग, शंकर, गजपति, इन्द्र आदि पर्याय रख दें तो यद्यपि अर्थ अखंडित रहेगा परन्तु शब्दों का नाद सौन्दर्य समाप्त हो जायेगा। यही कारण है कि साहित्य में अर्थ तत्व के समान ही उसके प्रस्तुतिकरण का भी उतना ही महत्व होता है। इसी से शब्द और अर्थ का मर्म समझने के लिए लेखक तथा अनुवादक में सूचिका भेद की अर्न्तबुद्धि चाहिए, ऊपरी पर्त से अंशार्थ ग्रहण करके मूल के मर्म तथा सौन्दर्य को समझने वाली पिपीलिका बुद्धि नहीं।

रचना के मूलार्थ एवं सौन्दर्य को अच्छी तरह हृदयंगम करने योग्य बनाने हेतु ही प्राचीन काल में व्याकरण और तर्क शास्त्र पर बहुत जोर दिया गया था। इस से विद्यार्थी को शब्दों की व्युत्पति और प्रसंगानुकूल अर्थ समझकर शुद्ध भाषा लिखने का अभ्यास होता था, फिर चाहे वह मौलिक लेखन हो या अनुवाद। तत्कालीन शिक्षा पद्धति के अन्तर्गत भाषा शिक्षण में सबसे पहले व्याकरण के नियम विस्तार से समझाये जाते थे और उदाहरणों के द्वारा नियमों का व्यावहारिक अभ्यास कराया जाता था। गुरू शिक्षार्थी को उसकी मातृभाषा और चिंतन की भाषा के बीच अनुवाद और बार-बार अभ्यास करवाकर नियमों को उसके मस्तिष्क में अच्छी तरह बैठाने का प्रयत्न करता था। इस प्रकार आरम्भ में वैदिक संस्कृत में और बाद में लौकिक संस्कृत से अन्य प्राकृतों में अभ्यास का यह क्रम चलता रहता था। शिक्षार्थी इस प्रकार शुद्ध भाषा का प्रयोग और तुलनात्मक अध्ययन करना सीखता था और इस प्रकार उसकी अभिव्यक्ति क्षमता का विकास होता था। मौलिक लेखन हो या अनुवाद, व्याकरण सम्मत शुद्ध भाषा में लिखना दोनों के लिये समान रूप से आवश्यक था। यूरोप में तो अभी तक इसी पद्धति से भाषाएं सिखाई जा रही हैं और व्याकरण का सम्यक ज्ञान, साहित्य, वार्तालाप आदि सर्वाधिक महत्वपूर्ण समझा जाता है। भारत में भी संस्कृत, पालि, फारसी और अंग्रेजी आदि देशी-विदेशी सभी भाषाएं व्याकरण के साथ-साथ अनुवाद करके ही सिखाई जाती थीं। शिक्षा पद्धति में व्याकरण के बाद
दूसरे चरण में प्राचीन गौरव ग्रन्थों का अध्यापन आता था। सरल भाषा में रची हुई टीकाओं एवं भाषाओं के माध्यम से शिक्षार्थी को अर्थ समझा कर गुरू गौरव ग्रन्थों को कण्ठस्थ कराता था। वेदों, उपनिषदों, पुराणों, नाटकों, काव्यों आदि का अध्ययन टीकानुवादों की सहायता से ही कराया जाता था। केवल ललित साहित्य के क्षेत्र में ही नहीं बल्कि इतिहास, दर्शन, सभ्यता-संस्कृति, भूगोल, चिकित्सा, हस्तरेखा ज्ञान, नक्षत्रविद्या आदि विविध ज्ञान क्षेत्रों की प्राचीन सामग्री को आज के अध्येता तक पहुंचाने में भी अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

मध्यकालीन तथा रीतिकालीन हिन्दी साहित्य के अध्ययन की दृष्टि से भी अनुवाद का महत्व नकारा नहीं जा सकता। मध्यकाल की अधिकांश रचनाएं ब्रज और अवधी जैसी लोक भाषाओं में हुई थीं परन्तु इनका अधिकांश भाग संस्कृत ग्रन्थों के चुने हुए अंशों के अनुवाद हैं। फिर भी आज के हिन्दी विद्यार्थी को उस काल की कविता तथा सामाजिक स्थिति को समझने के लिए शब्दार्थ के स्तर पर खड़ी बोली के पर्यायों की तलाश हेतु तत्कालीन संदर्भ के प्रसंग में अनुवाद से ही काम लेना पड़ता है। भाषा का रूप बदल जाने के कारण एक ही भाषा के अन्दर भी अनुवाद आवश्यक हो जाता है।

इसके अतिरिक्त मुगलकालीन समाज, संस्कृति, राजनीति, अर्थव्यवस्था, धर्म, दर्शन आदि की प्रामाणिक जानकारी के लिये भी बाबरनामा, आइने अकबरी, तुजुके जहांगीरी तथा दरबारी कवियों की रचनाओं के अंग्रेजी अथवा हिन्दी अनुवादों की ही सहायता लेनी पड़ती है। किसी भी काल के इतिहास, समाज और ज्ञान-विज्ञान की स्थिति को समझने के लिए वस्तुतः अनुवाद ही एक मात्र व्यवहारिक तरीका है क्योंकि सभी भाषाओं को सीखकर मूल भाषा में उनका साहित्य पढ़ना किसी भी व्यक्ति के लिये सम्भव नहीं है। मानव अपनी स्वाभाविक जिज्ञासा तथा ज्ञान-पिपासा के कारण ज्ञान के मार्ग में भाषायी व्यवधानों को नहीं मानता और अनुवाद को सीढ़ी बना-बनाकर वह ऊपर-नीचे चढ़ता उतरता रहता है।

प्राचीन ज्ञान-विज्ञान के अतिरिक्त आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की अद्यतन जानकारी के लिये भी अनुवाद की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। आज वैज्ञानिक और तकनीकी विकास बड़ी तेजी से हो रहा है। इलेक्ट्रानिक उपकरणों के माध्यमों से हम मानों परियों की गति से भ्रमण कर रहे हैं। ऐसी स्थिति में

नये-नये अनुसंधानों का उपयोग करने के लिये तत्काल अनुवादों की आवश्यकता पड़ने लगी है। समय बचाने की दृष्टि से उन्नत देशों में मशीनी अनुवाद के प्रयोग भी खूब हो रहे हैं, परन्तु हमारी भाषाओं की स्थिति अभी तक वैसी नहीं बन सकी है जिसकी संकल्पना स्वाधीनता संग्राम के दौरान हमारे नेताओं तथा चिन्तकों ने की थी।

स्वतंत्र भारत की शिक्षा पद्धति में अनुवाद एक बहुत बड़ी भूमिका अदा कर सकते थे। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में भारतीय भाषाओं की स्थिति तथा क्षमता को बढ़ा सकने में रचनात्मक योगदान दे सकते थे, परन्तु औपनिवेशिक विरासत की छत्रछाया में पलते रहने के कारण हमारी शिक्षा पद्धति भारतीय जनता की मानसिक और नैतिक उन्नति में अपेक्षित भूमिका नहीं निभा पा रही है। इसका कारण यह है कि उच्च शिक्षा में भारतीय भाषाओं का प्रावधान हो जाने पर भी केन्द्रीय स्थिति अंग्रेजी की ही है। महाविद्यालय और विश्वविद्यालय स्तर पर भारतीय भाषाओं में शिक्षा देने के लिये पाठ्य पुस्तकें तथा सहायक और संदर्भ साहित्य के अच्छे अनुवादों की महती आवश्यकता थी। आवश्यक था कि हर विषय पर अच्छी और उपयोगी पुस्तकें चुनकर उनका निर्दोष अनुवाद उपलब्ध कराया जाता जिससे विद्यार्थी अपनी-अपनी भाषाओं में उस ज्ञान को आसानी से ग्रहण कर पाते। इससे उनकी स्वतंत्र चिंतन तथा अभिव्यक्ति-क्षमता भी बढ़ती। परन्तु ऐसा नहीं हुआ। भारत सरकार ने अनुवाद संबंधी जो नीति अपनायी या विश्वविद्यालयों तथा अन्य संस्थानों ने जिस प्रकार के अनुवाद प्रशिक्षण पाठ्यक्रम चलाने शुरू किये उससे अनुवाद की भूमिका अनिवार्य आवश्यकता की न होकर एक समझौते और बेबसी की सी हो गई। अनुवाद कार्य ज्ञान के स्रोत के स्थान पर "धन्धा" बन गया। शब्द गिर कर पारिश्रमिक तय करना और योग्यता के स्थान पर परिचय तथा पहुंच को आधार बनाकर अनुवादक का चयन करना, ये ऐसे कठोर सत्य हैं जिनके कारण अनुवादों की भूमिका सकारात्मक न होकर नकारात्मक हो गई है। हमारे अन्दर अभी तक अंग्रेजी के प्रति जिस प्रकार का मोह और उच्चता का भाव बना हुआ है, उसके कारण वैज्ञानिक, तकनीकी, विधिक तथा मानविकी क्षेत्रों में स्तरीय लेखन और अनुवाद दोनों की ओर प्रवृत होने वालों की संख्या बहुत कम है। अपने कार्य को अखिल भारतीय रूप देने और जल्दी से जल्दी विदेशों में लोकप्रिय होने की अदम्य लालसा के कारण अधिकांश विद्वान अंग्रेजी में लिखना अधिक पसन्द करते हैं। वे यदि हिन्दी या भारतीय भाषाओं में लिखते हैं तो केवल व्यावसायिक उद्देश्य से। वे अंग्रेजी में सोचते हैं और उसी के माध्यम से अपनी पहचान बनाने में गौरव का अनुभव करते हैं। शैक्षिक सामग्री तथा पाठ्य पुस्तकें हिन्दी में तैयार न करके ऐसे लोगों ने एक ओर तो भाषा के सहज विकास को अवरूद्ध कर दिया है और दूसरी ओर अनुवाद को एक महत्वपूर्ण और सम्मानजनक कार्य के स्थान पर दूसरे दर्जे का घटिया काम बना दिया है। परिणाम यह हो रहा है कि अनुवाद के क्षेत्र में उच्चकोटि के विद्वान प्रवेश करना नहीं चाहते। इसमें दो मत नहीं कि जो लोग विषय के विशेषज्ञ और दो भाषाओं के अच्छे ज्ञाता हैं, वे यदि आगे आकर मूल रूप से या तो हिन्दी में लिखें या अच्छे अनुवाद करें तो उनकी रचना अर्थ एवं अभिव्यक्ति दोनों दृष्टि से अधिक प्रामाणिक और सहज होगी। आज की कृत्रिम, अशुद्ध और दुर्बोध अनुवादी भाषा के कारण पाठक अनुवादों से दूर भागकर न घर का बचा है, न घाट का। स्तरीय और शुद्ध भाषा में किये गये अनुवादों से पाठक की अपनी चिन्तन तथा अभिव्यक्ति क्षमता तो बढ़ेगी ही, वह अंग्रेज़ी माध्यम से पढ़ने वाले विद्यार्थी की तुलना में भी हीन भाव से ग्रस्त होने के स्थान पर गर्वपूर्वक उसके समकक्ष खड़ा हो सकेगा, उच्चस्तरीय सम्मेलनों में भाग ले सकेगा और प्रतियोगी परीक्षाओं में बे-हिचक बैठ सकेगा।

वस्तुतः आज आवश्यकता इस बात की है कि अनुवाद कार्य के प्रति हम अपने दृष्टिकोण को बदल दें, यदि हम अनुवादों का स्तर और मर्यादा बनाये रखना चाहते हैं तो अनुवादक को मौखिक लेखक के समकक्ष रख उसे उसी कोटि का मानकर वैसा ही मान तथा मानदेय देना होगा ताकि विषय के विशेषज्ञ और अच्छे लेखक इस क्षेत्र में आगे आयें और अपने अनुभव तथा ज्ञान से विषय को सहज एवं संप्रेषणीय बनायें। भाषा के साथ लेखक के चिंतन का घनिष्ठ सम्बन्ध होता है — गिरा अर्थ जल विचि सम कहियत भिन्न न भिन्न। भाषा तथा भाव वैसे ही सम्पृक्त रहते हैं जैसे सागर में जल और जलधार। शब्द यदि अभिप्रेत अर्थ का वाहक नहीं होगा तो वह बंजर भूमि के सदृश निष्फल प्रयास मात्र होकर रह जायेगा। अनुवाद करते समय भी हमें शब्द और अर्थ के इस गठबंधन पर विशेष ध्यान देना होगा।

हिन्दी के विरोध का कोई भी आंदोलन राष्ट्र की प्रगति में बाधक है ।
- सुभाष चन्द्र बोस

भारतीय भाषाई सांस्कृतिक एकता और हिंदी

-डा॰ जी॰पी॰ श्रीवास्तव

किसी समाज के निजी शक्ति की परख उसकी भाषाई क्षमता और संस्कृति से होती है। मनुष्य समाज के क्रियाकलापों के समुच्चय को आत्मसात कर अपनी चिंतनाशक्ति से जीवन के जिन रचनापरक उदात्त विचारों को समाज के लिए मानक रूप में प्रस्तुत करता है वे ही धीरे-धीरे संकलित होकर उसकी संस्कृति का सृजन करते हैं। इस प्रकार संस्कृति लोगों के अर्जित आचार-विचारों की एक व्यवस्था होती है। इन्हीं आचार-विचारों को सुरक्षित रखने तथा प्रकट करने का काम भाषा करती है। इस प्रकार भाषा, समाज और संस्कृति का अटूट संबंध होता है। किसी एक के बिना अन्य दोनों की सत्ता नहीं रह पाती। इस प्रकार समाज के सदस्य के रूप में मनुष्य ने जो भी योग्यताएं अर्जित की हैं वे उसकी संस्कृति के अंग है।[1] दूसरे शब्दों में संस्कृति विचारों, आचरणों और जीवन के मूल्यों का सामूहिक नाम है।[2] भाषाई संस्कृति किसी समाज के आचार-व्यवहार, आस्थाओं और परंपरा का प्रतिबिंब होती है। इसलिए किसी क्षेत्र की भाषा में जब कुछ विशेष प्रकार की ध्वनियों अथवा शब्दों की बहुलता मिलती है तो उस समाज के सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश का अनुमान सहज ही किया जा सकता है। किसी मरूस्थल के पास की भाषाओं में उस से संबंधित वस्तुओं के शब्द अधिक मिलते है। जंगल, पहाड़, समुद्र के निकटवर्ती समाज की बोलियों में तत्संबंधी वस्तुओं के शब्द अपेक्षाकृत अधिक मिलते है। इस प्रकार भाषा किसी सामाजिक संस्कृति की वास्तविक संवाहिका होती है।[3] जिस प्रकार किसी संस्कृति के बाह्य और आंतरिक दो पक्ष होते है उसी प्रकार भाषा के भी मानसिक और ध्वन्यात्मक (बाह्य) दो पक्ष होते है।

भारत हमेशा से बहुभाषीय तथा बहुजातीय देश रहा है। यहां विभिन्न भाषाओं और जातीय समूहों में परस्पर संपर्क भी रहा है। किसी देश में यदि निरंतर बहुभाषाओं का प्रचलन रहे तो इनके परस्पर संपर्क से कुछ भाषाई लक्षणों में साम्य स्थापित होने लगता है। ये भाषाएं परस्पर कितनी ही असंबद्ध क्यों न हों, उनमें भाषाई समन्वय की समाजभाषिक प्रक्रिया कालांतर में अवश्य कार्य करती है। भारत में प्राचीन काल से ही यही स्थिति निर्मित हुई है और इसी से यहां के विभिन्न समुदायों और संस्कृतियों के मूल में मिलने वाली एकात्मकता के कारण भाषाविदों ने इसे "एक भाषिक-क्षेत्र" (a linguistic area) माना है[5]। आज भारतीय भाषाओं में ऐसे अनेक लक्षण मिलते है जो उन्हे भारतेतर भाषाओं से, जिनसे उन के पारिवारिक संबंध माने गए है, पृथक करते हैं। बल्कि यों कहें कि भारतीय भाषाओं में कहीं-कहीं भाषिक साम्य इतना अधिक है कि यहां बोली जाने वाली आर्यभाषाएं, अपेक्षाकृत उनसे अधिक निकटवर्ती भारोपीय भाषाओं से बहुत दूर हो गई है। आज भारतीय आर्य-भाषाओं की ध्वनि, शब्द, वाक्य तथा अर्थ अभिव्यक्ति-विधान आदि की दृष्टि से निकटता यहां की द्रविड़ और मुंडा भाषाओं से अधिक हो चुकी है। उदाहरणस्वरूप सभी भारतीय भाषाओं में क्रिया वाक्य के अंत में आती है। इस के अतिरिक्त उन में संयुक्त क्रियाओं का बहुलता से प्रयोग होता है।

भारत में प्राचीनतम भाषिक अभिलेख के रूप में वैदिक संस्कृत में वैदिक वाङ्मय मिलता है। किंतु विद्वानों की यह धारणा है कि इस देश में आर्यों से पहले कोल-मुंडा, द्रविड़ और किरात भाषापरिवार की जातियां बसी थीं। स्वाभाविक है कि पूर्ववर्ती आर्यकाल में यहां इन्हीं भाषापरिवारों की बोलियां प्रचलित रही होंगी। कालांतर में आर्यों के भारत में प्रधान रूप से स्थापित हो जाने पर सामूहिक रूप से समन्वित संस्कृति का जन्म हुआ जो धीरे-धीरे अखिल भारतीय संस्कृति के रूप में उभरने लगी।

कुछ ऐतिहासिक और पुरातात्विक अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि आर्य, द्रविड़, कोल और किरात भाषाओं के बोलने वाले लगभग 2000 वर्षों ईसा पूर्व से परस्पर संपर्क में आए, जिस के फलस्वरूप एक समन्वित भारतीय संस्कृति बनी। उस संस्कृति में सभी के सामूहिक गुण मोजूद थे। यही स्थिति भाषा में भी उभर कर आई। शब्दों के आदान-प्रदान के अतिरिक्त ध्वनि, व्याकरण संबंधी रचनाओं का भी आदान-प्रदान उन में हुआ और उनमें एकात्मकता के कुछ लक्षण उभर कर सामने आए। विभिन्न संस्कृतियों और भाषाओं के बीच निरंतर संपर्क के कारण संस्कृति तथा भाषा में समन्वय होता है जो सभी का मिला-जुला रूप रहता है। ऐसी स्थितियों में भोगौलिक रूप से सर्वव्याप्त लक्षण उभरते है। इस देश में वैदिक काल से लेकर आज तक यहां की संस्कृति तथा भाषाओं में सर्वव्याप्त लक्षण परस्पर स्वीकृति के परिणाम हैं।

विद्वानों में यह धारणा है कि आर्यों के पूर्व भारत में अनेक अन्य भाषा-भाषी निवास करते थे। किंतु आर्यों की श्रेष्ठ संगठन-शक्ति, उदार तथा व्यापक दृष्टिकोण और उनकी सशक्त भाषा ने उन्हें यहां एक केन्द्रीय शक्ति के रूप में उभरने में मदद की। परिणामतः भारतीय मानस और संस्कृति के समासिक एवं एकात्मक रूप में विकसित होने में उनकी समर्थ भाषा का अद्वितीय योगदान रहा। यहां भेद करने वाली यह धारणा कि आर्यों ने यहां के पूर्ववर्ती कोल-मुंडा, द्रविड़ जनों को उत्तर क्षेत्र से बहिष्कृत कर दक्षिण भारत की ओर धकेल दिया, शरारतपूर्ण लगती है। यदि यह सत्य होता तो भारत में एक समन्वित संस्कृति का विकास न हो पाता। युद्ध और लड़ाइयां तो परस्पर स्वजातीय और विजातीय दोनों में सदैव संभव होते हैं। किंतु आर्यों की उदात्त मेधा और सामाजिक सृजनात्मक शक्ति ने उन्हें स्वत्व से ऊपर उठ कर एक व्यापक एवं सर्व समर्थित संस्कृति को निर्मित करने में उनकी भाषा का योगदान निश्चित ही अद्वितीय रहा। यही कारण है कि प्राचीन भारत में वह अखिल भारतीय संस्कृति, साहित्य, दर्शन, धर्म तथा शिक्षा आदि का माध्यम ही नहीं बनी वरन वह समग्र भारतीयता की प्रतीक बन गई।[6] यही मिश्रित संस्कृति यहां के सभी भाषा-भाषियों और समुदायों के लिए स्वीकार्य हुई। वस्तुतः वैदिक काल में ही सभी समुदायों ने, विशेषतया आर्यों ने मिल कर जिस प्रकार की सामाजिक व्यवस्था विकसित की थी, उसने भारत की सामाजिक और भाषिक संरचना में दूरगामी परिवर्तन प्रकट किए। संस्कृत भाषा का समस्त

धार्मिक अनुष्ठानों, साहित्यिक सृजन तथा शिक्षा का माध्यम होने के कारण वह प्रायः सर्वक्षेत्रीय भाषा के रूप में समादृत हुई। लेकिन क्षेत्रीय भाषाएं अपने-अपने क्षेत्रों में दैनिक निर्वाह का माध्यम बनी रहीं। परिणामतः भाषाई विद्वेष के स्थान पर परस्पर सहिष्णुता का विकास हुआ। इसी क्रम में पाणिनि ने संस्कृत भाषा को सुसंगठित तथा मर्यादित रूप में प्रस्तुत कर उसे सब का शिरोधार्य बना दिया। संस्कृत भाषा का इतना अद्वितीय रचना-विधान पाणिनि के बाद आज तक किसी अन्य भाषा का नहीं प्रस्तुत हो पाया है। इस प्रकार संस्कृत भाषा का मानक और व्यवस्थित रूप निर्धारित हो जाने पर वह अन्य भाषाओं को अनुप्राणित करने लगी तथा जहां की अनेकानेक आर्य और अनार्य भाषाओं और बोलियों के विभिन्न भाषिक तत्वों को आत्मसात करते हुए पूरे देश में व्याप्त हो गई।

भारत में संस्कृत भाषा की सर्वस्वीकृति ने यहां भाषाई सांस्कृतिक एकता के पुष्ट बीज बोए और वह सभी क्षेत्रों में प्रतिष्ठित हुई। भारत की सांस्कृतिक विरासत इतनी मजबूत थी कि परिवर्ती काल में यहां हुए अनेक बाहरी सांस्कृतिक आक्रमण उसकी जड़ों को हिला तो सके किंतु उखाड़ नहीं पाए। हिंदी साहित्य के मध्यकाल में हमारी इसी सांस्कृतिक एकता ने भारतीय संस्कृति को सुरक्षित रखने में देश के सभी क्षेत्रों के भक्त रचनाकारों को नए धार्मिक संबल दिए। भारत में इसी सांस्कृतिक एकता का निर्वाह आज हिंदी भाषा कर रही है। कुछ शताब्दियों पूर्व यही कार्य अवधी और ब्रजभाषा कर रही थीं। आज हिंदी भाषा को किसी क्षेत्र-विशेष तक सीमित नहीं मानना चाहिए। संविधान, मीडिया तथा व्यवहार में उस का स्वरूप अखिल भारतीय हो गया है। परिणामतः हिन्दी की अनेक क्षेत्रीय शैलियां इसमें मिलने लगी हैं।

इस देश की सांस्कृतिक एकता की प्रकृति ने भाषाओं के समन्वित स्वरूप को स्वीकारा है। विद्वानों का मत है कि प्राचीन काल में भी संस्कृत भाषा में प्रयुक्त मूर्धन्य ध्वनियां द्रविड़ भाषाओं के प्रभाव से विकसित हुई। इसी प्रकार परिवर्ती भाषाओं में ड़, ढ़ उत्क्षिप्त ध्वनियां भी द्रविड़ भाषाओं के संसर्ग से विकसित हुईं। आज ये दोनों ध्वनियां भारत की सभी भाषाओं, असमिया को छोड़ कर, प्रायः सभी में मिलती हैं। भारत में मुसलमानों की सत्ता स्थापित होने के बाद उनकी दो शासकीय भाषाओं-पहले अरबी फिर फारसी के प्रभाव को यहां की भाषाओं ने आत्मसात किया और आज मानक हिंदी ने उन की क़, ख़, ग़, ज़, फ़ ध्वनियों को स्वीकार कर लिया है। बाद में अंग्रेजी का आ स्वर भी उस में स्वीकृत हुआ।

भारतीय भाषाई एकता के प्रमाण यहां भाषाओं में उनकी संरचना के कतिपय मुख्य बिंदुओं में मिलता है। यहां की भाषाओं में वाक्यों के अंत में क्रिया के प्रयोग के अतिरिक्त उनमें संयुक्त क्रियाओं[7] के प्रयोग बहुतायत से मिलते हैं। उदाहरणतया—"उठता चला गया, बांट दिया जाता है, उठा ले जा सकते हो", इत्यादि। कुछ विद्वानों ने इसे भी द्रविड़ भाषाओं का प्रभाव माना है।[8] एक अन्य भाषाई समरूपता उनमें मध्यम पुरुष एकवचन में एक से अधिक वैकल्पिक रूपों का मिलना है, जैसे—हिंदी में तू, तुम, आप, तमिल में नी, निंगल, आदि। भारतीय भाषाओं में एक और रोचक समानता शब्दों के प्रतिध्वन्यात्मक प्रयोगों की है, जैसे-रोटी-वोटी, अड़ा-बड़ा, उल्टा-सुल्टा, जाना—वाना, आदि। ऐसे प्रयोगों से शब्दों में अर्थ-विस्तार होता है।

यहां एक तथ्य स्मरण रखना उचित होगा कि समाज में सामाजिक अथवा सांस्कृतिक परिवर्तन होने से वहां की भाषा में भी बदलाव आते हैं, किंतु भाषाई परिवर्तन के द्वारा सामाजिक परिवर्तन नहीं होते। लेकिन किसी समाज पर यदि कोई विकसित भाषा थोपी जाती है तो उस समाज में भाषाई दृष्टि से एक ऊंच-नीच की श्रेणी बन जाती है। यह स्थिति लोगों के भाषाई प्रयोग की क्षमता के कारण बनती है। इस प्रकार किसी क्षेत्र में सामाजिक-सांस्कृतिक स्वीकृति-अस्वीकृति का प्रभाव भाषा पर अवश्य पड़ता है। ऐसे बदलाव सामाजिक रूचियों में परिवर्तन के फलस्वरुप होते हैं। आज "विभीषण, जयचंद, मीरज़ाफर" आदि शब्द अपने ऐतिहासिक संदर्भों के कारण विशेष अर्थों में ज्यादा प्रयुक्त होते हैं। इसी प्रकार "असहयोग, सत्याग्रह, हरिजन" आदि शब्द भारतीय राष्ट्रयी आंदोलन के समय जिन विशिष्ठ अर्थों में प्रयुक्त हुए थे, वे आज भी भारतीय भाषाओं में उन्हीं रूपों में प्रयुक्त हो रहे हैं।

किसी समाज की सभ्यता और संस्कृति को गहराई से समझने के लिए उसकी भाषा के व्यवहार में आने वाली कहावतों और मुहावरों का समझना आवश्यक होता है। मुहावरे और कहावतें उस समाज के लोगों की कई पीढ़ियों के अनुभव संजोए रहती हैं जिन्हें विशेष अर्थों के लिए प्रयोग किया जाता है। भारतीय सांस्कृतिक एकता का एक और प्रमाण यहां की विभिन्न भाषाओं में समान रूपों में प्रचलित अनेक मुहावरों और कहावतों[9] से मिलता है। इससे हम पूरे देश के व्यवहार और चिंतन को समझ सकते हैं। कतिपय उक्तियां उदाहरणार्थ द्रष्टव्य हैं—

(क)	हिंदी	—अंधों में काना राजा
	पंजाबी	—अन्नियां विच काणा राजा
	सिंधी	—अंधनि में काणों राजा
	गुजराती	—आंधलामां काणो राजियो
	बंगला	—अन्धेर देशे काना राजा
	तमिल	—पोट्टेकण्णन् राज्यत्तिले औत्तैकण्णन् राजा
	कन्नड़	—कुरुंडरोलगे मेल्लने श्रेष्ठ
	मलयालम	—कुरुटन् नाट्टिल् कोंकण्णन् राजावुं

एक अन्य उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

(ख)	हिंदी	—अधजल गगरी छलकत जाय
	मराठी	—अर्दकुडा कलसो हायसुलता
	बंगला	—अधभरा कलशीर ढक्ढकानि बेशी
	गुजराती	—अधूरो घड़ो छलकाय घणो
	तमिल	—अरै कुडम् तलंबुम्, इत्यादि।

इस प्रकार के सैकड़ों मुहावरे और कहावतें यहां की प्रायः सभी भाषाओं में प्रचलित हैं जो भारतीय भाषाई-सांस्कृतिक एकता के प्रत्यक्ष साक्ष्य हैं।

हिन्दी के सामर्थ्य और सार्थकता का यह सचेत प्रमाण है कि वह अपनी क्षेत्रीय और उपक्षेत्रीय सीमाओं में सिमिटी नहीं रही। समूचे भारत में संस्कृत की गौरवशाली परंपरा के समान ही आज हिंदी संपूर्ण भारतीय चेतना को उद्भासित करने में समर्थ है जिसकी श्रीवृद्धि में भारत के सभी क्षेत्रों का योगदान रहा है। बहुत पहले से ही देश के सभी क्षेत्रों के लोगों में हिंदी के प्रति अनुराग के व्यापक प्रमाण मिलते है। पंजाब के बाबा फरीद के "सलोक", महाराष्ट्र के नामदेव के अभङ्ग, सूफ़ी संतों के

शेष पृष्ठ 22 पर

आधुनिक हिन्दी में शब्द-प्रयोग की प्रवृत्तियां

—श्रीमती ल्यू ह्वी

भारत एक बहुभाषा-भाषी देश है। इसकी 18 मुख्य भाषाएं हैं। हिन्दी भाषा उनमें से एक है। हिन्दी भाषा का इतिहास काफ़ी पुराना है। कहा जाता है कि हिन्दी का इतिहास कम से कम एक हज़ार वर्ष पुराना है। आधुनिक हिन्दी खड़ी बोली के आधार पर विकसित हुई है। दसवीं सदी से दिल्ली के आसपास के क्षेत्रों में यह भाषा काफ़ी प्रचलित होने लगी थी। धीरे-धीरे वह उत्तर भारत के अनेक प्रदेशों में लोकप्रिय बन गयी। स्वतंत्र होने के बाद, हिन्दी भारत की राष्ट्र भाषा घोषित की गयी है।

हिन्दी सीखने के लिए सौभाग्य से 1994 के सितंबर में मुझे दोबारा भारत में आने का मौका मिला। यहां आकर हिन्दी के शब्द-प्रयोग में आयी प्रवृत्तियों की खोज में मेरी बड़ी रुचि पैदा हुई। शोध के दौरान मैंने देखा है कि हिन्दी शब्द भंडार में अधिकाधिक उर्दू और अंग्रेजी शब्द उमड़ आये हैं और वे हिन्दी का एक अभिन्न भाग बन गये हैं।

उर्दू भाषा हिन्दी से मिलती-जुलती एक भाषा है। बोलने में दोनों भाषाएं इतनी मिलती-जुलती हैं कि ऐसा लगता है कि उन के मुकाबले दुनिया में कोई दूसरी भाषा नहीं मिल सकती। लेकिन दोनों भाषाओं की लिपि अलग अलग है। हिन्दी भाषा की लिपि देवनागरी है जबकि उर्दू भाषा की लिपि अरबी-फारसी है। यहां आने के बाद मैंने लोगों की बातचीत में अक्सर यह वाक्य सुना है कि "मेरे पास वक्त नहीं है।" इस वाक्य में "वक्त" शब्द बिल्कुल ही उर्दू शब्द है, न कि हिन्दी का। मैंने शोध के आधार पर एक सूची बनायी है। इस सूची पर एक नज़र डाल कर आप को खुद ही पता चलेगा कि हिन्दी में हिन्दी शब्दों की जगह कौन-कौन से उर्दू शब्दों ने ले ली है।

उर्दू शब्द	हिन्दी शब्द	उर्दू शब्द	हिन्दी शब्द
वक्त	समय	अंदाज	पूर्वानुमान
मेहनत	परिश्रम	सलाह	सुझाव
हिम्मत	साहस	बिल्कुल	शत प्रतिशत
मुसीबत	कठिनाई	जरूर	अवश्य
शौक	रुचि	सहारा	माध्यम
स्पष्ट	साफ	दिक्कत	कठिनाई
शुक्रिया	धन्यवाद	सवाल	प्रश्न, समस्या
खुश	प्रसन्न	शाबाश	अच्छा
मुलाकात	भेंट	करार	समझौता
तारीफ़	प्रशंसा	कोशिश	प्रयास
माहौल	वातावरण	तकलीफ	कष्ट
मुश्किल	कठिन	दुश्मन	शत्रु
नामुमकिन	असंभव	बीबी	पत्नी
बर्बाद	नष्ट	खत	चिट्ठी

यह सूची काफ़ी लम्बी है। संक्षेप में तो यहां तक है।

आधुनिक हिन्दी के शब्द प्रयोग में आयी एक और प्रवृत्ति है: अधिकाधिक अंग्रेज़ी शब्दों की बाढ़। लोग इन्हें इंग्लिश कहते हैं। जैसे किः

राजनीतिक क्षेत्र में:

कांग्रेस, पार्टी, सीट, मीटिंग, कमेटी, वोट, पुलिस सिनेटर...

व्यापारिक क्षेत्र में:

कम्पनी. टैक्स. एजेंसी, लाईसेंस, फंड, लिमिटेड, बैंक, शेयर, डालर...

संस्कृति के क्षेत्र में:

स्कूल, प्रिंसिपल, कोर्स, कालेज, फीचर फिल्म, क्लब, डान्स, थियेटर, टेलिविजन, प्रोग्राम, चैनल, रेडियो...

खेलकूद के क्षेत्र में:

फुटबाल, वालिबाल, मैच, फाइन मैच, टीम, ग्रुप, ओलिम्पिक चैम्पियन, कप्तान, चैंपियनशिप...

रहन-सहन के क्षेत्र में:

फर्नीचर, रूम, रेडक्रास, टी-शर्ट, रेस्ट्रान, फ्लैट, डायरी, जैकेट, अस्पताल...

हिन्दी शब्द भंडार, में आये अंग्रेज़ी शब्दों के प्रयोग उच्चारण की दृष्टि से आम तौर पर दो प्रकार के हैं। एक हैः कुछ अंग्रेज़ी शब्द वैसे ही वैसे हिन्दी शब्द बन गये हैं, जैसे कि फुटबाल, कम्पनी, रूम, डालर, आदि। दूसरे वे शब्द हैं जिनका मूल अंग्रेज़ी है, लेकिन उच्चारण में थोड़ा बदलाव आया है। जैसे किः अस्पताल, रिपोर्ट, रेडियो, स्कूल, टाम, कालेज, आदि।

जैसा कि हम जानते हैं कि हिन्दी शब्दों में लिंग भेद है जबकि अंग्रेज़ी में ऐसा लिंग भेद नहीं है। जब अंग्रेज़ी शब्द हिन्दी में आये हैं तो हिन्दी भाषा के इस नियम के अनुसार उनमें लिंग भेद आया है, जैसे कि

'यह मेरा रूम है।'
आप का पेन मेज़ पर है।
यह मेरी सीट है।
वह आपका स्कूल है।

कुछ अंग्रेजी शब्द हिन्दी शब्दों के साथ मिल कर नये शब्द बन गये हैं। जैसे किः

महिला टीम, नवभारत टाइम्स, नयी फिल्म, नया रिकार्ड, मानव बम, पार्टी सदस्य...आदि।

हिन्दी में आये अंग्रेज़ी शब्द जब बहुवचन में हों तो उन्हें हिन्दी नियम का पालन करना पड़ता है, जैसे किः

कमेटियों, कांग्रेसियों, पुलिसों, फिल्मों में, बैंकों की संख्या... आदि।

शोध के आधार पर मेरा अनुमान है कि आधुनिक हिन्दी शब्द भंडार में कम-से-कम 20 प्रतिशत शब्द उर्दू और अंग्रेज़ी से सम्बद्ध हैं। इसके पीछे दो कारण हैं: एक है इतिहास का और दूसरा है आधुनिक परिस्थितियां।

यह सर्वविदित है कि 13वीं सदी से मुसलमानों ने भारत में आने के बाद अपने साम्राज्य यानी मुग़ल राज्य की स्थापना की थी। मुग़ल शासकों का शासन करीब पांच सौ वर्षों तक लगातार चलता था। उर्दू भाषा मुग़ल शासन काल में विकसित हुई। 18 वीं सदी से ब्रिटिशियों ने ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी के नाम से भारत के साथ व्यापार शुरू किया और बाद में धीरे-धीरे पूरे भारत पर कब्जा कर लिया था। अंग्रेज़ी भाषा ब्रिटेन की राष्ट्र भाषा है।

भारत में ब्रिटिशियों का कुशासन 15 अगस्त 1947 को भारत की स्वतंत्रता से समाप्त हुआ। लेकिन पिछले डेढ़ सौ वर्षों के शासन काल में अंग्रेज़ी भाषा का हिन्दी पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा था।

आधुनिक हिन्दी में अंग्रेजी शब्दों के प्रचलन का दूसरा कारण आधुनिक समाज से संबद्ध है। स्वतंत्र होने के बाद, भारत का काफी विकास हुआ है, विशेष कर इधर कुछ वर्षों में नयी आर्थिक नीति लागू होने से 68 हजार करोड़ रुपए की विदेशी पूंजी का निवेश हो चुका है। बड़ी संख्या में विदेशी पूंजी भारत में आने के साथ-साथ ढेर सारे अंग्रेज़ी शब्द भी हिन्दी शब्द भंडार में आने लगे हैं, जैसे कि टी.वी.सेट, टेप रिकार्ड, चैनल, कम्प्यूटर, फेक्स...। हिन्दी शब्द भंडार में उमड़ आये अंग्रेज़ी शब्दों ने हिन्दी शब्दों का रूप धारण कर लिया है।

स्वतंत्रता के बाद भारत का जो विकास हुआ है, उसका एक सबूत है कि भारत की शिक्षा में बड़ी तरक्की हुई है। कालेजों में ही नहीं, स्कूलों में भी अंग्रेजी का कोर्स है। पढ़े लिखे लोग यों ही बड़ी संख्या में अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग करते हैं, जैसे कि 'समय' की जगह यों ही 'टाइम' और 'बैठक' व 'सभा' की जगह 'मीटिंग' शब्दों का प्रयोग किया जाता है। फलस्वरूप हिन्दी शब्द भंडार में बड़ी संख्या में अंग्रेज़ी शब्द उमड़ आये हैं।

मेरा अनुमान है कि आधुनिक हिन्दी में शब्द प्रयोग की यह प्रवृत्ति आगे चल कर बढ़ती रहेगी और तेज रूप धारण करती रहेगी। मेरा पूर्वानुमान है कि 21वीं सदी के अंत तक हिन्दी शब्द भंडार में उर्दू और अंग्रेज़ी शब्द आज के 20 प्रतिशत से बढ़ कर 25-30 प्रतिशत से अधिक होंगे।

दुनिया में संभवतः हिन्दी जैसी कोई दूसरी भाषा नहीं मिलती, जो इतनी बड़ी संख्या में उर्दू और अंग्रेज़ी शब्दों को अपने भीतर स्वीकृत करती है। जो भी हो, हिन्दी ही हिन्दी है। हिन्दी भाषा समाज के विकास के साथ-साथ आगे विकसित होती जा रही है। मेरा अनुभव है कि हिन्दी के ग्रहण के बिना, भारत की असली स्थिति और भारतीयों की असली भावना का पता लगाना नामुमकिन है।

भारत के दौरे के दौरान मैंने देखा है कि समाज में लोगों के बीच 'बाबा', 'दीदी', 'भाई' और 'बेटा' आदि शब्दों का हद से ज्यादा प्रयोग होने लगा है। गोदावरी हास्टल में जिस में मैं पढ़ाई के दौरान रही, लड़कियां सफाई वाली को 'दीदी' बोलती हैं। सरकारी दफ्तरों में 'मैडम' की जगह लोग प्यार से 'दीदी' बोलते हैं। 'बाबा' शब्द का दंपतियों और दोस्तों के बीच आपस में संबोधन करते हुए इस्तेमाल किया जाता है। कभी-कभी लोग अपने बेटे को भी ऐसा संबोधन करते हैं। उसका अर्थ 'बाबा' शब्द के असली अर्थ से अलग है।

मैंने देखा है कि भारत में हिन्दी 'जी' शब्द का ज्यादा प्रयोग होने लगा है। लोगों में अंग्रेज़ी में बोलते हुए आदमी के नाम के पीछे हिन्दी 'जी' शब्द लगाने का नया फैशन शुरू हुआ है। 'जी' शब्द में सम्मान और आदर की भावना है। आदमी के नाम के पीछे 'जी' शब्द लगने से सभ्य समाज में भाईचारेपूर्ण वातावरण व्याप्त होने का पता चलता है।

मेरी शुभकामनाएं हैं कि भारत में भाईचारापूर्ण वातावरण सदा व्याप्त रहे। शब्दों के सही प्रयोग से समाज की सभ्यता की एक झलक मिल सकती है।

एक साल के शोध के बाद मैं इतना कहना चाहती हूं कि हिन्दी शब्द भंडार में बड़ी संख्या में अंग्रेज़ी शब्दों के आने के बावजूद भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी के स्थान को मजबूत करने के लिए हर सम्भव कोशिश होनी चाहिए।

शब्द-संकल्पना को रूपायित करती नव परिकल्पना

—डा० पूरनचन्द टण्डन

अनेक भाषाओं के प्रकाण्ड विद्वान, अनुवादविद्, कोश-विज्ञान के मर्मज्ञ ज्ञाता, स्थापित तथा लब्ध प्रतिष्ठ भाषा-वैज्ञानिक ड० कैलाशचन्द्र भाटिया द्वारा संकलित निर्मित एवं सम्पादित कोश "अंग्रेजी-हिन्दी शब्दों का ठीक प्रयोग" द्विभाषी शब्दकोशों की श्रृंखला में एक नितान्त महत्वपूर्ण कड़ी है। इस कोश को न केवल अंग्रेजी से हिन्दी तथा हिन्दी से अंग्रेजी अनुवाद करने या सीखने की दृष्टि से तैयार किया गया है, अपितु अंग्रेजी के शब्दों का ठीक एवं सटीक प्रयोग और चयन कैसे किया जाये, इसे दृष्टि में रखकर भी यह संकल्प लिया गया है। प्रत्येक भाषा में ऐसे अनेक शब्द होते हैं जिनको पर्याय समझ लिया जाता है जबकि उन शब्दों की अर्थवत्ता, उनकी छाया तथा विस्तार-प्रसार एकदम भिन्न तथा संदर्भ-सापेक्ष सिद्ध होते हैं।

डा० कैलाशचन्द्र भाटिया अंग्रेजी-भाषा तथा हिन्दी-भाषा के प्रतिष्ठित विद्वान एवं साहित्य के सुदीर्घसेवी हैं। दोनों ही भाषाओं का उन्होंने गम्भीर अध्ययन किया है तथा अधिकार भी बनाया है। अंग्रेजी-हिन्दी शब्दों का ठीक प्रयोग कैसे किया जाए, इस प्रकार के अनुवाद को एक छात्रोपयोगी कोशों की कमी का अनुभव करते हुए उन्होंने प्रस्तुत कोश की योजना बनाई और उसे साकार कर इस दिशा में एक नया कीर्तिमान स्थापित किया।

कोश-विषयक चिंतन की सुदीर्घ परम्परा पर अगर दृष्टि डालें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि 19वीं शताब्दी में हिन्दी से हिन्दी, हिन्दी से अंग्रेजी, अंग्रेजी से हिन्दी तथा अन्य विदेशी भाषा एवं हिन्दी से अन्य भारतीय भाषाओं में कोश-निर्माण तथा उसके स्वरूपगत चिंतन पर निरंतर कार्य चलता रहा है। 19वीं शताब्दी में प्रकाशित अंग्रेजी-हिन्दी शब्दकोशों में फैलन, ग्रियर्सन, मथुराप्रसाद मिश्र आदि के कोश उल्लेखनीय हैं। सन् 1879 में विलियम कुक का ग्राम जीवन और कृषि के शब्द, सन् 1888 में इलियट विल्सन और रीड का आजमगढ़ ग्लासरी, सन् 1885 में ग्रियर्सन का बिहार पेजेंट लाइफ, सन् 1887 में पैदिक कार्नेगी का कचहरी, भूमि-व्यवस्था, दस्तकारी के शब्दों का एवं सन् 1897 में फैलन और 1884 में प्लांट आदि के प्रसिद्ध शब्दकोश निकले। इन सभी शब्दोकोशों में काम-धंधों के शब्दों का बहुत अच्छा संग्रह था। इस दृष्टि से ये पारिभाषिक शब्दों के संकलन में आज भी बहुत सहायक हैं। पारिभाषिक या शास्त्रीय कोशों की रचना भी 19वीं शताब्दीं में आरंभ हो चुकी थी। पं० सुधाकर द्विवेदी ने गणित और ज्योतिष तथा नवीन चन्द राय ने इंजीनियरी विषय पर अनेक कोशनुमा पुस्तकें लिखी। इनके अन्तर्गत पारिभाषिक शब्दावली भी पर्याप्त मात्रा में संकलित थी। काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने भी इस शताब्दी के दूसरे दशक में कृषि, भौतिकी, रसायन आदि विषयों पर छोटे-छोटे शब्दकोश प्रकाशित किये। प्रयाग की विज्ञान परिषद् ने भी वैज्ञानिक शब्दावली की रचनाओं में अपना योगदान दिया। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में सन् 1929 में आयुर्वेद के साथ-साथ आधुनिक-चिकित्सा-विज्ञान का अध्ययन-अध्यापन आरंभ हो चुका था और इसके लिए जिन पाठ्य पुस्तकों की रचना हुई उनमें भी पारिभाषिक शब्द थे।

19वीं शताब्दी में कोश निर्माण की दिशा में व्यक्तिक स्तर पर, सामूहिक अथवा सम्पादक मण्डल स्तर तथा संस्थागत अथवा सरकारी स्तर पर भी अनेक कार्य होते रहे। इसी प्रकार 20वीं शताब्दी में हिन्दी-शब्द-सागर नाम से हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान आलोचक श्याम सुन्दर दास और आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के सम्पादकत्व में प्रथम गंभीर तथा प्रमुख कोश कार्य एवं चिंतन सामने आया। इसी परम्परा को आगे बढ़ाते हुए हिन्दी के प्रमुख कोशकार तथा कोश-विज्ञानी डा० रामचन्द्र वर्मा ने व्यक्तिगत स्तर पर इस दिशा में महान कार्य किया। हिन्दी शब्द-सागर के सम्पादक-मण्डलीय अनुभव ने डा० वर्मा को 'प्रमाणिक हिन्दी कोश', 'उर्दू-हिन्दी कोश' तथा 'मान-हिन्दी कोश' के सम्पादन की प्रेरणा दी। डा० वर्मा अपने कोश विज्ञान सम्बन्धी इस महान कार्य द्वारा स्थापित कोश-विज्ञानी के रूप में जाने गये। डा० हरदेव बाहरी का नाम व्यैक्तिक (हिन्दी अर्थ-विचार), ने 'वृहत अंग्रेजी-हिन्दी कोश', 'प्रसाद साहित्य कोश', 'सूर कोश', 'शिक्षार्थी हिन्दी-अंग्रेजी कोश' आदि कई महत्वपूर्ण कोशों का सम्पादन किया।

अंग्रेजी-हिन्दी कोश की दिशा में फादर कामिल बुल्के का 'अंग्रेजी-हिन्दी कोश' मील का पत्थर साबित हुआ। सीमाएं सभी की होती हैं लेकिन अपनी सीमाओं के बावजूद यह कोश आज भी एक आदर्श कोश माना जाता है। कोश निर्माण की दिशा में डा० भोलानाथ तिवारी ने भी बहुत कार्य किया है। तुलसी शब्द-सागर, हिन्दी मुहावरा कोश, हिन्दी बाल कोश, हिन्दी पर्यायवाची कोश, व्यावहारिक हिन्दी-अंग्रेजी कोश, व्यावहारिक हिन्दी कोश आदि डा० तिवारी की उल्लेखनीय उपलब्धियां हैं। हिन्दी-अंग्रेजी कोश निर्माण वैज्ञानिक पद्धति के डा० महेन्द्र चतुर्वेदी भी समादृत विद्वान हैं। कोश विषयक निर्माण एवं चिंतन में उनका विशिष्ट योगदान रहा है।

इस प्रकार कोश, कोशकारों की, कोशिविज्ञानियों तथा कोश-विषयक शोध कार्यों की आज तक की परम्परा और उपलब्धियों को देखकर हर्ष तथा आत्मतोष होता है कि इस दिशा में अनेक विद्वानों ने अपने जीवन को इस कार्य के प्रति समर्पित करके पूरी गंभीरता से कार्य किया, चाहे वह भारतीय भाषाओं के सन्दर्भ में हो या विदेशी भाषाओं के। आज यह परम्परा इतनी समृद्ध हो गयी है कि कोशों के प्रकार तथा उनके निर्माण की पद्धतियों पर बहुत शोध कार्य हो सकता है। लेकिन मानव की अपेक्षाएं, अध्ययन-मनन तथा अध्यापन की लालसाएं, विश्वज्ञान को अर्जित करने की जिज्ञासाएं उसे नित्य नये प्रकारों और पद्धतियों की खोज के लिए प्रेरित करती रहती हैं। भारतीय एवं विदेशी भाषाओं के शब्दों, अभिव्यक्तियों, मुहावरे-लोकोक्तियों, सूक्तियों, प्रयुक्तियों, व्याकरणिक कोटियों, अनेकार्थता

एवं पर्यायगत स्थितियों, उच्चारण और उसके अन्दर निहित अर्थछवियों को जानने-समझने तथा प्रयुक्त कर अभिव्यक्तिगत संतोष हासिल करने की भूख ने मानव को कोश विज्ञान से जोड़ा है। इस प्रकार कोशों ने 'अज्ञात' से 'ज्ञात' तथा 'अबोध' से 'बोध' बनाने की प्रक्रिया में प्रमुख भूमिका निभाई है। अतः कहा जा सकता है कि परस्पर आदान-प्रदान, सामाजिक-सांस्कृतिकबोध, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय वैविध्य से अभिगत होने के लिए ही शब्दकोश, प्रयोगकोश तथा पारिभाषिक कोश आदि का निर्माण हुआ। इसी परम्परा में पर्यायकोश, उद्धरणकोश, विचारकोश, साहित्य कोश, उच्चारण कोश, संस्कृति कोश, इतिहास कोश, भाषा कोश, काल कोश, तुलनात्मक कोश, विलोम कोश, साहित्यकार कोश अनेकार्थता आदि कितने की प्रकार के कोश देखे जा सकते हैं। विषय के आधार पर भी अनेक प्रकार के कोश उपलब्ध हैं।

कोश निर्माण की इसी सुदीर्घ परम्परा में एक महत्वपूर्ण कोश विज्ञानी डा॰ कैलाशचन्द्र भाटिया का नाम भी श्रद्धा एवं गर्व से लिया जाता है। डा॰ भाटिया के इस नये शब्दकोश का नाम हैं 'अंग्रेजी-हिन्दी शब्दों का ठीक प्रयोग'। इससे पहले डा॰ भाटिया अंग्रेजी-हिन्दी अभिव्यक्ति कोश, अखिल भारतीय प्रशासनिक कोश, हिन्दी की बेसिक शब्दावली जैसे महत्वपूर्ण कोश तैयार कर विद्वत् समाज को सौंप चुके हैं। कोश ग्रन्थों की परम्परा में डा॰ भाटिया का यह नया कोश (हिन्दी अंग्रेजी) न केवल एक बहुत बड़ी कमी पूरी करता है अपितु कोश-विज्ञान की अनुसंधानात्मक सभी दिशाओं को उजागर करते हुए इस दिशा में कार्यरत विद्वानों को नयी ऊर्जा एवं उत्साह भी प्रदान करता है। यों तो भाषा-विज्ञान, प्रयोजनमूलक हिन्दी, अनुवाद, प्रशासन, भाषा शिक्षण, हिन्दी साहित्य, साहित्य-इतिहास, राजभाषा हिन्दी तथा हिन्दी-अंग्रेजी, अंग्रेजी-हिन्दी कोश रचना में डा॰ भाटिया की नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा का अमूल्य योगदान मिलता ही रहा है, किन्तु यह नया प्रयोग इस दिशा में नए प्रतिमान स्थापित कर रोजगार तथा व्यवसाय के लिए भी अनेक रास्ते खोलता है।

यह तो सर्वविदित ही है कि हिन्दी में द्विभाषी कोशों और उसमें भी विशेषकर विदेशी भाषा और हिन्दी को आधार बनाकर तैयार किये गये द्विभाषी कोशों की कमी है। यदि हम विश्व की प्रमुख भाषाओं में निर्मित कोशों पर विचार करें तो तुलना में हम पायेंगे कि हिन्दी में जो कार्य हुआ है वह बहुत ही कम है। हिन्दी-अंग्रेजी में या अंग्रेजी-हिन्दी में जो कोश उपलब्ध हैं, उनमें इस प्रकार का एक भी कोश नहीं है जो अंग्रेजी-हिन्दी के ठीक या सटीक प्रयोग करने की पद्धति का वर्णन और शिक्षण करता हो। लेकिन डा॰ भाटिया का प्रस्तुत शब्दकोश इस कमी को पूरी निष्ठा एवं सिद्धहस्तता से पूरा करता है। वास्तव में हिन्दी-अंग्रेजी पढ़ने वालों के लिए एवं अनुवादकों के लिए यह कोश वरदान भी है तथा संजीवनी का कार्य भी करता है। अंग्रेजी के अनेक शब्दों की अभिव्यक्तियों की विशिष्टता को, उनकी अर्थछवियों को उनके भीतर निहित भावों को हिन्दी भाषा में यथासंभव तद्रूप एवं तद्भाव देकर प्रस्तुत करना एक चुनौती पूर्ण कार्य है। इस कार्य को संभव बनाया है डा॰ भाटिया ने। ऐसे वृहत कार्य ही वास्तव में परियोजना कार्य कहलाते हैं। जीवन समर्पण का भाव जिन साहित्य एवं समाजसेवियों के पास होता है वही इस प्रकार के महान कार्य को साकार कर पाते हैं। प्रशिक्षु अनुवादकों के लिए तो यह शब्दकोश निश्चित ही वरदान साबित होगा।

आज अंग्रेजी भाषा न केवल विश्व भाषा, अपितु विश्व को एक सूत्र में बांधने वाली भाषा बन चुकी है। इसी प्रकार अनुवाद को विश्व के सम्पर्क सूत्र के रूप में देखा जा सकता है। अनुवाद अपने आप में संश्लिष्ट प्रक्रिया का द्योतक होता है। अनुवाद मूलतः स्रोत भाषा तथा लक्ष्य भाप की दो अलग-अलग प्रवृतियों एवं संस्कृतियों से संबंध रखता है। समस्य यहीं आकर और भी जटिल हो जाती है। जब किसी एक भाषा के शब्द को किसी दूसरी भाषा में बताया जा रहा है तो कई बार सांस्कृतिक विभिन्ता की दृष्टि से एक अर्थ को हू-ब-हू बताना मुश्किल हो जाता है ऐसी स्थिति में उस शब्द की व्याख्या करना आवश्यक हो जाता है। यह कोश इस प्रकार के शब्दों की मूक-व्याख्या भी करता है।

यह बात पूर्णतः सत्य है कि पूर्ण पर्याय या तो बहुत ही कम होते है और या होते ही नहीं जिनका अर्थ एक-दूसरे से पूरी तरह साम्य रखता हो अगर शब्दों के पूर्णतः पर्याय होते तो कोशग्रन्थों और पर्यायों की आवश्यकता ही नहीं होती। सब पर्यायों में व्यवहार में कुछ न कुछ तो निकटता होती ही है लेकिन अर्थ के स्तर पर समानता नहीं होती। अग कहीं होती भी है तो बहुत की कम। डा॰ भाटिया का मत है कि "बुद्धि के लिए प्रखर, तीक्ष्ण तथा कुशाग्र विशेषण समान होते हुए भी भिन्न-भिन्न अर्थछटाओं की अभिव्यक्ति करते हैं। प्रयोग और सन्दर्भ-भेद से ही अर्थ भेद निश्चित होता है। लेखन या अनुवाद करते समय भी प्रयोगगत सूक्ष्म भेदों का ज्ञान लेखक-अनुवादक को होना चाहिये। इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रयोग और सन्दर्भ-भेद से ही पर्यायों के अर्थ की भिन्नता का पता भी चलता है।

डा॰ भाटिया ने प्रस्तुत कोश में 203 शब्दमालाओं में एक हजार से अधिक शब्दों पर विचार-चिंतन किया है। इस कोश में जहां इन शब्दों के सूक्ष्म अर्थ-भेदों को स्पष्ट किया गया है वहीं पर उनके विभिन्न प्रयोगों को भी दिखाया गया है। इस प्रकार के प्रयोगों से पाठक शब्दों के ठीक प्रयोग की ओर उन्मुख हो सकेंगे और मिलते-जुलते शब्दों के अर्थों में सूक्ष्म अन्तर भी समझ सकेंगे। अब हम कुछ उदाहरण देखते हैं, जैसे अंग्रेजी में Actual, Factual, Real, True ये सभी पर्याय माने जाते हैं, लेकिन अर्थ की दृष्टि से इनमें पर्याप्त और सूक्ष्म भेद हैं; जैसे

Actual	वास्तविक, जो अस्तित्व में हो। जिसकी सत्त विद्यमान हो।
Actual cost	वास्तविक लागत
Actual Possession	वास्तविक कब्जा
Factual	तथ्यात्मक-जो तथ्य है।
Real	(1) यथार्थ (2) असली—जो जैसा प्रतीत होता है, वह वैसा ही हो।

इसी प्रकार डा॰ भाटिया ने अपने प्रस्तुत कोश में 203 शब्द-मालाओं में से एक हजार शब्दों पर विचार प्रस्तुत किया है। अंग्रेजी-हिन्दी के शब्दों का ठीक प्रयोग करने के लिए पर्याय शब्दों का यह एक लघु कोश तैयार करके कोशकार ने एक उल्लेखनीय एवं महान कार्य किया है। क्योंकि इस प्रकार के कोशों की आज बहुत आवश्यकता है। पर्याय शब्दों पर आधारित डा॰ भाटिया का यह प्रथम तथा सराहनीय प्रयास है। इस प्रकार के कोशों की कमी जो अभी तक महसूस की जा रही थी, उसे डा॰ भाटिया ने इस प्रस्तुत कोश से पूरा किया है। इस कोश का उद्देश्य भी यही बताना या सिखाना है कि शब्दों का सही प्रयोग या चयन कैसे किया जाये।

□

हिन्दी में फारसी और अंग्रेजी शब्दों का लिंग-निर्णय

—अनीता गुप्ता

हिन्दी भाषा के शब्द भंडार में चार प्रकार के शब्दों की गणना की जाती है: तत्सम, तद्‌भव, देशज और विदेशी।

हिंदी में प्रयुक्त इन सभी प्रकार के शब्दों का लिंग-निर्णय हिंदी की अपनी व्याकरणिक लिंग-परंपरा के अनुसार हुआ है।

हिंदी में लिंग-निर्णय के मुख्य आधारों पर चर्चा करने से पहले यह जानना जरूरी है कि लिंग की दृष्टि से हिंदी में बहुत अनियमितताएं हैं। एक ही अर्थ के द्योतक शब्द कभी पुल्लिंग (भवन) तो कभी स्त्रीलिंग (इमारत) के रूप में प्रयुक्त होते हैं। देह और शरीर के संबंध में भी यही बात है। इसके अतिरिक्त एक ही शब्द, एक ही अर्थ में, दो लिंगों में प्रयुक्त होते हैं, जैसे—स्लीपर, फ्रॉक, आदि।

हिंदी में फारसी और अंग्रेजी शब्दों के लिंग-निर्णय के संबंध में मुख्य रूप से तीन आधारों की चर्चा की जा सकती है :

1. ध्वनि: इसके चार उपविभाग किये जा सकते हैं: (क) अन्त्य 'आ' ध्वनि, (ख) अन्त्य 'ई' ध्वनि, (ग) मध्य 'आ' ध्वनि, (घ) मध्य 'इ' ध्वनि **2. व्यवसाय 3. अन्य शब्द।**

उपर्युक्त के संबंध में यहां कुछ विस्तारपूर्वक विचार किया जा रहा है:

1. ध्वनि : अनुमानतः हिंदी में आगत विदेशी शब्दों के लिंग-निर्णय का सबसे बड़ा आधार ध्वनि है। मेरे विचार में लगभग सत्तर प्रतिशत शब्द इसके अंतर्गत आते हैं। इस शब्द-वर्ग के चार उपविभागों की ऊपर चर्चा हो चुकी है। इनमें प्रथम दो वर्ग (अन्त्य 'आ' ध्वनि, अन्त्य 'ई' ध्वनि) के शब्दों की संख्या बहुत अधिक है। अंतिम दो में अपेक्षाकृत कम शब्द हैं। वस्तुतः हिंदी शब्दों के लिंग-निर्णय में मध्य ध्वनि की तुलना में अन्त्य ध्वनि अधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

क. अन्त्य 'आ' ध्वनि: शब्दों के पुल्लिंग होने के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण आधार अन्त्य 'आ' ध्वनि का है। वैसे भी हिंदी में जितने भी पुल्लिंग शब्द हैं, उनमे आकारांत शब्दों की संख्या काफी है। ऐतिहासिक दृष्टि के इस पुल्लिंग आ का विकास मुख्यतः संस्कृत 'अक' से हुआ है—संस्कृत घोटक-प्राकृत घोडअ हिन्दी घोड़ा, संस्कृत पंजरक प्राकृत पंजरअ हिंदी पिंजरा।

संस्कृत अक से विकसित पुल्लिंगद्योतक 'आ' की व्यापकता के प्रभाव से ही हिंदी में आए अधिकांश आकारांत विदेशी शब्द पुल्लिंग में प्रयुक्त होते हैं। हिंदी में आगत विदेशी शब्दों में आकारांत शब्दों का प्रतिशत लगभग बीस है। इन बीस प्रतिशत शब्दों में लगभग 18 प्रतिशत पुल्लिंग हैं, दो प्रतिशत स्त्रीलिंग हैं। इस प्रकार हिंदी में आगत सभी विदेशी शब्दों के लगभग 18 प्रतिशत पुल्लिंग शब्दों का लिंग-निर्णय शब्द की अंतिम ध्वनि के आधार पर हुआ है। फारसी, अरबी तथा अंग्रेजी आदि भाषाओं से आगत कुछ विदेशी शब्द इस प्रकार हैं, जो आकारांत हैं, पुल्लिंग हैं। प्रत्येक भाषा को यहां पृथक-पृथक लिया जा रहा है।

फारसी: अंदाजा, अंदेशा, अनारदाना, आईना (आईनः), आलूचा (आलूचः), आलूबुखारा, उस्तरा, करिश्मा (करिश्मः), किनारा, कुलचा (कलीचः) खरचा (खर्चः), खरबूजा (खर्पजः), खुदा, गरदा (गर्द), गलीचा (गालीचः), गुजारा (गुजारः), गुरदा (गुर्दः), गुलदस्ता (गुलदस्तः), गुसलखाना (अ.गुस्ल+फा. खानः), गूंगा (गुंग), चंदा (चंद), चरखा (चर्ख), चश्मा (चश्मः), चूहा (चूवा), चेहरा (चहरः), जीना (जीनः), जुरमाना (जुर्मानः), तोता, दमा, दरवाजा, दस्ताना (दस्तानः), दहला (फा.दह+ला प्रत्यय), दाखिला (दाखिलः), नखरा (नखरः), नमूना (नमूनः), नशा (नश्शः), नाश्ता (नाश्तः), निशाना (निशानः), नेफा (नेफः), परचा (पर्चः), पिस्ता (पिस्तः), पुरजा, पैमाना (पेमानः), प्याला (पियालः), बग़ीचा (बागचः), बरामदा (बरामदः), बुरादा (बुरादः), मजा (मज), महीना (माह), मुरदा (मुर्दः), वायदा (वाइदः)।

अरबी : इलाका, इशारा, कायदा (कायदः), किराया (किरायः) किस्सा (किस्सः); खजाना (खजानः), खसरा (खसरः), गुस्सा, जनाजा (जनाजः), जलसा, नकशा (नक्शः), नजारा (नज्जार), फायदा (फायदः), मामला (मुआमिलः), मुल्ला, मुशायरा (मुशाअरः), लकवा (लकवा), लिफाफा, सिक्का (सिक्कः), सौदा, हलुआ (हल्वः), हिस्सा (हिस्सः), हैजा (हैज)।

अंग्रेजी: आर्केष्ट्रा, कॉमा, कैमरा, क्रोशिया (क्राचेट), फुटा (फुट भी) बरामदा, बेरा (बेयरर), मलेरिया, सिनेमा, सोडा, सोफा, हर्निया, हिस्टीरिया, हुर्रा (हर्ष-ध्वनि)।

ख. अन्त्य ई ध्वनि: उपर्युक्त उदाहरणों से यह भली-भांति सिद्ध हो जाता है कि आकारांत शब्दों को हम अधिकांशतः पुल्लिंग के रूप में स्वीकार करते हैं और इसका आधार हिंदी में 'आ' का पुल्लिंग प्रत्यय होना है। इसके ठीक विपरीत 'इ' प्रत्यय हिंदी में स्त्रीलिंग का मुख्य प्रत्यय है जिसका विकास संस्कृत इका से हुआ है, घोटिका-घोड़ी, घटिका-घड़ी। इसी आधार पर हिंदी के अधिकांश ईकारांत विदेशी शब्द स्त्रीलिंग है। यदि प्रतिशत में बात की जाए तो अंग्रेजी, फारसी, अरबी आदि भाषाओं से आगत शब्दों में ईकारांत शब्दों का प्रतिशत लगभग बीस है। इन बीस प्रतिशत शब्दों में लगभग अठारह प्रतिशत स्त्रीलिंग शब्दों का लिंग-निर्णय

अन्तिम ध्वनि 'ई' के आधार पर हुआ है। फारसी, अरबी तथा अंग्रेजी आदि भाषाओं से कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं:

फारसी: अशरफी, आजादी, आबादी, आमदनी, कमी, कुश्ती, खरीदारी, खामोशी, खुशी, खुश्की, गंदगी, गरमी, गलती, चरबी, चुस्ती, जरी, जिंदगी, तख्ती, तश्तरी, ताजगी, दरी, दोस्ती, नाशपाती, निशानी, परी, परेशानी, बरफी, बाजी, बिरादरी, बीबी, मजदूरी, मस्ती, रकाबी, रेजगारी, रोशनी, शहनाई, शादी, शीशा, सफेदी (सुफेदी), सर्दी, सवारी, सादगी, सुजनी (सोजनी), सुस्ती, सौदेबाजी (अ सौदा+फा. बाजी), हमदर्दी, हस्ती,

अरबी: अरजी, कलई, कली (कलई), किश्ती, कुरसी, गुलामी, जल्दी, तबदीली, तरक्की, तसल्ली, बदली (अ. बदल+ई), बेइज्जती (फा. बे+अ. इज्जत), मजूरी, मर्जी, माफी, रूबाई, शायरी, सफाई, सराही, हवेली, हाकिमी, हाजिरी, हैरानी,

अंग्रेजी: अंग्रेजी, आर्मी, एजेंसी, कंपनी, कमेटी, कॉपी, कॉफी, कालोनी, केतली (केटिलः), गारंटी, गैलरी, टाई, टैक्सी, डायरी, डेरी, ड्यूटी, तिजोरी (ट्रेजरी), पार्टी, पॉलिसी, फी (फ्री) फैक्टरी, फैकल्टी, बैटरी, यूनिवर्सिटी, रैली, लाइब्रेरी, लाटरी, लारी, लेडी लेबोरेटरी, सीनरी, सोसायटी, ह्विस्की,

ग. मध्य 'आ' ध्वनि: उपर्युक्त शब्दों में अन्त्य 'आ' ध्वनि के अन्तर्गत आए विदेशी शब्द अपनी आकारांतता के कारण पुल्लिंग रूप में प्रयुक्त होते हैं। लगता है कि पुल्लिंग द्योतक 'आ' लिंगीय दृष्टि से इतना महत्वपूर्ण है कि शब्दांत में आने पर तो शब्दों को पुल्लिंग बना ही देता है, बहुत सारे शब्दों को शब्द के मध्य में आकर भी पुल्लिंग बना देता है।

हिंदी भाषा में आगत विदेशी शब्दों में भी ऐसे शब्दों की संख्या काफी है। इनमें मुख्य रूप से दो प्रकार के शब्द हैं:

(1) जिनमें मूल शब्द के मध्य 'आ' नहीं है, किन्तु हिंदी में विकसित शब्द के बीच में आ गया है, (2) वे शब्द जिनमें मूल शब्द के बीच 'आ' है। फारसी, अरबी तथा अंग्रेजी आदि भाषाओं से कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं:

फारसी: अंदाज, अचार, अनार, आराम, आसमान, कलाकंद, खानदान, ख्वाब, गुमान, गुलाब, गुलाल, चाबुक, चिराग, जादू, जानवर, बादाम बुखार, मैदान, तेजाब, दामन, दामाद, नाखून, निशान, नुकसान, पुलाव, प्याज, रूमाल, रोजगार, शिकार, सामान, सितार,

अरबी: अखबार, अल्लाह, आसार, इंतजाम (इंतिजाम), इंसाफ (इनआम), इलाज, इश्तहार, एहसान, औजार, कबाब, कागज, ख्याल, गिलाफ, जहाज, जाल , जुकाम, तलाक, ताल्लुक (तअल्लुक), तूफान, दिमाग, मकान, मजाक, मवाद, मानसून, लाल, सवाल, सुराग, हराम, हिसाब,

अंग्रेजी: अरारोट (एरोरूट), अस्पताल (हॉस्पिटल), ऑफिस, गोदाम (गाडाउन), कार्टून, कारबन, कार्ड, कॉलर, कॉलिज, गाउन, गार्डन, गिलास, टमाटर (टमौटो), टाइप, टाइफायड, टाइम, टाउन, टेलिग्राम, डॉलर, नॉवेल, पार्क, पाट, पास, पाउडर, पियानो, पोस्टमार्टम, प्रोग्राम, प्लॉट, प्लेटफॉर्म, बॉर्डर, माइक, मार्च, रॉकेट, राशन, लाइसेंस, लॉकेट, लॉन वार्ड, विटामिन (विटैमिन), सर्टिफिकेट, सिगार, स्टाफ, स्टॉल, हाइफन, हाउस हारमोनियम, हॉल, हेलिकॉप्टर, होल्डाल।

घ. मध्य 'इ' ध्वनि: हिंदी में 'ई' स्त्रीलिंग का मुख्य चिह्न है और उसी आधार पर अन्त्य 'ई' ध्वनि के अन्तर्गत आगत विदेशी शब्द स्त्रीलिंग रूप में प्रयुक्त होते हैं। यह 'ई' ध्वनि 'आ' की तरह ही कुछ शब्दों के मध्य में आकर भी शब्द के लिंग को प्रभावित करती है। फारसी, अरबी तथा अंग्रजी आदि भाषाओं से कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं:

फारसी: कनीज, चीज, जंजीर, जमीन, जरीब ,(एक प्रका की जंजीर), जीनत, शोभा, दीमक, फ़रमाइश (फर्माइश), फरियाद (फर्याद), रसीद, सरजमीन (भूमि), सरीकत (शिरकत), साझा;

अरबी: कीमत, तकदीर, तकलीफ तबीयत, तमीज, तरकीब, तशरीफ, तसवीर, तहजीब, तहरीर, (लिखावट), दलील, नीयत, फजीहत, दुर्दशा, फसीला—चहारदीवारी, शिरकत, सलीबव, सीरत—प्रकृति; स्वभाव, हकीकत।

अंग्रेजी: अपील, कंकरीट (कांक्रीट), क्रीम, जीप, टीम, फीस, मशीन, मीटिंग, मैगजीन, लीग, सीट, सील, स्कीम;

व्यवसाय: आधुनिक युग में कार्य अथवा व्यवसाय और लिंग का विशेष संबन्ध नहीं रह गया है, किन्तु पुराने जमाने में यह संबंध काफी था। बहुत सारे कार्य अथवा व्यवसाय ऐसे थे जिन्हें पुरूष ही करते थे, इसीलिए उनके द्योतक शब्द पुल्लिंग रूप में प्रयुक्त हुए, जैसे—सूबेदार, जिलेदार, मैजिस्ट्रेट, गोलंदाज आदि। इसके विपरीत जो व्यवसाय स्त्रियां करती हैं तो उनके लिए प्रयुक्त शब्दों को स्त्रीलिंग माना गया है, जैसे दर्जिन, हजामिन, महतरानी। यहां प्रवृत्ति दिखाने के लिए व्यवसाय पर आधारित कुछ पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग शब्दों के उदाहरण दिये जा रहे हैं:

क. व्यवसाय पर आधारित पुल्लिंग शब्द:

फारसी: अहलकार—कचहरी, न्यायालय आदि का कर्मचारी,उत्तुगर, उस्ताद कलईगर, कानूनगो, कारीगर, काश्तकार, किलेदार, खजानची, खरीददार, गल्लाफरोश, गाड़ीवान, गोलंदाज, घड़ीसाज, चपरासी, चाकर, चौकीदार, जमादार, जमींदार, जादूगर, जालसाज, जिल्दसाज, जौहरी, ठीकेदार, ढढोरची, तमाशबीन (अ. तमाशः+फा. बीन), ताबेदार (अ. ताबअ+फा. दारः—नौकर), थानेदार (हि. थाना+फा. दार), दर्जी, दरबान, दरवेश—भिखारी, दुकानदार, नाजिम—कचहरी या न्यायालय के किसी विभाग के लिपिकों आदि का प्रधान अधिकारी, निशानची, पहरेदार (हि. पहरा+फा. दार), पहलवान, फोतेदार (खजांची), बागवान, बाजीगर, बादशाह, बावरची, मकानदार, मजदूर, मुनाफाखोर, मेहतर, रंगसाज, रफूगर, नरकसाज, शिकारी सूबेदार, हवलदार;

अरबी: अत्तार (इत्र आदि बनाने और बेचने वाला), कसाई, कागजी (कागज)—कागज विक्रेता, गुलाम, गोताखोर, जर्राह, जासूस, तबलची (तबलः+ची), दलाल (दल्लाल), दीवान—मंत्री, नवाब (नव्वाब), फक़ीर, मदारी, मल्लाह, मशालची, मुंशी, मुखतार, मुनीम (मुनीअ), मुसव्विर—चित्रकार, रजाकार—स्वयं-सेवक, वजीर, हकीम, हज्जाम, हाकिम—हकूमत करने वाला व्यक्ति, हामिल (हम्माल)—भारवाहक;

अंग्रेजी: इंजीनियर, इंस्पेक्टर, एजेंट, कप्तान, कमिश्नर, कर्नल, कलक्टर, क्लर्क, गवर्नर, गार्ड, जेलर डॉक्टर, ड्राइवर, पाइलट, पोस्टमास्टर, पोस्टमैन प्रेसिडेंट, प्रोफेसर, फोटोग्राफर, बैरिस्टर, मास्टर, मिनिस्टर, मेजर, मेयर, मैजिस्ट्रेट, रजिस्ट्रार, रिपोर्टर, लीडर, लेक्चरर, सर्जन, सारजट, सुपरवाइजर,

व्यवसाय पर आधारित स्त्रीलिंग शब्द: आया, मेट्रेन, तवायफ

उपर्युक्त व्यवसायबोधक शब्दों के विषय में चार बातें ध्यान देने योग्य हैं:

एक—पुरूषों के अनेक व्यवसायों को स्त्रियां भी करने लगी हैं. अतः

बहुत सारे व्यवसाय, कार्य अथवा पदबोधक शब्द द्विलिंगी हो गए हैं, जैसे—डाॅक्टर (डाक्टरनी = महिला डाॅक्टर), मैजिस्ट्रेट, जज, वकील आदि।

दो—इस प्रक्रिया में कुछ स्त्रीलिंग शब्दों का भी निर्माण हुआ है, जैसे-दर्जिन, मेहतरानी, मजदूरनी, कसाईन, नौकरानी, मकानदारनी।

तीन—उपर्युक्त पुल्लिंग शब्दों में कुछ ऐसे भी हैं, जिनके पुल्लिंगत्व का आधार व्यवसाय के अतिरिक्त मध्य में 'आ' ध्वनि का होना भी है, उदाहरणार्थ—कप्तान, मास्टर, गोलंदाज, बागवान, सूबेदार।

चार—यों इन शब्दों में ध्वनि का महत्व गौण ही है। सामान्यतः 'आ' अन्त्य ध्वनि तथा 'आ' मध्य ध्वनि पुल्लिंग की ध्वनियां हैं। लेकिन यदि कोई शब्द स्त्री-प्रधान व्यवसाय में प्रचलित है तो वह अंत्य 'अ' तथा मध्य 'अ' होते हुए भी स्त्रीलिंग ही माना जाएगा, जैसे-आया और तवायफ शब्द अंत्य 'आ' तथा मध्य 'आ' होते हुए भी स्त्रीलिंग हैं।

इस प्रकार मुख्यतः अन्त्य 'ई' ध्वनि (कहीं-कहीं मध्य भी) स्त्रीलिंग का चिह्न है। लेकिन यदि कोई ऐसा शब्द जिसके मध्य में या अंत में 'ई' है और वह ऐसे व्यवसायवर्ग के लिए प्रयुक्त होता है जिसको अधिकांशतः पुरूष करते हैं, तो वह शब्द पुरूष-प्रधान व्यवसाय के आधार पर **पुल्लिंग** ही होगा न कि ध्वनि के आधार पर स्त्रीलिंग।

निम्नांकित शब्द उल्लेखनीय हैं जो अंत्य 'ई' और मध्य 'ई' ध्वनियुक्त होते हुए भी पुल्लिंग हैं:

3. अन्य शब्द: हिंदी में आगत बहुत से विदेशी शब्दों के लिंग का निर्णय अन्य शब्दों के आधार पर हुआ है। इन अन्य शब्दों में ऐसे शब्द आते हैं जो किसी विदेशी शब्द के आने के पूर्व हिन्दी में थे तथा जिनका लिंग-निर्णय हो चुका था। उदाहरण के लिए मध्यकाल में फारसी से ताउन शब्द आया जो बीच के 'आ' के कारण हिंदी में पुल्लिंग रूप में स्वीकृत हुआ। असंभव नहीं कि उसी शब्द के आधार पर बाद में अंग्रेजी से आने वाला प्लेग शब्द पुल्लिंग मान लिया गया हो। यहां कुछ इस प्रकार के शब्दों के उदाहरण दिये जा रहे हैं। कोष्ठक में वे शब्द दिए गए हैं, जिनके आधार पर लिंग-निर्णय की संभावना हो सकती है।

फारसी: कबूतर (कपोत), खून (रक्त), गश्त (चक्कर), गीदड़ (सियार), गोश्त (मांस), जिगर (कलेजा), जिस्म (शरीर), जेवर (आभूषण), जोश (उत्साह), तख्त (सिंहासन), तीर (बाण), दम (सांस), दिल (हृदय), नमक (लवण), शहर (नगर), सबक (पाठ)।

अरबी: इल्म (ज्ञान), इश्क (प्रेम), उसूल (सिद्धांत), कर्ज (ऋण), खर्च (व्यय), गम (दुःख), जाल (धोखा), जुर्म (अपराध), नुक्स (दोष), फर्क (अंतर), फर्ज (कर्तव्य), मजहब (धर्म), महल (भवन), रोब (दबदबा), वजन (भार), वतन (स्वदेश), शर्बत (रस), सबूत (प्रमाण), सलूक (व्यवहार)।

अंग्रेजी: कटपीस (टुकड़ा), कनस्तर (कनिस्टर-डिब्बा), कुशन (गद्दा), कैंप (पड़ाव), जूट (पटसन), टैक्स (कर) पैकेट (पुलिंदा, गट्ठर), फंड (कोश), बैंड (दल, समूह), बैलून (गुब्बारा), ब्रिज (पुल), मेडल (तमगा, पदक), रोलर (बेलन), वोट (मत), स्कूल (मदरसा), हैंडिल (हत्था)।

फारसी, अरबी व अंग्रेजी आदि भाषाओं से आगत शब्दों के हिंदी में लिंग-निर्णय संबंधी कुछ सामान्य बातें:

1. सामान्यतः देश, खेल, बर्तन, मिठाई, फल आदि से संबंधित शब्द पुल्लिंग माने जाते हैं। उदाहरण के लिए, इसराईल, ग्रीस, मिस्र, (देश); क्रिकेट, टेनिस, बैडमिंटन (खेल); टब, थर्मस, रोलर (बर्तन); कलाकंद (मिठाई); अंगूर (फल) आदि।

यहां एक बात यह ध्यान देने योग्य है कि शब्द ईकारांत होने पर स्त्रीलिंग में प्रयोग किया जा सकता है, उदाहरण के लिए हाॅकी, रसभरी, बरफी आदि शब्द उपर्युक्त कथित वर्गों से संबंधित होते हुए भी ईकारांत होने के कारण पुल्लिंग में प्रयुक्त न होकर स्त्रीलिंग में प्रयुक्त होते हैं।

2. कुछ शब्द पुल्लिंग और स्त्रीलिंग दोनों में प्रयुक्त होते हैं। ये इस प्रकार हैं:

अरबी: इंतजार (इंतिजार), औसत, मजार, मलहम (मर्हम) आदि।

अंग्रेजी: इंच, कमीशन, किलोमीटर, कोटपीस, क्लास, चाॅकलेट, टिकट, टीन, डिपो, पाइप, प्रेस, फर्म, फायर, फ्राॅक, बनियान (बैनियन), बाॅल, सिगरेट, सिलीपर, स्काॅलरशिप आदि।

3. कुछ शब्द, जैसे—पैसिंजर, दोस्त, यतीम, यहूद आदि शब्द मूल रूप से पुल्लिंग हैं, लेकिन इनका आवश्यकतानुसार स्त्रीवर्ग में प्रयोग किये जाने पर स्त्रीलिंग में भी प्रयोग हो सकता है।

4. व्यक्तिवाचक संज्ञाओं के आधार पर भी लिंग-निर्णय होता है। बिशप, वाइसराय, औरंगजेब, बाबर, आदम, कबीर, मजनूं, मसीह, रहीम, जैसे शब्द पुरूष से संबंधित होने के कारण पुल्लिंग हैं। इसके विपरीत ऐलिजाबेथ, विक्टोरिया जैसे शब्द स्त्रीलिंग हैं।

5. सम्बोधित शब्द यदि पुरूष के लिए हैं तो पुल्लिंग और स्त्री के लिए होने पर, स्त्रीलिंग होगा। अरबी भाषा के मुसम्मात शब्द का तात्पर्य औरत अथवा श्रीमती होने के कारण इसका स्त्रीलिंग में प्रयोग होता है। इसी प्रकार बेवफा, बेवा, आदि शब्द भी स्त्री से संबंधित होने के कारण स्त्रीलिंग हैं।

अनुवादः प्रकृति, प्रक्रिया और प्रकार

—रमेश चन्द्र

1. अनुवाद की प्रकृति

विश्व में अनेक विषय ऐसे हैं, जिनके विज्ञान अथवा कला होने के बारे में कोई संदेह नहीं होता, परन्तु जिन विषयों के बारे में कोई स्पष्ट धारणा न बन चुकी हो, उनकी प्रकृति के बारे में अक्सर विवाद बना रहता है। अनुवाद ऐसा ही विषय है और इससे संबंधित अनेक धारणाएं तो परस्पर विरोधी भी हैं। विषय में सिद्धान्त और व्यवहार पक्ष जिस अंश में होते हैं, उसी के अनुसार उनकी प्रकृति के बारे में धारण बनती है।

अनुवाद में वैज्ञानिकता

अनुवाद के विज्ञान और कला पक्ष पर विचार करते समय अनुवाद-प्रक्रिया की ओर अनायास ही ध्यान चला जाता है, क्योंकि अनुवाद तो स्वयं एक निष्पत्ति है, जो इस प्रक्रिया से गुजरने के बाद ही प्राप्त होती है। इस प्रक्रिया को ध्यान में रखे बिना अनुवाद का स्वरूप निर्धारित करना उचित नहीं होगा। अनुवाद-प्रक्रिया का पहला चरण स्रोत भाषा की सतही संरचना को गहरे स्तर तक विश्लेपित करके आशय की इकाइयां निर्धारित करना है। यह विश्लेषण अर्थ-ग्रहण है। अर्थ के संदर्भ में ही स्रोत भाषा की सतही संरचनाओं को स्रोत भाषा की बीज संरचनाओं में विश्लेपित किया जाता है। फिर उनको हेतु भाषा की बीज संरचनाओं में अंतरित किया जाता है। हेतु भाषा की बीज संरचनाओं की अनुवादक स्त्रोत भाषा की सतही संरचनाओं के संगत पुनर्रचना करता है, परन्तु इन पुनर्रचित संरचनाओं को अनुवाद का रूप देने के पहले वह इनकी गहरे स्तर पर कथ्य की समानान्तर इकाइयों से तुलना करता है और तब इन्हें अनुवाद का रूप देता है। वास्तविक अनुवाद से पूर्व होने वाली यह सम्पूर्ण चिन्तन-प्रक्रिया व्यतिरेकी भाषा-विज्ञान पर अधारित होती है। अनुवादक तुलना के आधार पर स्त्रोत और लक्ष्य भाषाओं की ध्वानिक, रुपिमिक, वाक्यात्मक और आर्थी समताओं और विषमताओं को ध्यान में रखता है और असमानताओं की समस्या सुलझाने के लिए निश्चित नियमों का अनुसरण करता है। यह सम्पूर्ण विश्लेषण वैज्ञानिक और व्यवस्थित रीति से होता है। वैज्ञानिक ज्ञान भी इसी वैज्ञानिक और व्यवस्थित रीति से ही हमारे सामने स्टीक अनूदित सामग्री के रूप में आता है। इसी आधार पर कुछ लोग अनुवाद की प्रकृति वैज्ञानिक मानते हैं।

जटिलता

भाषा आशय और अभिव्यक्ति का प्रतिफलित रूप होती है और साथ ही साथ समाज-सापेक्ष भी होती है। अनुवाद करते समय स्रोत भाषा के इन तीनों आयामों को हेतु भाषा के तीन संगत आयामों में प्रतिस्थापित करना होता है। ये तीन आयाम तीन व्यवस्थाओं के सूचक हैं। इस तिहरे अन्तरण की अनिवार्यता के कारण ही अनुवाद कार्य जटिल माना जाता है। इसीलिए जुम्पल कैरी आदि विद्वानों का विचार है कि अनुवाद तुलनात्मक भाषा विज्ञान का केवल जटिल तकनीकी रूप है, जो कुछ व्यवस्थित नियमों के आधार पर यांत्रिक ढंग से किया जा सकता है और इस प्रकार एक यांत्रिक क्रिया है। इसी कारण रिचर्ड्स भी कहते है कि "अनुवाद सम्भवतः सबसे जटिल कार्य है*** ।" और हम्बोल्ट तो यहां तक कहते हैं कि अनुवाद कार्य एक सुलझाई न जा सकने वाली समस्या को सुलझाने का प्रयत्न मात्र जान पड़ता है। गुटंगर आदि विद्वान मानते हैं कि—एक भाषा से दूसरी भाषा में सही अनुवाद सम्भव ही नहीं है, क्योंकि प्रत्येक भाषा की व्यवस्था दूसरी भाषा की व्यवस्था से भिन्न होती है।"

अनुवाद में कलात्मकता

अनुवाद-प्रक्रिया का पहला पहलू अर्थ-ग्रहण है, तो दूसरा अर्थ-सम्प्रेपण। यहां अनुवादक अन्य लेखक के भावों का अपनी भाषा और शैली में सम्यक् सम्प्रेपण का दायित्व निभाता है। राष्ट्रकवि मैथिली शरण गुप्त के शब्दों में—"अभिव्यक्ति की कुशलता ही तो कला है। और अनुवादक अभिव्यक्ति के इस स्तर पर अपने को उसी भूमि पर खड़ा पाता है, जो कलाकार के व्यक्तित्व की कसौटी मानी जाती है। अनुवादक से वे सब अपेक्षाएं भी की जाती हैं, जो एक रचनाकार या सर्जक कलाकार से की जाती है।" पाश्चात्य लेखक रोनेटो पॉगिडि के शब्दों में—

The translator stands at the opposite pole from the performing artists who reveals his modest calling and pressures craft.

जिस प्रकार अभिनेता की देन या उपलब्धि इस बात में देखी जाती है कि वह मूल पात्र की भूमिका कितने सहज रूप में निभा पाता है, उसी प्रकार अनुवादक को भी दूसरे भावों को अपने शब्दों में दूसरे की ही सहजता से अभिव्यक्ति देनी होती है। अनुवाद कार्य की कलात्मकता का यह प्रमुख पहलू है।

अनुवाद में सर्जनात्मकता

उदाहरण के लिए, फिट्जेराल्ड द्वारा उमर खैयाम की रूबाइयों के अनुवाद को अनेक लोग खैयाम की अपेक्षा फिटजेराल्ड की प्रतिभा का नमूना समझते हैं। इसलिए कुछ लोग साहित्यादि की भांति अनुवाद को भी एक सर्जनात्मक कला मानते हैं। फिट्जेराल्ड ने इस सर्जनात्मकता के बारे में स्वयं कहा है— "एक मरे हुए पक्षी के स्थान पर दूसरा जीवित पक्षी अधिक अच्छा है।" इसी सर्जनात्मकता को ध्यान में रखते हुए कुछ अनुवाद-विज्ञानियों का कथन है कि अच्छे अनुवाद की परख इस बात से

करनी चाहिए कि स्रोत और अनूदित सामग्री अपने-अपने पाठकों में कितनी सामानांतर प्रतिक्रिया उत्पन्न करती है। इसी सन्दर्भ में विलियम ओविट्ज ने कहा है— "सच्चा अनुवाद कृति रूपी आत्मा का पुनर्देहधारण है।" नाइडा का कथन है—

Translating consists in producing, in the receptor language, the closest natural equivalent to the message of the source language, first in meaning and secondly in style.

अनुवाद में शिल्पवत्ता

कुछ लोगों की धारणा है कि अनुवाद, विज्ञान और कला के साथ-साथ शिल्प भी है। कला एक सर्जना है और शिल्प अभ्यास और शिक्षण से अर्जित या परिमार्जित होता है। अनुवाद एक कला होने पर भी अभ्यास और शिक्षण-सापेक्ष कार्य है। हर अनुवाद से एक सीमा तक शिल्प और कला की अपेक्षा भी रहती है। वास्तव में अनुवाद का शिल्प पक्ष अनूद्य सामग्री के स्वरूप पर भी निर्भर करता है। मूल सामग्री यदि तथ्य-प्रधान हो, तो अनुवाद कला कम और शिल्प अधिक होगा। इसके विपरीत, यदि अनूद्य रचना रस-प्रधान हो, तो केवल शिल्प से उसी प्रकार कृत-कृत नहीं हुआ जा सकता, जिस प्रकार केवल पिंगल के नियम पढ़ कर कवि नहीं बना जा सकता।

अतः सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए यही कहना उचित होगा कि अनुवाद की प्रक्रिया में वैज्ञानिकता है, सिद्धि में कलात्मकता और स्वरूप में शिल्पवत्ता है। ये तीनों तत्व इसमें न्यूनाधिक मात्रा में अवश्य मिलते हैं।

2. अनुवाद प्रक्रिया

प्रत्येक कार्य के निष्पादन की कोई न कोई प्रक्रिया होती है। अनुवाद की भी अपनी प्रक्रिया है। कुछ अनुवाद विज्ञानियों का विचार है कि अनुवाद-प्रक्रिया बोलने की प्रक्रिया के समान ही होती है, केवल उससे कुछ ज्यादा जटिल है।

अनुवाद की प्रकृति पर चर्चा के समय भी यह बात सामने आ चुकी है कि भाषा आशय और अभिव्यक्ति का प्रतिफलित रूप होती है। साथ ही साथ यह समाज-संदर्भित भी होती है। अनुवाद-प्रक्रिया में स्रोत भाषा की इस त्रिआयामी व्यवस्था को हेतु भाषा की सहवर्ती त्रिआयामी व्यवस्था में अन्तरण करना होता है। अनुवाद में इन तीन आयामों में से यदि किसी एक का भी सही अन्तरण न हो पाए तो वह अनुवाद भी सही या पूर्ण अनुवाद नहीं माना जा सकता। इस प्रकार अनुवाद-प्रक्रिया जहां स्वयं में एक सुनिश्चित रीति है, वहां इस पर भाषायी आयामों का भी अनिवार्यतः और स्वाभाविक प्रभाव पड़ता है। परन्तु अन्तरण की यह प्रक्रिया किस स्तर पर होती है और इसका आधार क्या है, इसके बारे में इस भाग में स्पष्ट रूप से और विस्तार से बताया जा रहा है, हालांकि इसी संबंध में संक्षिप्त रूप से ऊपर भी चर्चा की गई है।

नाइडा ने इस प्रक्रिया के तीन चरण बताए हैं— विश्लेषण, अन्तरण और पुनर्रचना। उनके अनुसार अनुवादक पहले स्त्रोत भाषा की सतही संरचना का अध्ययन और विश्लेषण करता है, जोकि स्रोत भाषा के बीज वाक्यों के (kernel sentences) धरातल पर होता है। इसमें अनुवादक सतही संरचना के निर्माण के पीछे भूमिका निभाने वाले बीज वाक्यों की खोज करता है और फिर सतही संरचना को बीज वाक्यों में अन्तरित करता है। इसके बाद स्रोत भाषा के बीज वाक्यों को हेतु भाषा के बीज वाक्यों द्वारा प्रतिस्थापित करता है। यह प्रतिस्थापन अन्तरण है। तत्पश्चात् वह हेतु भाषा के बीज वाक्यों को स्रोत भाषा की सतही संरचना के सामानान्तर हेतु भाषा की सतही संरचना में बदलता है। यह पुनर्रचना या पुनर्गठन की स्थिति है।

इस परिकल्पना का आधार यह है कि किन्हीं दो भाषाओं की सतही स्तर की संरचनाएं एक-दूसरे से काफी भिन्न होती हैं और भिन्न संरचनाओं का प्रत्यक्ष अन्तरण सुकर नहीं होता। इस प्रकार अनुवाद की प्रक्रिया स्रोत भाषा की सतही संरचनाओं से स्रोत भाषा की बीज संरचनाओं तक, स्रोत भाषा की बीज संरचनाओं से हेतु भाषा की बीज संरचनाओं तक और फिर हेतु भाषा की बीज संरचनाओं से हेतु भाषा की सतही संरचनाओं तक चलती है।

इस परिकल्पना में यह कमी महसूस होती है कि इसके अनुसार अनुवादक आशय अथवा कथ्य की इकाइयों का विश्लेषण एवं निर्धारण किए बिना ही सतही संरचनाओं को बीज संरचनाओं में विश्लेपित करेगा, जबकि अनुभव बताता है कि अनुवाद-प्रक्रिया का प्रथम चरण स्रोत भाषा की पाठ सामग्री को गहरे स्तर तक विश्लेषित करके आशय की इकाइयां निर्धारित करना है।

इसी प्रकार इस परिकल्पना के अनुसार स्त्रोत भाषा की सतही संरचनाओं को स्त्रोत भाषा की बीज संरचनाओं में विश्लेपित किया जाता है और फिर उनको हेतु भाषा की बीज संरचनाओं में अन्तरित किया जाता है। हेतु भाषा की बीज संरचनाओं की अनुवादक स्त्रोत भाषा की सतही संरचनाओं के संगत हेतु भाषा में पुनर्रचना करता है, किन्तु इन पुनर्रचित रचनाओं को अनुवाद का रूप देने से पहले वह इनकी गहरे स्तर पर कथ्य की समानान्तर इकाइयों से तुलना करता है और तब उन्हें अनुवाद का रूप देता है।

कई बार स्रोत भाषा की सतही संरचना बीज संरचनावत ही होती है, या स्रोत भाषा की एक या एक से अधिक संरचनाओं के आशय को क्रमशः हेतु भाषा की एक से अधिक या एक ही संरचना के आशय में अभिव्यक्त करना होता है। अतः ऐसी सभी स्थितियों में स्रोत भाषा के बीज वाक्यों का सीधे हेतु भाषा के बीज वाक्यों में अन्तरण न करके पहले आशय का विश्लेषण करना होता है, जिसके लिए अनुवादक को गहरे स्तर (deep structure) तक जाना पड़ता है, जहां भाव रहता है। यह स्तर वस्तुतः बीज संरचना की अंकुरण भूमि होती है। यह भाव सर्वदेशीय (हर स्थान पर एक जैसा) और भाषामुक्त होता है। इसलिए इसे किसी भी भाषा में मूर्त रूप दिया जा सकता है।

जहां स्रोत भाषा की बीज संरचनाओं का हेतु भाषा की बीज संरचनाओं में अन्तरण एक प्रकार की समानान्तर प्रक्रिया है, वहां स्रोत भाषा की संरचनाओं का गहरे स्तर तक विश्लेषण करके उससे प्राप्त सर्वदेशीय भाव को हेतु भाषा की बीज संरचनाओं के रूप में नया कलेवर देना एक श्रमसाध्य कार्य है। अनुवाद के मुख्य उद्देश्य—भाव को बनाए रखना— की भी तब तक सटीक रक्षा नहीं की जा सकती, जब तक पाठ सामग्री के आशय की इकाइयों का निर्धारण नहीं किया जाता, अर्थात् भाव स्तर तक नहीं पहुंचा जाता। अतः यदि भाव का ग्रहण सटीक होगा, तो उसका सम्प्रेषण भी स्टीक होगा और यदि भाव के संगत हेतु भाषा के बीज वाक्यों की परिकल्पना होगी तो उसकी सतही संरचनाएं भी भाव के संगत ही होंगी।

3. अनुवाद के प्रकार

अनुवाद की प्रकृति और प्रक्रिया के बाद अब हम अनुवाद के प्रकारों पर चर्चा करेंगे। कहने की आवश्यकता नहीं कि हर विषय का चिन्तन और मनन बढ़ने के साथ-साथ उसके अनुप्रयोग की भिन्न-भिन्न शाखाओं का विकास होता जाता है। दूसरे शब्दों में एक ही विषय के कई भाग हो जाते हैं, जैसे इंजीनियरी में यांत्रिक इंजीनियरी, सिविल इंजीनियरी, विद्युत इंजीनियरी। इसी प्रकार एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद करते समय सदा एक ही प्रकार के अनुवाद से काम नहीं चल सकता। कभी भाव की रक्षा के लिए, कभी किसी शब्द विशेष में निहित संकल्पना की रक्षा के लिए और कभी किसी अन्य आवश्यकतावश अनुवाद की अलग-अलग विधियों का सहारा लेना पड़ता है। किसी भी विषय का आवश्यकता के अनरूप इस प्रकार
अलग-अलग व्यवस्थाओं में बंट जाना सुव्यवस्थित विकास का संकेत है। समय के साथ-साथ अनुवाद की भी अलग-अलग रीतियों का विकास हो चुका है, जिससे इस कार्य के निष्पादन में सरलता और सहजता आई है। हर वह प्रयास, जिसमें एक भाषा की सामग्री को दूसरी भाषा की सामग्री में बदला जाए, अनुवाद कहलाता है। वह सामग्री लिखित भी हो सकती है, मौखिक भी। इस प्रकार मोटे तौर पर अनुवाद दो प्रकार का होता है-- लिखित पाठ का अनुवाद और मौखिक पाठ का अनुवाद, जिसे अनुवचन भी कहते हैं। लिखित पाठ अनुवादक के समक्ष एक ही वाक्य से लेकर एक पृष्ठ या पूरी पुस्तक के रूप में भी हो सकता है। इसके अनुवाद के समय अनुवादक के पास पर्याप्त समय होता है। इसलिए इसमें वह स्रोत भाषा के तीनों आयामों—आशय, अभिव्यक्ति और सामाजिक संदर्भ का गहरे स्तर तक विश्लेषण करके इन्हें स्रोत भाषा के संगत आयामों में बेहतर ढंग से अंतरित कर सकता है, जबकि अनुवचन में केवल आशय की ही रक्षा की जा सकती है। अनुवचन तत्काल करना पड़ता है और केवल एक-एक वाक्य का ही किया जाता है। इसमें सोचने-समझने का समय नहीं होता और जैसा आए, वैसा ही कर दिया जाता है।

लिखित पाठ का अनुवाद आगे कई प्रकार का होता है:

1. अन्तः भाषिक अनुवाद (Intralingual translation)

इस प्रकार का अनुवाद मूलतः एक ही भाषा-सापेक्ष होता है। किसी भाषा की एक बोली की स्रोत सामग्री का उसी भाषा की दूसरी बोली या उसी भाषा में या विलोम अनुवाद तथा किसी भाषा की एक साहित्यिक विधा (यथा नाटक) का उसी भाषा की दूसरी विधा (यथा कहानी) में अनुवाद अंतः भाषिक अनुवाद कहलाता है। कहने की आवश्यकता नहीं कि अंतः भाषिक अनुवादक को सम्बद्ध भाषा, बोली या बोलियों तथा विधा, जैसी भी स्थिति हो, का अच्छा ज्ञाता होना चाहिए।

2. अन्तर्भाषिक अनुवाद Inter-lingual translation)

इस प्रकार का अनुवाद किसी एक देशी भाषा की सामग्री से दूसरी देशी भाषा या उसकी बोली की सामग्री में अथवा विलोमतः अथवा किसी देशी भाषा या उसकी बोली की सामग्री का विदेशी भाषा की सामग्री में या विलोमतः किया जाता है। यह चार प्रकार का होता है:

(क) पूर्ण अनुवाद (Full Translation)

जब स्रोत भाषा के पूरे पाठ की समस्त इकाइयों का हेतु भाषा में अनुवाद किया जाए, तो वह पूर्ण अनुवाद कहलाता है, जैसे राम विद्यालय जा रहा है Ram is going to school. स्रोत भाषा की किसी पाठ सामग्री की समस्त इकाइयों से भाव यहां परिमाणसूचक और समस्त शब्दों के अनुवाद की ओर संकेत करता है। गुणात्मक रूप से पूर्ण अनुवाद में आशय, अभिव्यक्ति और सामाजिक सन्दर्भ—इन तीन भाषिक आयामों का भी हेतु भाषा के संगत आयामों में अन्तरण करना होता है। उदाहरणार्थ भाव के अनुरक्षण की अनिवार्यता से आशय और व्याकरणिक संरचना के अनुरक्षण की अनिवार्यता से अभिव्यक्ति की रक्षा होती है। समाज-संदर्भ को तो बनाए रखना ही चाहिए, हालांकि इसके अनुरक्षण में न्यूनाधिकता तो मिलती ही रहती है। चूंकि पूर्ण अनुवाद में स्रोत भाषा के पूरे पाठ की समस्त इकाइयों का हेतु भाषा में अन्तरण करना होता है, अतः पूर्ण अनुवाद कोई-कोई ही मिलता है।

(ख) आंशिक अनुवाद (Partial translation)

जब स्रोत भाषा के पूरे पाठ की समस्त इकाइयों अर्थात् शब्दों का हेतु भाषा में अनुवाद न किया जाए, तो वह आंशिक अनुवाद होता है, जैसे राम विद्यालय जा रहा है—Ram is going to vidyalaya यहां 'विद्यालय' शब्द का अनुवाद नहीं हुआ।

(ग) समग्र अनुवाद (Total Translation)

आम तौर से हर पाठ के चार स्तर होते हैं, जैसे लेखिमीय स्तर, ध्वन्यात्मक स्तर, शाब्दिक स्तर, और व्याकरणिक रचना स्तर। जब स्रोत भाषा की पाठ सामग्री में निहित इन चारों स्तरों का अनुवाद किया जाए, तो वह अनुवाद समग्र अनुवाद कहलाता है। प्रायः शाब्दिक और व्याकरणिक रचना स्तरों का ही अनुवाद होता है। इसलिए सामान्य अनुवाद समग्र अनुवाद की कोटि में नहीं आता।

(घ) परिसीमित अनुवाद (Restricted translation)

जब स्रोत भाषा की पाठ सामग्री में निहित उपर्युक्त चारों स्तरों की बजाए केवल एक या कुछ स्तरों का ही अनुवाद किया जाए, तो वह अनुवाद परिसीमित अनुवाद होता है। उदाहरणार्थ--राम आम खाता है। इस वाक्य का भिन्न-भिन्न स्तरों का अनुवाद देखा जा सकता है:

(1) लेखिनीय स्तर का अनुवाद--इस प्रकार के अनुवाद में लेखिम को रचना का आधार मान कर एक-एक लेखिम (Grapheme) का अनुवाद होता है, शब्द या वाक्य का नहीं। इसलिए यह लेखिम स्तर का अनुवाद कहलाता है। लेखिमीय स्तर के इस अनुवाद को transcription कहते हैं। यह अनुवाद स्वर और व्यंजन स्वनों के आधार पर किया जाता है। इसमें एक लिपि के लेखिमों को दूसरी लिपि के लेखिमों में आई०पी०ए० वर्णमाला के अनुसार परिवर्तित कर दिया जाता है। जैसे ram am khata hai. यह अनुवाद लिप्यंतरण (transliteration) से भिन्न होता है, जो इस प्रकार होगा--Ram am khata hai. लिप्यंतरण में लिपि के लेखिमों की बजाए उसमें बद्ध शब्दों को दूसरी लिपि के शब्दों में उनके औच्चारणिक स्वरूप की रक्षा करते हुए लिख दिया जाता है।

(2) ध्वन्यात्मक स्तर का अनुवाद--लेखिमीय स्तर के अनुवाद में एक लिपि के लेखिम का जो रूप दूसरी लिपि के लेखिम के रूप में होता है, वैसा ही उसे लिख दिया जाता है। लेखिम का जो औच्चारणिक स्वरूप वाक् में होता है, उसी के अनुसार उसे दूसरी लिपि में लिख देना ध्वन्यात्मक स्तर का अनुवाद कहलाता है। इस अनुवाद में लेखिमों का आईपीए वर्णमाला के अनुसार

परिवर्तन न करके उनका हेतु भाषा की वर्णावली में परिवर्तन किया जाता है। इस अनुवाद में भी एक भाषा के शब्दों को दूसरी भाषा के शब्दों में नहीं लिखा जाता, यथा ram am khata ai.

(3) शब्द स्तर का अनुवाद—जब वाक्य के किसी एक शब्द या कुछ शब्दों को ही दूसरी भाषा के शब्दों में लिख दिया जाता है, तो वह अनुवाद शब्द स्तर का अनुवाद कहलाता है, यथा Ram mango khata hai.

(4) व्याकरणिक स्तर का अनुवाद—इस अनुवाद में एक भाषा की व्याकरणिक रचना का दूसरी भाषा की व्याकरणिक रचना में अन्तरण कर दिया जाता है और शेष शब्दों का अनुवाद न करके उनका लिप्यंतरण कर दिया जाता है, यथा Ram eats am (not mango).

अलग-अलग स्तरों के इन अनुवादों की अलग-अलग जगह आवश्यकता पड़ती है। जैसे किसी ऐसे पुराने पाठ का अनुवाद करना पड़े, जिसकी भाषा की जानकारी केवल शब्दकोश से ही हो सके, तो उस पाठ का अनुवाद करते समय शब्द के लिए शब्द ही रखा जा सकता है या केवल व्याकरणिक रचना का अनुवाद किया जा सकता है, शब्दों को छोड़ दिया जाता है।

(5) शब्द-दर-शब्द अनुवाद (word for word translation)

स्रोत भाषा के किसी पाठ के केवल शब्दों का हेतु भाषा के शब्दों में अनुवाद शब्द-दर-शब्द अनुवाद कहलाता है। इसमें व्याकरणिक रचना को छोड़ दिया जाता है, यथा--Ram mango eat is. शब्द-दर-शब्द अनुवाद परिसीमित अनुवाद से भिन्न होता है, क्योंकि शब्द स्तर के अनुवाद में समस्त क्रियापद का शाब्दिक अथवा व्याकरणिक अनुवाद न करके उसे स्रोत भाषा में ही ज्यों का त्यों लिख दिया जाता है, जबकि शब्द-दर-शब्द अनुवाद में प्रत्येक शब्द का अनुवाद अवश्य किया जाता है। दोनों अनुवादों में व्याकरणिक रचना का अनुवाद नहीं किया जाता और न्यूनतम शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

(6) शाब्दिक अनुवाद (Literal translation)

शाब्दिक अनुवाद शब्द-दर-शब्द अनुवाद के आधार पर होता है। शब्द-दर-शब्द अनुवाद में स्रोत भाषा की पाठ सामग्री के लिए हेतु भाषा में व्याकरणिक सम्बन्ध-विहीन जो शब्द निश्चित किए जाते है, उन्हें हेतु भाषा की व्याकरणिक व्यवस्थाबद्ध कर दिया जाता है। उसमें स्रोत भाषा की पाठ सामग्री के किन्हीं शब्दों को छोड़ दिया जाता है अथवा कुछ ऐसे शब्द इस्तेमाल कर लिए जाते हैं, जो स्रोत भाषा के पाठ में नहीं होते. यथा लड़का आम खाता (है)-- (A) boy eats (a) mango.

शाब्दिक अनुवाद म स्रोत भाषा के पाठ के शाब्दिक भाव (व्याकरणिक भाव नहीं) को हेतु भाषा के पाठ में भी शाब्दिक स्तर पर बनाए रखा जाता है, यथा-- It rains cats and dogs- बिल्लियां और कुत्ते बरस रहे है।

इस अनुवाद में प्रत्येक शब्द के लिए व्याकरणिक व्यवस्थानुसार रखा गया है। एक-एक शब्द के रूप में (पद या लोकोक्ति के रूप में नहीं) जो भाव cats and dogs में निहित है, उसे हिन्दी के वाक्य में इस प्रकार रखा जा सकता है-- मूसलाधार वर्षा हो रही है। इस स्थिति में यह मुक्त अथवा भावानुवाद कहलाएगा। □

पृष्ठ 11 का शेष

प्रभाख्यान, मुल्लादाउद का चंदायन, अब्दुल रहमान का संदेशरासक, विद्यापति की पदावली, गुजरात के नरसी मेहता, दादूदयाल, प्राणनाथ, आदि की रचनाओं ने हिंदी को सार्वदेशीय राष्ट्रीय रूप दिया। इसी प्रकार कर्नाटक के अनेक हिंदी कवियों, जैसे-महीपति, कृष्णदास, लक्ष्मीपति तथा बीजापुर के अली आदिल-शाह की रचनाओं ने हिंदी को सुदृढ़ किया।[10]

आज अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत की पहचान हिंदी में होने लगी है। भारत के अतिरिक्त आज मारिशस, फिजी, सूरीनाम, गुयाना, मोज़ांबीक, अंगोला, युगांडा, सिंगापुर, मलाया, थाईलैंड तथा दक्षिण अफ्रीका आदि के भारतीयों ने हिंदी को एक अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य दिया। आज अपने देश में हिंदी लगभग वही भूमिका निभा रही है जो कभी बहुत पहले संस्कृत ने भारत की एकात्मक संस्कृति की रचना के लिए की थी। संस्कृत ने जिस प्रकार अपनी क्षेत्रीय सीमाओं को पार कर संपूर्ण देश की विचारधाराओं को आत्मसात करते हुए सर्वस्वीकृत भारतीयता की पहचान बनाई थी, उसी प्रकार आज हिंदी भी अपनी मूल सीमाओं को लांघकर सर्वदेशीय रूप में भारतीयता की प्रतीक बन रही है। हिंदी के अतिरिक्त इस देश की किसी अन्य भाषा का इतना बड़ा विस्तार-क्षेत्र नहीं है। आज हिंदी किसी क्षेत्र, धर्म अथवा जाति की धरोहर नहीं रही, वरन् वह भारतीयता के अभिव्यक्ति का माध्यम बन गई है।

संदर्भ

(1) एस॰ लेवी : प्रिआर्यन एण्ड प्रिद्रिविडियन इन इंडिया (इन प्रो॰ बागची-प्रिआर्यन एण्ड प्रिद्रिविल डियन), पृ॰ 66-123.

(2) डी॰पी॰ पट्टनायक : लैंग्विज, एडुकेशन एण्ड कल्चर, मैसूर, 1991, पृ॰ 274.

(3) जी॰पी॰ श्रीवास्तव : हिंदी के मानकीकरण की समस्याएं, परिषद् पत्रिका, वर्ष 13, अंक 3, 1973.

(4) त्रिलोकी नाथ सिंह : भाषा, समाज और संस्कृति (भाषावैज्ञालनिक निबंध), लखनऊ, 1988, पृ॰ 46.

(5) एम॰बी॰एमन्यू : इंडिया ऐज़ ए लिंग्विस्टिक एरिआ, लैंग्विज, खंड 31, पृ॰ 42—63

(6) एस॰के॰ चटर्जी : इंडोआर्यन एण्ड हिंदी, द्वितीय संस्करण, कलकत्ता, 1960, पृ॰ 2

(7) किशोरीदास वाजपेयी : हिंदी शब्दानुशासन, वाराणसी, सं॰ 2014, पृ॰ 493

(8) गोपाल शर्मा : हिंदी और सामासिक संस्कृति (रवीन्द्रल नाथ श्रीवास्तव तथा रमानाथ सहाय-हिंदी का सामाजिक संदर्भ), आगरा, 1976, पृ॰ 238

(9) विश्वनाथ दिनकर नरवणे : भारतीय कहावत संग्रह, प्रथम खंड, 1978, पृ॰ 1—13

(10) देवेन्द्र शुक्ल : हिंदी भाषा और साहित्य - अस्मिता की अन्तर्यात्रा, (केन्द्रीय हिंदी संस्थान रजत जंयती वर्ष, 1991 ग्रंथ), आगरा, 1976, पृ॰ 22.

राजभाषा-प्रबंधन की आवश्यकता

—डॉ॰ किरन पाल सिंह तेवतिया

प्रबंधन:—

राजभाषा-प्रबंधन पर विचार करने से पूर्व यह जानना अति आवश्यक है कि यहां प्रबंधन का क्या अर्थ है? प्रबंधन शब्द अंग्रेज़ी शब्द 'मैनेजमेन्ट' का पर्याय है। मैनेजमेन्ट अथवा प्रबंधन के मानक व प्रचलित अर्थ और स्वरूप निश्चित हैं। इनमें व्यवस्था व आयोजन प्रमुख तथा प्रभावशाली कारक हैं। राजभाषा के संदर्भ में व्यवस्था तथा आयोजन को इस प्रकार निरूपित किया जा सकता है —

व्यवस्था:— सरकार द्वारा निर्धारित नियमों तथा आदेशों के अनुसार प्रशासनिक कार्यों को करना अथवा उनके सुचारु रूप से संचालन की व्यवस्था करना।

आयोजन:— ऊपर निर्दिष्ट कार्यों की ओर प्रेरित करने के लिए समारोहों अथवा सम्मेलनों का आयोजन करना। इन दोनों परिभाषाओं को भलीभांति परखने के पश्चात् यह बात आसानी से समझ में आ जाती है कि राजभाषा के प्रसार, प्रचार एवं उसके प्रायोगिक स्वरूप को निखारने व संवारने के लिए प्रबंधन के इन दोनों ही रूपों की विशेष आवश्यकता है, अर्थात् राजभाषा के प्रचलित व व्यावहारिक रूप में भाषा, वर्तनी तथा उच्चारण में एकरूपता उत्पन्न करके मानक रूप प्रदान करना तथा भाषा के इस रूप को कार्मिकों में प्रचलित कराने के लिए सुरुचिपूर्ण और प्रोत्साहित करने वाले हिन्दी-समारोहों तथा कार्यशालाओं आदि का आयोजन करना। यह बात सर्वविदित है कि इस प्रकार के अनेक आयोजन प्रतिवर्ष सरकारी तथा गैर-सरकारी संस्थाओं द्वारा सफलतापूर्वक आयोजित किए जा रहे हैं।

राजभाषा:— प्रबंधन की व्याख्या करने के पश्चात् उस मूल तत्व पर भी एक दृष्टि डालना आवश्यक हो जाता है जिसके लिए इसकी आवश्यकता है, अर्थात् राजभाषा हिन्दी। आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में हिन्दी एक प्रमुख भाषा है जो प्रसार एवं व्यवहार की दृष्टि से आज विश्व में तीसरे तथा भारत में पहले स्थान पर है। यही हिन्दी अपने विकासक्रम में व्यापकता, सरलता तथा शब्द-भण्डार के आधार पर साहित्यिक भाषा, संपर्क-भाषा तथा राष्ट्रभाषा के साथ-साथ आज राजभाषा के पद को भी सुशोभित कर रही है। राजभाषा के रूप में हिन्दी ने अपने दायित्व का निर्वाह संविधान लागू होने के पश्चात् से ही प्रारंभ कर दिया था। सामान्य रूप में राजभाषा, राजा या शासक अथवा राजकाज की भाषा का आभास देती है। डॉ॰ उद्यनारायण दुबे के अनुसार "किसी देश अथवा राष्ट्र में प्रशासनिक व्यवस्था के लिए जिस भाषा का प्रयोग किया जाता है उसे राजभाषा कहते हैं"[2]। इस भाषा के माध्यम से ही केन्द्रीय और प्रादेशिक सरकारें पत्र-व्यवहार, राजकार्य तथा अन्य लिखा-पढ़ी के कार्यों का संपादन करती हैं। भारत-सरकार ने भी अपने इन्हीं कार्यों को निष्पादित करने के लिए हिन्दी को राजभाषा के रूप में अपनाया।

राजभाषा का क्षेत्र:— सरकार ने राजभाषा के रूप में हिन्दी को संवैधानिक रूप से चुन लिया तो यह देखना भी आवश्यक हो जाता है कि इसका विस्तार अथवा कार्यक्षेत्र कहां तक फैला है। चूंकि राजभाषा सरकार के कार्यालयों की भाषा है, अतः देश और विदेशों में जहां तक सरकारी कार्यालय, सरकारी प्रतिष्ठान तथा सरकारी कर्मचारी फैले हुए हैं, वहीं तक राजभाषा का क्षेत्र भी फैला हुआ है। प्रशासन, कानून-व्यवस्था, कृषि, यातायात, सुरक्षा, रेल, डाक-तार, संचार-प्रणाली, विभिन्न सरकारी उद्योग, शिक्षा, वैज्ञानिक अनुसंधान आदि ऐसे अनेक विभाग तथा मंत्रालय हैं जो सरकार के अधीन हैं। इन सभी विभागों से संबंधित कार्यों के अनुपालन के लिए उचित आदेश-निदेश राजभाषा में ही दिए जाते हैं। यहां ऐसे ही कुछ प्रमुख विभागों पर प्रकाश डाला जा रहा है—

प्रशासन:— प्रशासन सरकार का सबसे प्रमुख अंग है। देश के अन्दर सभी प्रकार की गतिविधियों को नियंत्रित करने, कानून-व्यवस्था को बनाए रखने, जनता के अधिकारों और उसकी जान-माल की सुरक्षा करने आदि कार्य इसके अंतर्गत ही आते हैं। आज प्रशासन केन्द्र से चल कर गांव तक पहुंच गया है। सरकार की नीतियों को जनता तक पहुंचाने और जनता की कठिनाइयों को सरकार तक पहुंचाने का माध्यम एकमात्र राजभाषा ही है। एक आम आदमी जनभाषा को ही समझता है और हमारी जनभाषा, हमारे जनतंत्र की भाषा हिन्दी ही है।

वैज्ञानिक अनुसंधान तथा प्रौद्योगिकी विकास:— देश में जितने भी वैज्ञानिक अनुसंधान हुए हैं या हो रहे हैं, वे सब जनता की भलाई के लिए ही हैं। अतः इन अनुसंधानों को जनता तक पहुंचाने के लिए एक सरल और सर्वमान्य भाषा के सहारे की आवश्यकता होती है, तभी जनता इसका पूरा-पूरा लाभ उठा सकती है। विदेशों से आयातित आधुनिक प्रौद्योगिकी तथा व्यावसायिक तकनीक, विभिन्न प्रकार के यंत्र-उपकरण, उन्नत बीज और रसायनों आदि के परिज्ञान की भाषा यद्यपि अंगरेज़ी ही है, तथापि इन सबकी पहचान, उपयोग और प्रयोग इनके नामों सहित हिन्दी में रूपांतरित करके जनता तक पहुंचाए जा रहे हैं। जहां एक और बड़े-बड़े उद्योगों को चलाने के लिए श्रमिकों की आवश्यकता होती है वहीं दूसरी ओर छोटे-छोटे उद्योगों के विकास के लिए शिक्षित प्रबंधकों की। श्रमिक अंगरेज़ी नहीं जानते। अतः श्रमिकों, प्रबंधकों तथा उद्योगपतियों में सही तारतम्य बनाए रखने, आपसी संबंधों को मधुर बनाने और सभी कार्यों को सुचारु रूप से चलाने में भाषा का विशेष महत्व है और वह भाषा कोई और नहीं, हिन्दी ही है।

शिक्षा तथा न्यायिक प्रक्रिया:— आज देश में विश्वविद्यालय स्तर तक लगभग सभी साहित्यिक तथा वैज्ञानिक विभागों का पठन-पाठन हिन्दी-माध्यम के द्वारा हो रहा है। हिन्दी केवल हिन्दी भाषी प्रदेशों में ही नहीं बल्कि अहिन्दी भाषी प्रदेशों के शिक्षण-संस्थानों में भी प्रवेश पा गई है। सन् 1988 के आंकड़ों के अनुसार भारत से बाहर "विश्व के 31 देशों के 110 विश्वविद्यालयों में स्नातक-परास्नातक एवं शोध स्तर तक

हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन हो रहा"[3] था। इण्डियन इंस्टीट्यूट ऑफ बिज़नेस मैनेजमेन्ट पटना में, 7 सितंबर, 1984 से डेढ़-वर्षीय कम्प्यूटर अनुप्रयोगों पर स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम हिन्दी माध्यम से चलाया जा रहा है जो वैज्ञानिक शिक्षा के क्षेत्र में एक बड़ी उपलब्धि है। चिकित्सा जैसे क्षेत्र में, जहां ज्ञानार्जन का संपूर्ण पाठ्यक्रम व माध्यम अंगरेज़ी ही है, कई चिकित्सा-शोधार्थियों ने स्नातकोत्तर-स्तर पर हिन्दी में शोध-प्रबंध प्रस्तुत किए हैं। सन् 1987 में "एस०एन० मैडिकल कालेज के एक छात्र मुनीश्वर गुप्ता ने हिन्दी में शोध-प्रबंध लिखकर आगरा विश्वविद्यालय से एम०डी० की उपाधि प्राप्त की। हिन्दी भाषा में एम० डी० के लिए लिखा जाने वाला यह पहला शोध-ग्रंथ है।"[4]।

उत्तर भारत के हिन्दी भाषी प्रदेशों के सभी न्यायालयों में ज़िला-स्तर तक न्याय की प्रक्रिया का माध्यम हिन्दी ही है। इन प्रदेशों के विश्वविद्यालयों में विधि के अध्ययन-अध्यापन में भी हिन्दी का ही प्रयोग हो रहा है। व्यावहारिक रूप में, यद्यपि "सभी संघ कानूनों, अधिनियमों का हिन्दी अनुवाद किया जा चुका है"[5], उच्च न्यायालयों के निर्णयों की भाषा अभी भी अंगरेज़ी ही है। ऐसा शायद समस्त देश के उच्च न्यायालयों द्वारा दिए ज़ा रहे निर्णयों को ध्यान में रखकर करना पड़ रहा है।

राजभाषा का प्रायोगिक स्वरूप:— यह तो विदित हो गया कि राजभाषा का प्रचलन सरकार के सभी विभागों में हो रहा है, पर यह जानना अभी शेष है कि वह किस रूप में प्रयुक्त हो रही है; अर्थात् उस भाषा का स्वरूप क्या है? राजभाषा का जो रूप आज हमारे सामने है वह कुछ वर्षों का प्रतिफल नहीं है वरन् इसको इस अवस्था तक पहुंचने में सैंकड़ों वर्ष लग गए। स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात् ही हिन्दी को राजभाषा का स्थान दिया गया हो, ऐसा नहीं है, अपितु इससे पहले भी हिन्दी को यह गौरव प्राप्त था। आज से लगभग 800 वर्ष पूर्व राजभाषा हिन्दी स्वस्फूर्त थी, जबकि उस समय भारत पराधीन था। आज भारत स्वाधीन है, परन्तु हिन्दी को अपना वह न्यायोचित स्तर पाने के लिए संविधान का सहारा लेना पड़ रहा है। इस स्थिति के लिए जो परिस्थितियां उत्तरदायी हैं, वे सर्वविदित हैं; जिनका विवरण यहां देना अनावश्यक है।

राजभाषा के रूप में हिन्दी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि विस्तृत है और हमारा विवेच्य विषय सीमित है। अतः यहां इतिहास के पन्नों से राजभाषा हिन्दी के उस रूप को ही उठाना सार्थक होगा जिसका प्रभाव आज राजभाषा के प्रचलित रूप पर किसी न किसी रूप में स्पष्ट लक्षित हो रहा है।

ब्रिटिश कालीन स्वरूप:— मुसलमान शासकों ने दिल्ली पर अधिकार करने के साथ ही अपनी भाषा फ़ारसी को राजकाज की भाषा बनाना शुरू कर दिया था, परन्तु जनता की भाषा हिन्दी, जो इससे पूर्व प्रचलन में थी, को यथावत् बना रहने दिया गया। मुग़ल-सम्राट अकबर के दरबार की व्यवस्था का भार हिन्दू और मुसलमान, दोनों ही जाति के सामंतों और सरदारों पर निर्भर करता था। इसी सामंजस्य के अनुरूप हिन्दी और फ़ारसी का भी दरबार में साथ-साथ प्रयोग होता था। अतः दिल्ली-दरबार से जनता के लिए जो भी आदेश या फ़रमान निकलते थे उनकी भाषा फ़ारसी-मिश्रित हिन्दी तथा लिपि देवनागरी होती थी। राजभाषा का यही रूप अंगरेज़ शासकों को भी विरासत में मिला। अंगरेज़ भी अपनी भाषा अंगरेज़ी को राजकाज़ की भाषा बनाना चाहते थे, परंतु वे भाषा के नाम पर बहुमूल्य भारतीय साम्राज्य को खोना नहीं चाहते थे। अतः उन्होंने जनमानस की भावना को ध्यान में रखते हुए हिन्दी-हिन्दुस्तानी के पठन-पाठन के लिए एक तरफ़ तो सन् 1800 में फोर्ट-विलियम कालिज की स्थापना की और दूसरी तरफ़ फ़ारसी के प्रयोग को कम करके हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देना भी शुरू कर दिया, जैसा कि सन् 1836 में संयुक्त प्रान्त (आज का उत्तर प्रदेश) के सदर बोर्ड की तरफ़ से निकाले गए इन इश्तहारनामे से स्पष्ट होता है— "पच्छॉह के सदर बोर्ड के साहबों ने यह ध्यान दिया है कि कचहरी के सब काम फारसी जबान में लिखा पढ़ा होने से सब लोगों को बहुत हर्ज पड़ता है और बहुत कलप होता है, और जब कोई अपनी अर्ज़ी अपनी भाषा में लिख के सरकार में दाखिल करने पावे तो बड़ी बात होगी। सबको चैन आराम होगा। इसलिए हुक्म दिया गया है कि सन् 1244 की कुवार वदी प्रथम से जिसका जो मामला सदर बोर्ड में हो सो अपना-अपना सवाल अपनी हिन्दी बोली में और फ़ारसी कै नांगरी अच्छरन में लिख के दाखिल करे कि डाक पर भेजे और सवाल जै अच्छरन में लिखा हो तौने अच्छरन में और हिंदी बोली में उस पर हुक्म लिखा जायेगा। मिति 29 जुलाई सन् 1836 ई।"[6].

लेकिन धीरे-धीरे यह स्थिति बदलती गई और जब अंगरेज़ों ने अंगरेज़ी को रोज़ी-रोटी के साथ जोड़ दिया तो आम जनता का रूझान भी अंगरेज़ी की तरफ होता गया और इस तरह अंगरेज़ शासकों ने असंवैधानिक रूप से अंगरेज़ी को राजभाषा के रूप में ऐसा 'स्टिक' कर दिया कि स्वतंत्रता प्राप्ति के 48 वर्ष बाद भी हम इस 'स्टिकर' को खुरच कर उतार नहीं पा रहे हैं तथा परिस्थिति-वर्ष राजभाषा हिन्दी का 'लेबल' इस 'स्टिकर' के साथ ही लगाना पड़ रहा है।

वर्तमानस्वरूप:— यह एक ध्रुव सत्य है कि भाषा पर परिस्थितियों और शासन-पद्धतियों का प्रभाव पड़ता है। यह प्रभाव हमारी राजभाषा पर स्पष्ट लक्षित है। बदलती शासन-पद्धतियों और आयातित आधुनिक प्रौद्योगिकी के कारण हिन्दी में अरबी, फ़ारसी और अंगरेज़ी के अनेक ऐसे शब्दों का समावेश हो गया है कि इन्हें अब चाहते हुए भी निकाला नहीं जा सकता। वास्तविकता तो यह है कि निरंतर प्रयोग से ये शब्द इतने सरल और सहज लगने लगे हैं कि अब इनके प्रदत्त हिन्दी-पर्याय कठिन प्रतीत होते हैं। आज भारत सरकार के कार्यालयों में राजभाषा के जिस रूप का प्रचलन है, उसका एक उदाहरण विश्लेषण के लिए यहां दिया जा रहा है— "भारत सरकार की राजभाषा नीति के अनुरूप सरकारी कामकाज में हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने के लिए आयोग में काफी समय से विचार किया जाता रहा है। सदस्य (कार्मिक) की अध्यक्षता में दिनांक 28.9.88 को हुई आयोग की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक में यह निर्णय लिया गया कि अब से भविष्य में खरीदे जाने वाले टाइपराइटरों में कम से कम 25% टाइपराइटर हिन्दी में होने चाहिये। इसके साथ ही साथ भविष्य में खरीदे जाने वाले सभी इलैक्ट्रानिक टाइपराइटर केवल द्विभाषी होने चाहिए"[7]।

ऊपर दी गई पंक्तियां उस कार्यालय-आदेश का अंश हैं जो आयल एण्ड नेचुरल गैस-कारपोरेशन लिमिटेड के महाप्रबंधक (प्रशासन) द्वारा दिसंबर, 1988 में जारी किया गया। यद्यपि ऊपर दिए गए इन दोनों ही पत्रों की भाषा को मानक नहीं माना जा सकता, परंतु ये दोनों ही पत्र अपने-अपने समय की शासन पद्धतियों का प्रतिनिधित्व करते हैं। भाषा की दृष्टि से देखा जाए तो ओ०एन०जी०सी० के पत्र में हिन्दी के साथ-साथ संस्कृत, अरबी, फ़ारसी तथा अंग्रेजी के सरल व बहुप्रचलित शब्दों का प्रयोग किया गया है। पत्र में एक सहज प्रवाह तथा संप्रेषणीयता है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि आज प्रशासनिक हिन्दी का यही रूप सर्वमान्य व सर्वग्राही है। अतः शुद्ध हिन्दी के मोह में तत्सम शब्दावली का प्रयोग

करके इसे बोझिल और दुरूह न बनाया जाए, यह बेहतर है।

राजभाषा पर प्रभाव:— राजभाषा हिन्दी की प्रायोगिक स्थिति इतनी सरल, सहज, स्पष्ट और एकरूपता-युक्त नहीं है और इसीलिए सरकार के सभी कार्यालयों में आज हिन्दी के अलग-अलग रूप दिखाई पड़ते हैं। अनेक ऐसे कारक हैं जो इसके सर्वमान्य और सर्वस्वीकृत स्वरूप में बाधा उत्पन्न करते हैं। यहां ऐसे ही कुछ कारणों पर प्रकाश डाला जा रहा है—

राजभाषा-नीति:— आज सरकार की राजभाषा-नीति के नियम स्पष्ट व कठोर नहीं हैं। कार्मिक उनको जिस तरह से चाहें अपने अनुकूल बना लेते हैं, जबकि आज के मुकाबले ब्रिटिश-काल की भाषा-नीति अधिक स्पष्ट व जन स्वीकार्य प्रतीत होती है। ऊपर दिए गए सन् 1836 के पत्र के अंश 'सवाल जौन अच्छरन में लिखा हो तौने अच्छरन में और हिन्दी बोली में उस पर हुक्म लिखा जायगा' से स्पष्ट है कि जिस हिन्दी भाषा में आम आदमी अपना पत्र सरकार को लिखता है, सरकारी अधिकारी उसी हिन्दी भाषा में उस पर उचित कार्रवाई करने के लिए बाध्य है। आज स्थिति उससे एक दम भिन्न है। आज सरकारी कार्मिक हिन्दी में लिखे पत्र का उत्तर प्रायः अंगरेज़ी में ही देता है। राजभाषा हिन्दी में काम करने के नाम पर वह साफ़ कह देता है कि उसे हिन्दी नहीं आती और यदि बहुत हुआ तो वह ऐसे पत्र का उत्तर अंगरेज़ी में लिखकर, उस पर हिन्दी में हस्ताक्षर करके कह देता है कि राजभाषा-नियमों के अनुसार यह पत्र हिन्दी का माना जाएगा। यह कार्मिक की इच्छा पर निर्भर है कि वह राजभाषा नियमों का पालन करे या न करे।

ध्यातव्य है कि 'राजभाषा (संशोधन) अधिनियम, 1967' के द्वारा जिस द्विभाषिकता का जन्म हुआ, उससे अंगरेज़ी के व्यवहार को बढ़ावा मिला, हिन्दी को नहीं। 'हिन्दी राजभाषा और अंगरेज़ी सहभाषा' 'हिन्दी-अंगरेज़ी का साथ-साथ प्रयोग' 'हिन्दी-पत्र के साथ अंगरेज़ी-अनुवाद और अंगरेज़ी-पत्र के साथ हिन्दी-अनुवाद' जैसे वाक्यांशों के व्यावहारिक विश्लेषण अथवा परिणाम के आधार पर यदि यह कहा जाए कि सरकार की राजभाषा-नीति, अंगरेज़ी में काम और हिन्दी को प्रोत्साहन' में परिवर्तित हो गई है तो कोई अतिशयोक्ति न होगी। सरकार की नीति-निर्धारण का केन्द्र 'संसद्' के लगभग सभी कार्य अंगरेज़ी में ही संपन्न होते हैं और औपचारिकता निभाने के लिए उनमें से कुछ का हिन्दी-अनुवाद संसद् के पटल पर रख दिया जाता है। जब देश के सर्वोच्च सदन में ऐसा होता है तो कोई आश्चर्य नहीं कि सरकारी कार्यालयों में भी यही प्रक्रिया दोहराई जाए। चाणक्य-नीति भी यही कहती है कि 'यदि राजा धर्मात्मा हो तो प्रजा भी धार्मिष्ठ होती है, राजा यदि दुराचारी हो तो प्रजा भी वैसी ही होती है, क्योंकि प्रजा, राजा के अनुसार ही आचरण करती है, अर्थात् जैसा राजा वैसी ही प्रजा"[8]।

शीर्षस्थ-अधिकारी:— प्रशासन के प्रमुख पदों पर बैठे अधिकारियों के आचरण पर भी हिन्दी का प्रसार-प्रचार निर्भर करता है। स्वविवेक से उचित व समयानुकूल निर्णय लेकर ये प्रशासन को चुस्त व दुरुस्त बना सकते हैं। राजभाषा संबंधी आदेशों को अधिक प्रभावी ढंग से लागू करने में इनकी भूमिका बहुत महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि ये ही 'मैनेजमेन्ट' हैं और ये ही 'व्यवस्था' करने वाले। ये ही कार्मिकों को सुविधा और साधन प्रदान करने में सक्षम हैं। प्रशासनिक प्रधान जिस भाषा में रुचि लेता है, जिस भाषा में कार्य करता है, उसके अधीनस्थ कार्मिक भी उसी भाषा का प्रयोग करने लगते हैं। अतः उच्च-अधिकारियों का कर्त्तव्य है कि वह राजभाषा हिन्दी के पक्ष में निर्णय लेकर उसकी अभिवृद्धि में सहायक बनें।

प्रयोगकर्त्ता का दृष्टिकोण:— भाषा का प्रयोग मूलरूप से प्रयोगकर्त्ता पर ही निर्भर करता है और प्रयोगकर्त्ता के अनुरूप ही भाषा का स्वरूप बनता है। यह सब प्रयोगकर्त्ता की शैक्षणिक योग्यता, कार्य-क्षमता और भाषायी विविधता तथा मानसिकता पर आधारित होता है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि कार्मिक या प्रयोगकर्त्ता राजभाषा के प्रयोग में कितनी रूचि लेता है। सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए जहां एक ओर राजभाषा-नियमों व आदेशों का महत्व है वहीं दूसरी ओर कार्मिकों में राजभाषा के प्रति चेतना का जागरित करना भी नितांत आवश्यक है, क्योंकि चेतना जागरित हुए बिना लक्ष्यों की प्राप्ति संभव नहीं है। आज प्रश्न यह नहीं है कि प्रशासनिक भाषा के रूप में मानक हिन्दी का प्रयोग हो रहा है या नहीं, वरन् मुख्य प्रश्न यह है कि प्रशासनिक भाषा के रूप में हिन्दी के प्रयोग में निरंतर कितनी वृद्धि हो रही है, भले ही उसमें उर्दू अथवा अंगरेज़ी के आम प्रचलित शब्द ही क्यों न सम्मिलित हों। वैसे भी हिन्दी के साहित्यिक स्वरूप और प्रशासन की हिन्दी भाषा के स्वरूप में गहरा अंतर है। आज प्रशासन की भाषा आम बोलचाल की भाषा के अधिक निकट है। राजभाषा के इस वर्तमान् स्वरूप को यदि कोई सार्थक, मानक और रूचिकर बना सकता है तो वह है सरकारी कार्मिक। यदि सरकारी कर्मचारी सभी कार्यों में हिन्दी का प्रयोग करने लगें तो धीर-धीरे हिन्दी का यह राजभाषा-रूप अति रोचक और साहित्यिक बन सकता है, क्योंकि निरंतर प्रयोग से ही भाषा के स्वरूप में अपेक्षित परिवर्तन होते हैं।

पारिभाषिक शब्दावली:— प्रसिद्ध भाषा-शास्त्री डा. भोलानाथ तिवारी के मतानुसार "पारिभाषिक शब्द उन्हें कहते हैं जिनकी परिभाषा दी जा सकती है।"[9] आज प्रशासन, विज्ञान, प्रौद्योगिकी, कला, भौतिकी, रसायनशास्त्र आदि विषयों में अनेक साभिप्राय शब्द तकनीकी अर्थ में प्रयुक्त हो रहे हैं। इन शब्दों का प्रयोग अर्थ-विशेष के लिए होता है। पारिभाषिक शब्दावली दैनिक व्यवहार अथवा आम बोलचाल के लिए नहीं है। यह उनके लिए है जो ज्ञान के किसी एक क्षेत्र या विषय में प्रवीणता पाना चाहते हैं। आज के इस अति-वैज्ञानिक युग में विभिन्न शब्दों के ज्ञान का विकास और विस्तार पारिभाषिक शब्दावली पर निर्भर करता है क्योंकि नवीन आविष्कारों तथा तकनीकों का समुचित उपयोग सरल एवं सर्वग्रहय भाषा द्वारा ही संभव हो सकता है और उस भाषा का आधार है पारिभाषिक शब्दावली। अतः 'पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण में हमेशा इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि तथ्य अर्थ पर हावी रहे और अर्थ शब्द पर। प्रत्येक शब्द का अर्थ एक ही हो और वह सुनिश्चित हो, शब्द सरल तथा बोधगम्य होना चाहिए'[10]। यहां एक बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि कभी-कभी अर्थ की शुद्धता के लिए कुछ कठिन शब्दों को भी ग्रहण करना पड़ता है जो व्यवहार में आने पर स्वयं ही सरल लगने लगते हैं।

आज इस शब्दावली-निर्माण की प्रक्रिया में जहां हमने विदेशी, विशेष तौर पर अंगरेज़ी के शब्दों को यथावत् देवनागरी लिपि में अपना लिया है, वहीं अनेक विदेशी शब्दों को हिन्दी की ध्वनि तथा व्याकरण के अनुकूल परिवर्तित कर आत्मसात कर लिया है यथा एकेडमी से अकादमी, टेक्नीकल से तकनीकी, आदि।

पारिभाषिक शब्दावली में सरलता, शुद्धता, अर्थ-स्पष्टता तथा संप्रेषणीयता के साथ-साथ एकरूपता का होना भी अति आवश्यक है। प्रायः यह देखा गया है कि केन्द्र व राज्यों के बीच, एक राज्य से दूसरे राज्य के बीच अथवा केन्द्र या एक ही राज्य में अनेकार्थी शब्दों का प्रचलन

है। ऐसी अवस्था में एक राज्य से दूसरे राज्य अथवा केन्द्र से राज्यों में जाते ही अर्थ बदल जाता है। उदाहरणार्थ—फ़ेसवैल्यू का अर्थ केन्द्र में अंकित मूल्य, राजस्थान में प्रत्यक्ष मूल्य तथा बिहार में मुख्य मूल्य है। फ़िक्सेशन के अर्थ स्थिरीकरण, निर्धारण, निश्चयन तथा नियतन व्यवहार में लाए जा रहे हैं। जहां डिवीज़न का अर्थ मंडल, संभाग, प्रभाग तथा खण्ड प्रचलित हैं वहीं अनाफ़िशियल का अनौपचारिक, अशासकीय व ग़ैर-सरकारी। शब्दों के प्रयोग में विषय, परिस्थिति तथा काल पर विशेष ध्यान देना होता है। 'चेयरमैन' विधान-सभा में अध्यक्ष है तो विधान-परिषद् में सभापति। 'इंस्पेक्टर' शब्द अनेक स्थानों पर निरीक्षक है परंतु दारोगा वह तभी माना जाएगा जब उसके आगे या पीछे पुलिस लगाई जाएगी।

इन सब बिंदुओं पर ध्यान केन्द्रित करते हुए पूरे देश में एक ऐसी पारिभषिक शब्दावली का विकास और प्रयोग होना चाहिए जो प्रत्येक स्थान पर एक ही अर्थ की द्योतक हो क्योंकि इसका संबंध केवल प्रशासन से ही नहीं वरन् देश की आम जनता से भी जुड़ा है।

कार्मिक की अज्ञानता अथवा अधकचरा ज्ञान भी उच्चारण-दोष का एक मुख्य घटक है। लिप्यंतरण में, विशेपतौर पर अंग्रेजी के शब्दों को देवनागरी लिपि में लिखते समय अशुद्ध उच्चारण अथवा अल्पज्ञतावश ऐसे दोष दिखाई पड़ते हैं। इन सब बातों का प्रभाव भाषा पर पड़ता है, जिसका परिणाम यह होता है कि भाषा-प्रवाह में बाधा तो आती ही है साथ ही भाषा कठिन भी हो जाती है। अतः राजभाषा के स्वरुप को सुधारने तथा उसे सरल और बोधगम्य बनाने के लिए कार्मिकों को विशेषरूप से प्रशिक्षित करने की आवश्यकता है।

अनुवाद-प्रक्रिया:—यदि यह कहा जाए कि राजकाज की मूल भाषा अंगरेजी है और हिन्दी मात्र अनुवाद, औपचारिकता तथा आदेश पूर्ति की भाषा है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। आज़ादी के बाद अंग्रेजी के साथ राजभाषा के रूप में जिस हिन्दी का विकास हुआ उसमें अनुवाद की मात्रा अधिक रही और मौलिकता कम। अतः राजभाषा के रूप में वह स्वाभाविक प्रवाह तथा निखार नहीं आ पाया है जो एक मौलिक प्रयोग की भाषा में होता है।

अनुवाद एक कला है और अनुवादक कलावंत। लेखक एक भाषा का ज्ञाता हो सकता है परन्तु अनुवादक कम से कम दो भाषाओं का ज्ञाता होता है। यद्यपि अनुवाद-कार्य नीरस और कष्टसाध्य है फिर भी एक अच्छा अनुवादक इस कार्य को रोचक और मौलिकता के निकट लाने में सहायक हो सकता है। 'व्यवस्था संबंधी सीमाओं के बावजूद अनुवादक हिन्दी के स्वरूप को संवार-कर उसे ऐसा सहज, सुपाठ्य तथा विश्वसनीय बना सकता है जिससे वह मूल से भी अधिक ग्राह्य और मान्य बन सके'[13]।

अनुवादक के लिए यह आवश्यक है कि वह अनुवाद-विषय, स्रोत तथा लक्ष्य भाषा के ज्ञान के अतिरिक्त अपनी सहज-बुद्धि से भी कार्य करे तभी वह भाषा के बनावटीपन व दुर्बोधता से बच सकता है और सटीक तथा भावप्रद अनुवाद कर सकता है। भाषा को न्यायसंगत बनाने के लिए शब्दों और उनके पर्यायों का चयन देश, काल तथा पात्र को ध्यान में रखकर करना अधिक हितकर है। स्वीकृति (सैंक्शन), अनुमोदन (एप्रूवल), अनुमति (परमीशन) तथा सहमति (कंन्करेंस) जैसे मिलते जुलते शब्दों के प्रयोग पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। यहां एक महत्वपूर्ण बात ये भी है कि मुहावरों के अनुवाद एक विशेष सांचे में ढले होते है, अतः इनका अनुवाद करते समय अति सतर्कता की आवश्यकता है। Warm welcome का शुद्ध अनुवाद 'भव्य-स्वागत' होता है न कि 'गर्म-स्वागत'। इसी प्रकार Police is patrolling the roads का 'पुलिस सड़कों पर गश्त कर रही है' तो शुद्ध है पर यदि 'पुलिस सड़कों पर पैट्रोल छिड़क रही है' कर दिया तो केवल अनर्थ ही नहीं सर्वनाश हो जाएगा।

प्रायः यह देखा गया है कि अंग्रेजी-प्रारुप तैयार करने के लिए तो समय दिया जाता है पर उसका हिन्दी-अनुवाद अतिशीघ्र मांगा जाता है। यह एक गलत परंपरा है। अनुवाद-कार्य में मूल लेखन से कहीं अधिक समय की आवश्यकता होती है। यदि अनुवाद के लिए उचित समय न देकर शीघ्रता की जाएगी तो something is wrong in the bottom का 'कुछ तल में गलत है' ही होगा।

प्रबंधन कार्य:—प्रत्येक कार्य को करने के लिए कुछ मूलभूत आधार अथवा उद्देश्य होते हैं। बिना किसी लक्ष्य के कार्य करने में आशातीत परिणाम प्राप्त नहीं हो पाते। राजभाषा के विषय में भी यही एक मूल धारणा निहित है कि सरकार के सभी कार्य हिन्दी के माध्यम से ही निष्पादित किए जाएं। अब चूंकि यह सरकारी कार्मिकों द्वारा संपन्न किया जाता है और अधिकांश सरकारी कार्मिक परिस्थितिवश हिन्दी भाषा के प्रयोग में सिद्धहस्त नहीं होते हैं, अतः उन्हें भाषा तथा उसके प्रयोग करने की प्रक्रिया से परिचित कराने के लिए कुछ प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। प्रशिक्षण की इन पद्धतियों के परिणामस्वरुप अब काफी कार्य हिन्दी में होने लगा है, लेकिन विभिन्न भाषा-भाषी तथा भिन्न-भिन्न मानसिक स्थिति वाले कार्मिकों के कारण इस कार्यालयी हिन्दी का कोई मानक रूप उभरकर सामने नहीं आ पा रहा है। आज हिन्दी के इस बिखरे स्वरूप को व्यवस्थित करने की आवश्यकता महसूस होने लगी है। इसमें संदेह नहीं कि यह एक कठिन कार्य है, लेकिन निष्ठा, लगन और सतत् प्रयत्नों से इस कार्य को संपादित किया जा सकता है।

सर्वमान्य प्रायोगिक स्वरूप:—आज की ऐसी स्थिति में, जबकि राजभाषा 'भाषा की राजनीति' और 'राजनीति की भाषा' के बीच में फंसी हुई है, यह आशा करना व्यर्थ होगा कि राजभाषा हिन्दी को मानक-स्वरूप अथवा साहित्यिक रूप दिया जा सकता है। हां इतना अवश्य है कि उसका एक सर्वमान्य प्रायोगिक स्वरूप निर्धारित करने के प्रयत्न किए जा सकते हैं। इस कार्य के लिए विभिन्न भाषाओं के बहुप्रचलित और भारतीय जन-मानस द्वारा प्रयुक्त शब्दों को कार्यालयी भाषा में समाहित करना अति लाभदायक होगा। राजभाषा हिन्दी का सर्वग्राही रूप स्थापित करते समय इसका विशेष ध्यान रखना होगा कि भाषा सरल, सुस्पष्ट, बोधगम्य तथा प्रवाहमयी हो। "यदि हम शब्दों के विचार से, वाक्त रचना के विचार से तथा शैली के विचार से सावधानी के साथ ऐसी भाषा का प्रयोग करें जिसे समझने में लोगों को कठिनाई न हो तो ऐसी भाषा का तेजी से प्रसार भी होगा और धीरे-धीरे कार्यालयों में एक ऐसी हिन्दी का रूप उभर आएगा जिसमें बहुत ही सरल तरीके से लिखा पढ़ी हो सकेगी और किसी को कठिनाई न होगी"।

इस प्रकार जो हिन्दी का सर्वमान्य प्रायोगिक स्वरूप उभर कर सामने आएगा वह निश्चय ही 'आॅयल एण्ड नेचुरल गैस-कारपोरेशन' द्वारा प्रयुक्त पत्र से भिन्न नहीं होगा, क्योंकि देश के सभी कार्यालयों और कार्मिकों की स्थिति एक ही जैसी या समान स्तर की है। यहां एक बात पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है, और वह यह कि प्रशासनिक कार्यों और तकनीकी कार्यों की भाषा में अन्तर होना स्वाभाविक है। प्रशासनिक कार्यों की भाषा

का सर्वमान्य रूप निर्धारित करना उतना कठिन नहीं है जितना तकनीकी कार्यों की भाषा का, जिसमें कठिन और विदेशी भाषा के शब्दों को समाविष्ट करना एक आवश्यकता है।

मौलिक लेखन व शोध-कार्यों को बढ़ावा:—राजकीय भाषा का सर्वमान्य प्रायोगिक स्वरूप निर्धारित करने से एक ओर जहां सरकारी कार्मिकों में मौलिक लेखन, शोध-कार्यों तथा विभिन्न वैज्ञानिक विषयों पर पत्र-प्रस्तुतिकरण को प्रोत्साहन मिलेगा, वहीं दूसरी ओर इन बौद्धिक कार्यों के द्वारा कार्यालयी भाषा के मानक स्वरूप की प्राप्ति के लक्ष्य का मार्ग भी सरल हो जाएगा। आज पर्यावरण, स्वास्थ्य, वानिकी, उद्यान-कृषि, भूविज्ञान, खनन एवं धातुकर्म, अभियांत्रिकी, सैन्य-प्रशिक्षण कंप्यूटर आदि जैसे अनेक वैज्ञानिक और तकनीकी विषयों पर अनेक विद्वान सरकारी कार्मिक अपने लेखन से हिन्दी के राजभाषा रूप को निखारने व संवारने में प्रयत्नरत हैं। "द्रव नोदन प्रणाली (Liquid Propulsion Systems) अंतरिक्ष विज्ञान जैसे तकनीकी क्षेत्र में हिन्दी माध्यम से किया गया अभिनव प्रयास है। अकेला यही प्रयास यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है कि अवसर मिलने पर हिन्दी भाषा तकनीकी संकल्पनाओं को व्यक्त करने की दृष्टि से संचार की किसी भी तथाकथित समृद्ध भाषा के साथ टक्कर ले सकने में समर्थ है।"[15]

आज इस प्रकार के वैज्ञानिक लेखन में जो एक महत्वपूर्ण बात देखने को मिलती है वह है, हिन्दी के कम प्रचलित शब्दों के अंग्रेजी पर्याय जो कोष्ठकों में दिए जा रहे हैं। कभी कठिन व अप्रचलित हिन्दी शब्द कोष्ठकों में बंद हुआ करते थे, आज वे कोष्ठक से बाहर आते जा रहे हैं और उनका स्थान अंग्रेजी के शब्द लेते जा रहे हैं। यह पद्धति राजभाषा के स्वरूप को व्यवस्थित करने में एक प्रभावी कदम होगा। इसको अधिक प्रभावीरुप से प्रचलित करने की आवश्यकता है।

भाषायी समन्वय तथा कार्मिक सद्भाव: सरकारी कर्मचारी अलग-अलग स्थानों और विभिन्न भाषा-भाषी होने के बावजूद भी अपने उत्तदायित्वों से बंधे प्रशासनिक कार्यों को पूरा करने में एक दूसरे के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलते हैं। इस आपसी मेल-मिलाप से वे एक दूसरे के निकट आते हैं। और एक दूसरे की भाषा को समझने लगते हैं। इस प्रक्रिया में कुछ ऐसे शब्द प्रचलित हो जाते हैं जिन्हें सभी सरलता पूर्वक प्रयोग करने लगते हैं। इस भाषायी सामंजस्य से कार्मिकों में आपसी सद्भाव का वातावरण बन जाता है। भाषायी समन्वय और कार्मिक सद्भाव और कार्यालयी भाषा के प्रयोग में अभिवृद्धि के साथ-साथ भाषा में कर्मिक सुधार भी आने लगता है। एक सरल और सर्वमान्य भाषा के माध्यम से कार्मिकों की कार्य-क्षमता भी विकसित होती जाती है और इस प्रकार निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु कार्य-निष्पादन में अपेक्षित गति जाती है। जैसे-जैसे यह क्षमता बढ़ती जाती है वैसे-वैसे राजभाषा के रूप को व्यवस्थित करने में आसानी होती जाती है।

उपसंहार:—आज सरकारी कार्यालयों में राजभाषा हिन्दी का प्रयोग दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है। इस कार्य को सुचारुरूप से निष्पादित करने के लिए प्रचलित पद्धतियों में अपेक्षित सुधारों के साथ-साथ कुछ अन्य उपयोगी एवं रुचिकर कार्यक्रमों को भी विकसित करने की आवश्यकता है। आज हिन्दी के प्रसार-प्रचार के लिए लिखित माध्यमों के साथ-साथ मौखिक माध्यमों का भी उपयोग किया जा रहा है जो ज्ञानवर्द्धक और मनोरंजक भी होते हैं। मनोरंजन के स्तर पर भी यदि भाषा को स्वीकार कर लिया जाता है तो फिर उसका दैनिक जीवन में भी प्रयोग होने लगता है और धीरे-धीरे यह प्रक्रिया सरकारी कार्यों के निष्पादन में भी उतर आती है।

इस तथ्य को स्वीकारना ही होगा कि इससे पूर्व कार्यालयों में अंग्रेजी ही प्रयोग की जाती थी और यदि हिन्दी को उसके स्थान पर स्थापित करना है तब उसमें वे गुण तो विकसित करने ही होंगे जो एक आदर्श प्रशासनिक भाषा में होते हैं। यह कार्य इसलिए और भी कठिन हो जाता है क्योंकि अंग्रेजी अभी भी हिन्दी के साथ-साथ कार्यालयों में प्रयोग की जा रही है, अर्थात् द्विभाषिकता की स्थिति बनी हुई है। इस स्थिति में हिन्दी को दो कार्य मुख्य रूप से करने हैं— (i) स्वयं अपने आपको विकसित करके प्रायोगिक बनाना तथा (ii) उसे स्वयं को अंग्रेजी के समतुल्य या उससे अधिक सरल व उपयोगी सिद्ध करना। अर्थात् राजभाषा-प्रबंधन का महत्वपूर्ण पक्ष है संविधान द्वारा स्वीकृत हिन्दी का बिना हिचक के किया जाने वाला चयन, क्योंकि द्विभाषिकता की स्थिति हिन्दी के लिए घातक है।

यहां चयन की बात इसलिए उठाई गई है कि हिन्दी को उन सभी स्थानों पर स्थापित करना होगा जहां अंग्रेजी आज प्रयोग की जाती है। इसके लिए यह आवश्यक है कि उन सभी सुविधाओं और प्रावधानों, जो आज हमें उपलब्ध हैं, का हिन्दी के प्रगामी व प्रभावी प्रयोग के लिए उपयोग किया जाए। इससे हम एक ऐसा जनमत बनाने में सफल होंगे जो स्वेच्छा से हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्वीकार करके इसका प्रयोग करेगा। प्रशासन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका प्रशासनिक तंत्र की होती है। हमें उसमें धीरे-धीरे परिवर्तन करने होंगे जो हिन्दी के दीर्घकालीन हितों का संरक्षण कर सकें, क्योंकि अंततः प्रबंधन प्रशासन का ही दायित्व है।

प्रबंधन कार्य को और अधिक सरल व प्रभावी बनाने के लिए सरकारी कार्यालयों में हिन्दी-कार्यान्वयन के लिए उत्तरदायी हिन्दी-अनुभागों का पुनगर्ठन किया जाना अति आवश्यक होगा जिसकी प्रस्तावित रूपरेखा निम्नवत् होगी—

हिन्दी-विभाग

(क) प्रशासनिक खण्ड:

* राजभाषा-नीति-निर्धारण व सरकारी आदेशों का स्पष्टीकरण
* पदों का सर्जन तथा नियुक्ति व स्थानांतरण
* मानक-प्रपत्रों का विकास, प्रकाशन तथा वितरण
* यांत्रिक व अन्य सुविधाएं उपलब्ध कराना तथा कठिनाइयों का समाधान करना
* हिन्दी के प्रयोग को बढ़ाने के उपाय करना और कार्मिकों को प्रोत्साहन देना
* कार्य की समीक्षा—जांच बिन्दू निश्चित करना
* वार्षिक समारोह, कार्यशाला तथा राजभाषा-सम्मेलन कराना
* वित्तीय व्यवस्था करना आदि

(ख) अनुवाद-खण्ड:

* अनुवाद-प्रशिक्षण की व्यवस्था करना
* अनुवाद-कार्य
* टाइपिंग-कार्य

(ग) प्रशिक्षण-खण्ड:

* भाषा के सैद्धांतिक व व्यावहारिक प्रशिक्षण-कार्य की व्यवस्था कर
* टाइपिंग, आशुलिपि व अन्य यांत्रिक प्रशिक्षण तथा उसका अभ्या

शेष पृष्ठ 32 प

संस्कृत साहित्य का परिचयात्मक इतिहास (7)

काव्यशास्त्रीय वाङ्मय

—डॉ॰ शशि तिवारी

काव्यसौन्दर्य की परख करने वाले शास्त्र का नाम 'काव्यशास्त्र' है। हमारे देश में काव्यशास्त्र की उत्पत्ति अत्यन्त प्राचीन काल में हुई थी और उसका विकास अनेक शताब्दियों के साहित्यिक प्रयास का फल है। काव्यशास्त्र के प्रारम्भिक युग में इसके लिए मुख्य रूप से **'काव्यालंकार'** नाम का प्रयोग होता था। आचार्य भामह ने अपने ग्रन्थ का नाम 'काव्यालंकार' रखा था। इस नाम में 'अलंकार' सौन्दर्य का वाची है, इसलिए काव्यसौन्दर्य की परीक्षा के आधारभूत मौलिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन करने वाले प्रचीन ग्रन्थ 'काव्यालंकार' कहें जाते थे। बाद में इस शास्त्र के लिए **'अलंकारशास्त्र'** नाम प्रचलित हुआ। यद्यपि इस शास्त्र में अलंकार के अतिरिक्त रस, रीति, गुण आदि का भी विवेचन किया जाता है, तथापि इन सबमें अलंकार को प्रधान मानकर 'अलंकारशास्त्र' नाम पड़ा है अथवा अंलकार को सौन्दर्यवाचक मानकर 'काव्यसौन्दर्य-शास्त्र' को यह नाम दिया गया है। 'शास्त्र' गूढ़ तत्व प्रतिपादक ग्रन्थों को कहते हैं, क्योंकि यह शब्द शंस् (कहना) धातु से निष्पन्न है। काव्य के साथ 'शास्त्र' शब्द का सम्बन्ध जुड़ जाने से इसका महत्व बढ़ गया है। भोजराज ने इस शास्त्र को **काव्यशास्त्र** नाम दिया है, क्योंकि इसमें काव्यपरक गूढ़ सिद्धान्तों का वर्णन किया जाता है। इस शास्त्र के लिए एक अन्य नाम **'साहित्यशास्त्र'** का भी बहुत अधिक प्रचलन है, सम्भवतः विश्वनाथ आचार्य इसके प्रचारक रहे। जिन्होंने अपने ग्रन्थ को 'साहित्यदर्पण' नाम दिया। शब्द और अर्थ के 'साहित्य' (साहित्योः शब्दायोः भावः साहित्यम्) का नाम काव्य है, इसलिए काव्यशास्त्र 'साहित्यशास्त्र' नाम से जाना जाता है। इसके लिए **'साहित्यविद्या'** नाम का भी प्रयोग देखा जाता है। इन नामों की अपेक्षा इस शास्त्र का एक प्राचीनतम नाम 'क्रियाकल्प, है, जिसका उल्लेख चौंसठ कलाओं की गणना में कामशास्त्र के अन्तर्गत किया गया है। जितने भी काव्यशास्त्र परक ग्रन्थ लिखे गये, उनमें उक्त नामों के आधार पर ही आचार्यो ने अपने-अपने ग्रन्थों का नामकरण किया।

संस्कृत साहित्य में काव्यशास्त्र एक सुप्रतिष्ठित शास्त्र है, जिसके सिद्धान्तों का प्रतिपादन लगभग 2000 वर्षों से हो रहा है। परन्तु इस शास्त्र का आरम्भ किस काल में हुआ। इस पर निश्चित रूप से कुछ भी कहना कठिन है। राजेश्वर ने अपने ग्रन्थ 'काव्यमीमांसा' के प्रारंभ में एक आख्यायिका दी है। कथा पौराणिक शैली में है, परन्तु किसी और शास्त्र में इसका उल्लेख नहीं हुआ है। राजशेखर ने लिखा है— भगवान् श्रीकण्ठ शिव ने इस काव्यविद्या का उपदेश परमेष्ठी बैकुण्ठ आदि चौंसठ शिष्यों को दिया। उनमें से प्रथम शिष्य स्वयम्भू ब्रह्मा ने इस विद्या का द्वितीय बार उपदेश अपनी इच्छा से उत्पन्न होने वाले आयोनिज ऋपियों को दिया। इन शिष्यों में सरस्वती का पुत्र 'काव्य-पुरुप' भी एक था, देवता भी उसकी वन्दना करते थे।

ब्रह्मा ने प्रजाओं की हितकामना से प्रेरित होकर इन्हीं काव्यपुरूष को काव्यविद्या को प्रचार करने की आज्ञा दी। काव्यपुरूप ने इस विद्या को अठारह अधिकरणों में लिखकर अठारह शिष्यों को अलग-अलग बढ़ाया। इन शिष्यों ने काव्यविद्या का अधिक से अधिक प्रचार करने के लिए काव्य के अठारह अंगों पर अठारह ग्रन्थों का निर्माण किया जैसे, सहस्ताक्षर ने कवि रहस्य का, उक्तिगर्भ ने औलिक का इत्यादि। इस प्रकार काव्यविद्या उत्पन्न होकर फैलती गई।

भारत में मान्य पारम्परिक मत के अनुसार सभी विद्याओं की उत्पत्ति वेदों से हुई है। साहित्य-शास्त्र का वेदों से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है। परन्तु इस शास्त्र में जिन गुन, रीति, अलंकार, ध्वनि आदि तत्वों का विवेचन किया जाता है, उन सबका मूल वेदों में अवश्य मिलता है। उपमा आदि कही अलंकार वैदिक वाङ्मय में प्रयुक्त हुए हैं। रीतियों के उदाहरण भी वैदिक मन्त्रों में उपलब्ध हैं, अतः काव्य शास्त्र के बीज वेदों में ही दीख पड़ते हैं, इसमें सन्देह नहीं है। काव्य-स्वरूप संकेत महर्पि वाल्मीकी के रामायण महाकाव्य में मिलता है, जहां 'शोक' का 'श्लोक' से समीकरण किया गया है। काव्यशास्त्र परक सिद्धान्तों का शास्त्रीय निरूपण हमें भरतमुनि से मिलना प्रारम्भ होता है। भरत से लेकर लगभग दो हजार सालों तक का काव्यशास्त्र का इतिहास फैला हुआ है। अनेक काव्यशास्त्र विशारद आचार्यों में उन शास्त्रों का प्रणयन किया है। कुछ ने सम्प्रदायों के प्रवर्तन में योगदान भी दिया है। यहां साहित्यशास्त्र में प्रमुख आचार्यों का अतिसंक्षिप्त परिचय प्रस्तुत हैं—

1.1 भरतमुनि

साहित्यशास्त्र के आचार्यों में सबसे प्राचीन नाम है—भरम। संस्कृत साहित्य में कई भरतों का उल्लेख है। परन्तु यहां नाट्य-शास्त्र प्रणेता भरत से अभिप्राय है। इनका अर्विभाव काल अनिश्चित है। कुछ लोग 'भरत'

नाम को काल्पनिक मानते हैं। परन्तु इनको ऐतिहासिक मानते हैं, वे इनका कालनिर्धारण विक्रय पूर्व 500 से लेकर विक्रमी 200 के बीच करते हैं।

भरतमुनि का एक मात्र ग्रन्थ 'नाट्यशास्त्र' है। नाम से यह नाट्य का प्रतिपादन करने वाला ग्रन्थ प्रतीत होता है, परन्तु वास्तव में यह समस्त ललित कलाओं का विश्वकोष है। वर्तमान नाट्यशास्त्र 36 अध्यायों में विभक्त है। इसमें लगभग 5000 श्लोक हैं। इसीलिए इसको 'षट्साहस्त्री-संहिता' भी कहते हैं। नाट्यशास्त्र के तीन स्तर दिखायी पड़ते हैं—सूत्र, नाट्य, श्लोक। प्रतीत होता है कि मूलग्रन्थ सूत्रात्मक था। नाट्यशास्त्र' का विर्ण्यविषय व्यापक है। नाट्य के विस्तुत विवेचन के अतिरिक्त इसमें छन्दःशास्त्र अलंकारशास्त्र, संगीतशास्त्र आदि का भी प्रारम्भिक विवरण मिलता है नाट्यशास्त्र के अन्तिम अध्याय में संकेत मिला है कि कोहल नामक किसी आचार्य ने इस ग्रन्थ का विकास किया। कोहल के अतिरिक्त शाण्डिल्य, वत्स तथा धूर्तिल नामक नाट्याचार्यों का भी इस ग्रन्थ में उल्लेख हुआ। हो सकता है कि बाद में इनके मतों का समावेश किया गया हो। इसी लिए नाट्य शास्त्र में कई रूपों की बात की जाती है।

भरत रचित नाट्यशास्त्र पर टीका लिखने वाले नौ विद्वानों-उद्भव लोल्लत, शंकुक, भट्टनायक, राहुल, भट्यन्त्र, अभिनवगुप्त, कीर्तिधर, मातृगुप्त — के नाम तो मिलते हैं, परन्तु इनमें अभिनवगुप्त की 'अभिनवभारती' नामक टीका को छोड़कर और कोई टीका-ग्रन्थ अब तक नहीं मिला है। भरत को साहित्यशास्त्र में इस सिद्धान्त का प्रतिष्ठापक माना जाता है।

2. मेधावी

भरतमुनि के बाद साहित्यशास्त्र के इतिहास में 'भामह' का नाम आता है। परन्तु दोनों का अन्तराल इतना ज्यादा है कि यह सम्भावना उपयुक्त लगती है कि बीच में और आचार्य अवश्य रहे होंगे। एक नाम 'मेधावी' सइसी तथ्य को पुष्ट करता है। इनका कोई ग्रन्थ आज नहीं मिलता है, परन्तु भामह, रूद्रद के व्याख्याकार नमिसाधु और राजशेखर क ग्रन्था म इनका नाम लिया गया है कि और इनके कुछ प्रमुख सिद्धान्तों की चर्चा की गयी है?

3. भामह

भरतमुनि के बाद अलंकारशास्त्र के आचार्यों में भामह का नाम आता है। क्योंकि इनका ग्रन्थ उपलब्ध है। इनके ग्रन्थ का नाम हैं—काव्यालंकाल र। ग्रन्थ में बौद्ध आचार्य दिङ्नाम के संकेत के आधार पर भामह का स्थितिकाल 500ई० के बाद 620ई० से पहले माना जा सकता है। परन्तु इस विषय में निर्विवाद रूप से कुछ भी कहना बड़ा कठिन है।

भामह के नाम से बहुत-बहुत से वाक्य प्रचलित हैं, जो काव्यालंकार में नहीं मिलते हैं। परन्तु इस ग्रन्थ के अतिरिक्त भामह ने कोई और ग्रन्थ भी लिखा यह ज्ञात नहीं होता है। काव्यालंकार में छह परिच्छेद हैं; जिनमें पांच विषयों का वर्णन हुआ है— काव्यशरीर, अलंकार, दोष, न्यायनिर्णय अरौ शब्द-शुद्धि। भामह को अलंकार सम्प्रदाय का प्रवर्तक माना जाता है। इनके मात में काव्य का प्राणभूत तत्व अलंकार ही है। अलंकार विहीन काव्य की कल्पना वैसी है, जैसे उष्णता विहीन अग्नि की कल्पना। 'काव्यालंकार' द्वारा अलंकारशास्त्र एक स्वतन्त्र शास्त्र के रूप में स्थापित हुआ है क्योंकि इससे पहले भारत ने तो अलंकारों का विवेचन गौण रूप से ही किया था। भामह से काव्यशास्त्र भी उन्नत परम का आरम्भ होता है। उनके ग्रन्थ को उद्भट, आनन्दवर्धन, अभिनवगुप्त और मम्मट ने प्रमाण रूप में उद्धृत किया है जिससे उसकी प्रसिद्धि प्रकट होती है। उद्भट ने इसपर भामह विवरण नायक टीका लिखी थी, किन्तु दुर्भाग्य से वह आज उपलब्ध नहीं है।

4. दण्डी

भामह के बाद प्रधान आचार्यों में दण्डी का नाम लिया जाता है, क्योंकि इन्होंने भी अलंकार शास्त्र पर स्वतंत्र रूप से ग्रन्थ लिखा। कालक्रय से इनको भामह के बाद रखा जाता है। दण्डी का समय बाणभट्ट के आसपास सप्तम शताब्दी ई० में कहीं निर्धारित किया जाता है। गद्यकवि के रूप में दण्डी सुविख्यात है। इनके द्वारा रचित कथाग्रन्थ 'दशकुमार चरित' की चर्चा की जा चुकी है। कवि होने के साथ-साथ दण्डी एक सफल अलंकार शास्त्री भी थें, उनका 'काव्यादर्श' नामक ग्रन्थ इसका प्रमाण है।

'काव्यादर्श के कई संस्करण उपलब्ध है। इसके अधिक प्रचलित संस्करण में 660 श्लोक हैं। ग्रन्थ तीन परिच्छेदों में विभाजित है। प्रथम परिच्छेद में काव्य लक्षण, काव्यभेद, गद्य भेद, रीति, गुण और काव्यगुण आदि का विवेचन है। द्वितीय परिच्छेद में अलंकार की परिभाषा, भेद और उनके उदाहरण दिये गये हैं। तृतीय परिच्छेद में ग्रन्थकार में 'यमक' अलंकार का सुविस्तृत वर्णन किया है। 'काव्यादर्श' द्वारा दण्डी ने अत्याधिक ख्याति अर्जित भी थी। उनके ग्रन्थ पर अनेक टीकाएं लिखी गई, जो कव्यादर्श की लोकप्रियता भी सूचक हैं। सिके कुछ दूसरी भाषाओं में अनुवाद भी हुए। इस ग्रन्थ की उल्लेखनीय बात यह है कि एक कवि होने के कारण दण्डी ने इनमें दिये गये सभी उदाहरण स्वयं ही लिखे हैं, वे सब सरसपद्य रचनाओं के रूप में महत्वपूर्ण हैं।

उद्भट भट्ट

संस्कृत में अलंकारशास्त्र के आचार्यों में उद्भट भट्ट एक उल्लेखनीय, नाम है। आनन्दवर्धन आदि आचार्यों द्वारा अपने ग्रन्थों में इनका सादर स्मरण किया गया है। उद्भट भट्ट अलंकारवादी सम्प्रदाय के आचार्य हैं। आठवीं शताब्दी ई० के लगभग इनका स्थिति काल माना जाता है।

इनके तीन ग्रन्थों का पता लगता है भामह विवरण नामक टीकाग्रन्थ, कुमारसम्भव-काव्य और काव्यालंकार सार संग्रह। इनमें 'काव्यालंकार सारसंग्रह' नामक अलांकारशास्त्र ही उपलब्ध होता है, जो उद्भट की विद्वता प्रकट करता हैं.
यह ग्रन्थ छह वर्गों में विभाजित है। इसमें उद्भट ने 41 अलंकारों का वर्णन किया है। जिनमें कुछ अलंकार साहित्यशास्त्र को उद्भट की देन है"।

6. वामन

संस्कृत में अलंकार शास्त्रियों में वामन का विशिष्ट स्थान है। उन्होंने रीति को काव्य की आत्मा माना है और साहित्य-जगत में 'रीति सम्प्रदाय' नामक एक नवीन सम्प्रदाय को जन्म दिया है। वामन को आठवीं शताब्दी ई० का कश्मीरी आचार्य माना जाता है।

वामन का एक मात्र ग्रन्थ 'काव्यालंकार सूत्र है। इसकी विशेषता है कि यह सूत्रशैली में लिखा गया है। इस ग्रन्थ के तीन भाग हैं—सूत्र, वृत्ति और उदाहरण। इसमें दिये गये उदाहरण संस्कृत के प्रसिद्ध काव्यग्रन्थों से लिये गये हैं। सूत्र और वृत्ति की रचना वामन ने स्वयं की है। प्रस्तुत ग्रन्थ पांच अधिकरणों में विभक्त है। अधिकरण अध्यायों में विभाजित हैं। सम्पूर्ण ग्रन्थ में कुल बारह अध्याय हैं। इसमें सूत्रों की संख्या 319 है। 'रीतिरात्मा काव्यस' वामन का प्रमुख सिद्धान्त है। इस ग्रन्थ पर दो टीकाएं मिलती हैं।

7. रुद्रट

काव्य-शास्त्र के अलंकार सम्प्रदाय के प्रसिद्ध आचार्यों में रुद्रट का नाम लिया जाता है। नाम से ज्ञात होता है कि ये कश्मीरी थे। इनके मत का उल्लेख धनिक, मम्मट आदि आचार्यों द्वारा किया गया है अतः इनका समय नवमी शताब्दी ई० के आसपास रखना उचित प्रतीत होता है।

रुद्रट की एक मात्र कृति 'काव्यालंकार' इनकी प्रसिद्धि का आधार है। इसमें अलंकार शास्त्र के समस्त तत्वों का विस्तार से निरूपण किया गया है। इसकी मौलिकता इस बात में है कि यहां सर्वप्रथम वैज्ञानिक ढंग से अलंकारों के सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है। पूरा ग्रन्थ आर्या छन्द में है जिनकी कुल संख्या 734 है। इसमें सोलह अध्याय है। काव्य का स्वरूप; रीति के प्रकार, इस-मीमांसा, नायकनायिका भेद, अलंकारों का विभाजन और विवरण आदि इसके प्रमुख वर्ण्यविषय है। काव्यालंकार पर लिखी गयी तीन टीकाओं का उल्लेख मिलता है, जिनमें नामिसाधु द्वारा लिखी गई टीका उपलब्ध है और महत्वपूर्ण भी।

8. आनन्दवर्धन

आनन्दवर्धन संस्कृत साहित्य-शास्त्र के अत्यन्त प्रसिद्ध आचार्य है। इनको 'ध्वनिसम्प्रदाय' का प्रवर्तक और जन्मदाता माना जाता है। ये कश्मीर निवासी थे और नवम शताब्दी ई० में हुए थे। आनन्दवर्धन ने पांच ग्रन्थों की रचना की थी। इनका सबसे महत्वपूर्ण और प्रसिद्ध ग्रन्थ 'ध्वन्यालोक, नामक काव्यशास्त्र है। इसमें काव्य की आत्मा के रूप में 'ध्वनि तत्व' का प्रतिपादन किया गया है— 'काव्यस्यात्मा ध्वनिः।' काव्यशास्त्र के सभी सम्प्रदायों में ध्वनि सम्प्रदाय सबसे अधिक प्रबल रहा है। ग्रन्थ में चार उद्योत हैं। प्रथमः उद्योत में ध्वनिविरोधी सिद्धान्तों का खण्डन करके ध्वनि तत्व की स्थापना की गयी है। ध्वन्यालोक में मुख्यरूप से तीन भाग हैं— मूलकारिकाभाग, गद्यमयी वृत्ति और उदाहरण। इनमें कारिका और वृत्ति आनन्दवर्धन द्वारा लिखी गयी हैं, तो उदाहरण भाग में कुछ पद्य कविकृत हैं और कुछ दूसरे प्रसिद्ध कवियों से उदधृत। ध्वन्यालोक पर लिखी गयी दो टीकाओं का पता चलता है—एक 'लोचन' और दूसरी 'चन्द्रिका'।

9. अभिनवगुप्त

अभिनवगुप्त ध्वनिसमर्थक आचार्य आनन्दवर्धन की परम्परा में हुए। ये कवि काव्यशास्त्री और दार्शनिक थे। ध्वन्यालोक और नाट्यशास्त्र के व्याख्याता के रूप में ये अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। इनकी व्याख्याएं अपनी प्रौढ़ता और पाण्डित्यपूर्णता के कारण मौलिक ग्रन्थों के समान आदरणीय हैं। इनके वंश और जीवन का पर्याप्त परिचय उपलब्ध होता है। इनके शैव दर्शन के गुरु लक्ष्मणगुप्त, काव्यशास्त्र के गुरु महेंदुराज और नाट्यशास्त्र के गुरु भट्टतौत थे। ये कश्मीरी थे। 'गुप्त' इनके वंश का नाम था। इनका पूरा नाम 'अभिनवगुप्तवाद' है। अभिनवगुप्त का स्थितिकाल दसवीं शताब्दी के उत्तर भाग और ग्यारहवीं शताब्दी के प्रारम्भिक भाग में बैठता है।

अभिनव गुप्त असामान्य विद्वान थे। उन्होंने अनेकों शास्त्रों का अध्ययन किया था और उन-उन शास्त्रों में निष्णात भिन्न-भिन्न गुरूओं से। स्वयं अपने बीस गुरुओं के नामों का उल्लेख इन्होंने किया है। गुरुओं के समान ही इनके ग्रन्थों की भी एक लम्बी सूची है। जिसमें तन्त्रालोक जैसे विशालकाय ग्रन्थ भी हैं और क्रम स्त्रोत, भैरवस्त्रोत जैसे 10-12 श्लोकों की कृतियां भी। सब मिलाकर इनकी रचनाओं की संख्या 41 तक पहुंचती है। इनमें काव्य शास्त्र से सम्बन्ध रखने वाले केवल तीन ग्रन्थ हैं— (1) ध्वन्यालोकलोचन, जो ध्वन्यालोक की टीका के रूप में है। (2) अभिनव भारती, जो भरत के नाट्य शास्त्र पर टीका के रूप में है और (3) घटकर्पर विवरण जो 'मेघदूत' के सदृश एक दूत काव्य पर टीकारूप में लिखा गया है। शेषग्रन्थ अधिकांश में शैवदर्शन से सम्बद्ध हैं। ध्वन्यालोक और भरतकृत नाट्यशास्त्र के कठिन सिद्धान्तों को समझने के लिए अभिनवगुप्त द्वारा उन ग्रन्थों पर लिखी गयी टीकाओं का आलोचकों की दृष्टि में बहुत महत्व है?

10. राजशेखर

संस्कृत साहित्य के प्रसिद्ध नाटककार राजशेखर जो दसवीं शताब्दी में हुए, 'काव्यमीमांसा' नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ की उपलब्धि के बाद से संस्कृत आचार्यों में भी गिने जाते हैं। यह ग्रन्थ साहित्य-समीक्षा से सम्बन्ध रखता है। इसके कारण अलंकार शास्त्र के इतिहास में राजशेखर का गौरवमय स्थान मिला है। काव्यमीमांसा दूसरे काव्यशास्त्रों से कुछ हटकर है। इसमें अठारह अध्याय है। प्रथम अध्याय का नाम है— शास्त्र-संग्रह। इसमें बताया गया है कि काव्यमीमांसा की शिक्षा शिव ने ब्रह्मा आदि को किस प्रकार प्रदान की और फिर ब्रह्मा से शिष्य परम्परा द्वारा इसके 18 विषयों को 18 लेखकों ने 18 ग्रन्थों में अलग-अलग लिखा। इस ग्रन्थ में कवि और आलोचक के स्वरूप, प्रकार, काव्य भेद, रीति निरुपण, काव्यार्थ की योनि, शब्दहरण तथा अर्थापहरण आदि पर रोचक विवेचन प्रस्तुत किया गया है। राजशेखर एक प्रसिद्ध आलंकारिक थे। भारत के विभिन्न भागों में कविगण काव्य का पाठ किस रीति से करते हैं— इसका सुन्दर वर्णन हमें 'काव्यमीमांसा' में मिलता है।

11. धनञ्जय

धनञ्जय दशमी शताब्दी के एक महान काव्यशास्त्री है। इनका एकमात्र उपलब्ध ग्रन्थ 'दशरूपक' है। इसे नाट्यशास्त्र के बाद नाट्य-विवेचन के लिए सबसे महत्वपूर्ण ग्रन्थ माना जाता है। नाट्य सम्बन्धी विस्तृत विवरण इसमें किया गया है। दशरूपक में 300 कारिकाएं हैं, जो चार प्रकाशों में विभाजित हैं। धनञ्जय के दशरूपक पर उनके छोटे भाई 'धनिक' ने 'अवलोक' नामक टीका लिखी है।

12. भट्टनायक

भट्टनायक दशमी शताब्दी के एक प्रसिद्ध साहित्यकार हैं। इनका एकमात्र ग्रन्थ 'हृदयदर्पण' यद्यपि आज उपलब्ध नहीं है, तथापि उसके कारण ही उत्तरवर्ती साहित्य में इनके मत की चर्चा बहुत अधिक पायी जाती है। सम्भवतः आनन्दवर्धन के ध्वनिसिद्धान्त को न मानने वाले आलंकारिकों में भट्टनारायण प्राचीनतम और प्रमुख रहे हैं। इनके ग्रन्थ भी विशेष ख्याति के दो कारण हैं— (1) ध्वनिविरोध और (2) रसनिष्पत्ति सिद्धान्त। ये दोनों सिद्धान्त बहुत महत्वपूर्ण हैं और इन दोनों के विपय में भट्टनायक ने एकदम नवीन दृष्टिकोण उपस्थित किये थे। अभिनवगुप्त ने ध्वन्यालोक लोचन में इनके मत की आलोचना की है; किन्तु उनकी समीक्षा यह निष्कर्ष अवश्य देती है कि भट्टनायक ने 'ध्वन्यालोक' का खण्डन बड़ी सूक्ष्मता और मार्मिकता से किया था। इनके इस विषयक सिद्धान्त का उल्लेख मम्मट के काव्यप्रकाश में हुआ है।

13. कुन्तक

कुन्तक को काव्यशास्त्र का एक प्रमुख आचार्य माना जाता है। ये ही प्रसिद्ध 'वक्रोक्ति सम्प्रदाय' के प्रतिष्ठापक है। जिसमें 'वक्रोक्ति' को ही काव्य का जीवनधायक तत्व माना जाता है। इनका समय आनन्दवर्धन के बाद और राजशेखर तथा महिमभट्ट के बीच, लगभग दशमी शताब्दी में

अन्तिम भाग माना जा सकता है।

कुन्तक का एकमात्र ग्रन्थ 'वक्रोक्तिजीवित' है। यही ग्रन्थ उनकी प्रसिद्धि का आधार स्तम्भ है। इसमें चार अध्याय हैं, प्रथम दो तो पूर्णरूप में मिलते हैं किन्तु अन्तिम दो अधूरे ही मिले हैं। यह ग्रंन्थ ध्वन्यालोक के समान तीन भागों में है— कारिका, वृत्ति, उदाहरण। कारिका और वृत्ति के लेखक स्वयं कुन्तल हैं। उदाहरण
प्रसिद्ध काव्य ग्रन्थों से लिए गये हैं। कुन्तल अभिधावादी आचार्य हैं। वे लक्ष्य और व्यंग्य अर्थों का अर्न्तभाव वाच्य में ही कर लेते हैं। कुन्तल का वैशिष्ट्य वक्रोक्ति की महनीय कल्पना के कारण है, इसीलिए अलंकार शास्त्र के इतिहास में वे वक्रोक्तिजीवितकार के नाम से जाने जाते हैं।

14. महिमभट्ट

ध्वनि विरोधी आचार्यों में महिमभट्ट का नाम अग्रगण्य है। इन्होंने कुन्तल का उल्लेख किया है, इसलिए ग्यारहवीं शताब्दी के प्रारम्भिक भाग इनका स्थिति काल माना जाता है। इनकी एकमात्र रचना 'व्यक्ति विवेक' है। ध्वनिसिद्धान्त का खण्ड न करना इसका उद्देश्य है। वैसे तो अभिनवगुप्त के बाद ध्वनिविरोधी आचार्यों की एक लम्बी परम्परा है। परन्तु उन सबमें महिमभट्ट का अपना मौलिक दृष्टिकोण है। महिमभट्ट नैयायिक है, इसलिए इन्होंने न्याय की पद्धति से 'ध्वनि' को सामान्य रूप से और उसके उदाहरणों को विशेष रूप से अनुमान के अतर्गत करने का यत्न किया है। 'ध्वनि' को 'अनुमान' के अन्तर्गत करना ही इनके ग्रन्थ की रचना का उद्देश्य है, और इस बात का उल्लेख महिमभट्ट ने प्रारम्भ में ही कर दिया है।

महिमभट्ट कश्मीर निवासी आचार्य हैं। इन्हें अपने व्यक्तिगत नाम की अपेक्षा 'व्यक्तिविवेककार' के नाम से अधिक प्रसिद्धि मिली है।

15. क्षेमेन्द्र

साहित्यजगत में ''औचित्य' विषयक महनीय कल्पना के कारण क्षेमेन्द्र औचित्य सम्प्रदाय के संस्थापक के रूप में प्रसिद्ध हैं। इन्होंने अपने ग्रन्थों में कश्मीर के राजा अनन्तराज का उल्लेख किया है अतः ग्यारहवीं शताब्दी इनकी स्थितिकाल मानी जाती है। क्षेमेन्द्र ने लगभग 40 ग्रन्थ लिखे थे, परन्तु सब उपलब्ध नहीं हैं। इनका सबसे मौलिक ग्रन्थ 'औचित्य विचार चर्चा' है। इसके अतिरिक्त कविकण्ठाभरण, बृहत्कथामन्जरी और सुवृत्ततिलक आदि प्रसिद्ध ग्रन्थ भी हैं। क्षेमेन्द्र ने अपने को अभिनवगुप्त का शिष्य कहा है।

औचित्यविचारचर्चा का सीधा सम्बन्ध अलंकारशास्त्र से है। इसमें औचित्य का रस का भी प्राण कहा गया है और अनौचित्य को रसभंग का कारण बताया गया है। इस ग्रन्थ में स्थापित नवीन विचारों के आधार पर ही क्षेमेन्द्र को आलंकारिक आचार्यों में प्रख्याति उपलब्ध हुई है।

16. भोजराज

ग्याहरवीं शताब्दी में हुए भोजराज केवल धारानगरी के राजा और दानशील के रूप में ही प्रसिद्ध नहीं हुए, अपितु साहित्यजगत् में उनकी ख्याति एक विद्वान साहित्यकार के रूप में भी है। अलंकार शास्त्र पर उनके दो ग्रन्थ मिलते हैं और दोनों ही विशालकाय हैं—(1) सरस्वतीकण्ठाभरण और श्रृङ्गारप्रकाश। सरस्वतीकण्ठाभरण में पांच परिच्छेद हैं। भोज ने प्राचीन ग्रन्थकारों के लगभग 1500 श्लोकों को इसमें उद्धृत किया है। भोज की दृष्टि समन्वयवादी है। अपने मत की पुष्टि के लिए इन्होंने प्राचीन आलंकारिकों के मतों का अधिकता से समावेश किया है। दण्डी इनकी प्रिय आलंकारिक प्रतीत होते हैं; क्योंकि सर्वाधिक उद्धरण काव्यादर्श से हैं। दूसरे ग्रन्थ 'श्रृङ्गारप्रकाश में 36 प्रकाश या अध्याय हैं। यह सम्भवतः अलंकारशास्त्र का सबसे बड़ा ग्रन्थ है। यह अभी पूरी तरह प्रकाशित नहीं हुआ है, हस्तलिखित रूप में ही यह पूरा उपलब्ध है।

17. मम्मट

अलंकारशास्त्र के इतिहास में मम्मट का बड़ा ही गौरवपूर्ण स्थान है। मम्मट कश्मीर निवासी थे। एक किम्वदन्ती में इनको महाकवि श्रीहर्ष का मामा कहा जाता है; परन्तु यह प्रवाद मात्र जाना पड़ता है। टीकाकार भीमसेन के विवरण के अनुसार मम्मट के रूप में सरस्वती देवी ने ही कश्मीर देश में अवतार लिया था और साहित्यशास्त्र पर सूत्रों का निर्माण किया था। मम्मट को सम्मान में राजा की ओर से 'राजानक' उपाधि मिली थी। मम्मट का संभावित समय ग्यारहवीं शताब्दी का उत्तरार्ध है।

मम्मट की एकमात्र रचना काव्यप्रकाश है। इस ग्रन्थ को समस्त काव्यशास्त्र का प्राण माना जाता है। कुछ विद्वानों का विचार है कि मम्मट के अतिरिक्त काव्य प्रकाश की रचना में दूसरे विद्वान 'अल्लट' का भी हाथ रहा है। काव्यप्रकाश में दस उल्लास हैं और 150 के लगभग कारिकाएं। अन्य कुछ काव्यशास्त्रों की भांति इसके भी तीन भाग हैं—कारिकाभाग, वृत्तिभाग और उदाहरणभाग। उदाहरण भाग में मम्मट ने प्रसिद्ध कवियों के पद्य दिये हैं; एक कारिकाएं और वृत्ति स्वयं लिखी हैं।

मम्मट के काव्यप्रकाश का काव्यशास्त्रों में अत्यन्त गौरवपूर्ण स्थान है। इसकी प्रमुख विशेषताएं है सूत्रशैली और विषयबाहुल्य। भरत मुनि के रस सिद्धान्त का सार इसमें सुन्दर रूप से मिलता है। मम्मट ने रीति, गुण, दोष और अलंकार सबका-यर्थाथ मूल्यांकन किया है। इन्होंने अपने पूर्ववर्ती आचार्यों के ग्रन्थों का अध्ययन मनन करने के बाद उनकी न्यूनताओं को दूर करते हुए अपने ग्रन्थ को सर्वांगीण सुन्दर और परिपूर्ण बनाया है। दूसरे शब्दों में कह सकते है कि पूर्ववर्ती आचार्यों के द्वारा स्थापित सिद्धान्तों के सर्वोत्तम सारभाग का ग्रहण किया है। काव्यप्रकाश की लोकप्रियता इसी से आंकी जा सकती है कि भारत के सभी भागों के लगभग सत्तर विद्वानों ने इस पर टीकाएं लिखी हैं।

18. रुय्यक

मम्मट के उत्तरवर्ती साहित्याचार्यों में राजानक रुय्यक का प्रमुख स्थान है। ये कश्मीरी विद्वान थे। इनके काव्यशास्त्र विषयक ग्रन्थों के नाम है—सहृदयलीला, व्यक्तिविवेक की टीका तथा अलंकार/सर्वस्व। रुय्यक के ग्रन्थ अलंकारसर्वस्व पर कई टीकाएं मिलती है।

19. हेमचन्द्र

'काव्यानुशासन' नामक प्रसिद्ध काव्यशास्त्र के रचयिता हेमचन्द्र जैन धर्म के प्रसिद्ध आचार्य हैं। हेमचन्द्र का काल ग्यारहवीं-बारहवीं शताब्दी है। काव्यानुशासन सूत्रपद्धति पर लिखा गया है, इसी पर उन्होंने विवेक' नामक टीका लिखी है। इसे एक संग्रह-ग्रन्थ कहा जाता है क्योंकि इसमें रचयिता की विशेष मौलिकता नहीं दिखाई पड़ती है।

20. रामचन्द्र गुणचन्द्र

आचार्य हेमचन्द्र के बाद उनके प्रमुख शिष्य रामचन्द्र गुणचन्द्र का स्थान है। ये दोनों भी जैन धर्म के प्रतिष्ठित आचार्य थे। इन दोनों ने मिलकर 'नाट्यदर्पण' नामक नाट्यशास्त्र विषयक ग्रन्थ की रचना की थी। ग्रन्थ कारिकाओं में है और ग्रन्थकारों ने वृत्ति भी लिखी है। 'नाट्य' को समझन के लिए 'नाट्यदर्पण' का नाम आदरपूर्वक लिया जाता है।

21 विश्वनाथ कविराज

साहित्यदर्पण नामक अलंकारशास्त्र के रचयित विश्वनाथ कविराज अलंकार जगत् के सबसे अधिक प्रतिष्ठित आचार्य है। ये बहमुखी प्रतिभा के धनी थे। एक विद्वद्वंश में इनका जन्म हुआ था। विश्वनाथ और विश्वनाथ के पिता दोनों ही किसी राजा के मंत्री थे। इनका स्थितिकाल चौदहवीं शताब्दी है।

विश्वनाथ ने कई काव्यपरक ग्रन्थ लिखे थे; किन्तु इनका सबसे प्रसिद्ध ग्रन्थ 'साहित्यदर्पण' है। इसमें दस परिच्छेद हैं और काव्यशास्त्र के सभी प्रमुख विषयों का विवेचन किया गया है। साहित्यदर्पण को काव्य शास्त्र का विश्वकोष माना जाता है। इसकी विशेषता है कि यह सरल, सुबोध और रोचक भाषा में लिखा गया है। इसमें दिए गये उदाहरण आकर्षक हैं। व्याख्याएँ संक्षिप्त होने पर भी विषय को स्पष्ट करने वाली है। यही कारण है कि काव्यशास्त्र के जिज्ञासुओं के लिए यह अमूल्य ग्रन्थ है। इसपर अनेक टीकाएं लिखी गयी हैं और कई संस्करण अब तक प्रकाशित हो चुके हैं।

22. अप्पय दीक्षित

अप्पय दीक्षित दक्षिण भारत की विभूति हैं। इनका स्थिति काल सोलहवीं-सत्तरवीं शताब्दी है। ये मुख्य रूप से एक दार्शनिक विद्वान हैं। बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न अप्पय दीक्षित ने लगभग 100 ग्रन्थों के लेखक हैं। इनमें काव्यशास्त्र विषयक ग्रन्थ तीन हैं। कुवलयानन्द, चित्रमीमांसा और वृत्तिवार्तिक। कुवलयानन्द इनका सर्वप्रसिद्ध ग्रन्थ है। इसका आधार जयदेव का चन्द्रालोक है। हिन्दी के रीतिसाहित्य पर कुवलयानन्द का विशेष प्रभाव पड़ा है। पण्डितराज जगन्नाथ इनके प्रबल आलोचक थे। बाद में पण्डितराज की आलोचना अप्पयदीक्षित के सम्बन्धी नीलकण्ठ दीक्षित नामक विद्वान ने की थी।

23. पण्डितराज जगन्नाथ

पण्डितराज जगन्नाथ को अलंकारशास्त्र के इतिहास में सबसे प्रसिद्ध अन्तिम प्रौढ़ आलंकारिक के रूप में याद किया जाता है। दिल्ली के बादशाह शाहजहां ने इनको पण्डितराज की उपाधि से विभूषित किया था। इन्होंने ही दाराशिकोह को संस्कृत पढ़ाई थी। किम्वदन्ति है कि ये किसी यवनसुन्दरी पर आसत्तक थे। ये सत्रहवीं शताब्दी के अत्तरार्ध तक जीवित रहे थे।

पण्डितराज ने कव्य, काव्यशास्त्र और व्याकरण विषयों पर अनेक ग्रन्थ लिखे। इनके काव्यग्रन्थों में भामिनीविलास, गंगालहरी, करुणालहरी, सुधालहरी आदि प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं। इनके द्वारा रचित काव्य शास्त्र का नाम है—रसगंगाधर। इस ग्रन्थ का अलंकार जगत में विशेष स्थान है। इसे ध्वन्यालोक और काव्यप्रकाश के समान ही प्रमाणिक और श्रेष्ठ माना जाता है। यह ग्रन्थ अधूरा है। इसके केवल दो आनन अथवा अध्याय मिलते हैं। प्रथम अध्याय में काव्य के स्वरूप आदि की मीमांसा की गई है तो द्वितीय अध्याय में ध्वनि के भेद और अलंकार आदि की। ग्रन्थ अधूरा होने पर भी महत्वपूर्ण है। कवि होने के कारण इन्होंने रसगंगाधर में स्वयं लिखे उदाहरण दिये हैं। रसगंगाधर पर नागेश भट्ट की टीका उपलब्ध होती है।

24. अन्य काव्यशास्त्री:

संस्कृत काव्यशास्त्र का इतिहास सुदीर्घकाल तक फैला हुआ है। ऊपर वर्णित आचार्यों के अतिरिक्त अनेक दूसरे आचार्यों ने भी इस संबंध में लिखा है। सागरानन्दी, वाग्भट, अरिसिंह-अमरचन्द्र, देवेश्वर, जयदेव, पक्षधर मिश्र, जयदेव मिश्र, विद्याधर, विद्यानाथ, शारदातनय, शिंगभूपाल, भानुदत्त, रूपगोस्वामी, केशव मिश्र, कवि कर्णपूर, कविचन्द्र, आशाधर भट्ट, नरसिंह कवि आदि कुछ नाम इस संदर्भ में उल्लेखनीय है। कह सकते हैं कि ईसवी पूर्व प्रथम शताब्दी से बीसवीं शताब्दी तक काव्य-शास्त्र-प्रणयन की परम्परा बनी हुई है। बीच-बीच में यह खण्डित प्रतीत होती है, परन्तु उसका अस्तित्व रहता है। यद्यपि अलंकार शास्त्र के प्रमुख सिद्धांतों और सम्प्रदायों के प्रवर्तक आचार्यो का महत्व अधिक है, तथापि उन सिद्धान्तों की व्याख्या या खंडन करने वाले आचार्यों का काव्यशास्त्र के आलोचना पक्ष को आगे बढ़ाने में योगदान कुछ कम नहीं है। विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि संस्कृत काव्य शास्त्र के वृहद् भाग का निर्माण कश्मीरी विद्वानों द्वारा किया गया है। ◻

पृष्ठ 27 का शेष

इस रूपरेखा के अनुरूप कार्यालयों में हिन्दी-अनुभागों को स्थापित कर दिया जाए और उन्हें स्वतंत्र रूप से अपने दायित्व निभाने दिए जाएं तो वह दिन दूर नहीं जब हिन्दी-प्रयोग को बढ़ाने के लिए ऐसे आयोजनों की कोई आवश्यकता ही नहीं रहेगी।

---

1. वामन शिवराम आप्टे - संस्कृत-हिन्दी कोश, व्यवस्था (पृ॰ 987) का अर्थ निश्चित नियम या साविधि आदेश और आयोजन (पृ॰ 157) का अर्थ समारोह।
2. डा॰ उदयनारायण दुबे - राजभाषा के संदर्भ में हिन्दी आंदोलन का इतिहास, पृ॰ 12
3. डा॰ सर्वदानन्द द्विवेदी - विदेशी विश्वविद्यालयों में हिन्दी (लेख), राजभाषा-भारती, राजभाषा-विभाग, गृह-मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, अंक 41, अप्रैल,-जून, 1988, पृ॰ 29
4. जनसत्ता, हिन्दी दैनिक समाचार-पत्र, 24 अप्रैल, 1987
5. डा॰ बलबीर सिंह भटनागर - विधि साहित्य का अनुवाद (लेख), राजभाषा-भारती, राजभाषा-विभाग, गृह-मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, अंक 65, अप्रैल-जून, 1994, पृ॰ 10
6. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल - हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ॰ 511
7. डॉ॰ किरन पाल सिंह तेवतिया -- 'राजभाषा हिन्दी का स्वरूपः तेल एवं प्राकृतिक गैस-आयोग के परिप्रेक्ष्य में' अप्रकाशित शोध-प्रबंध जिस पर गढ़वाल विश्वविद्यालय श्रीनगर ने अगस्त, 1993 में डी॰फ़िल्॰ प्रदान की, परिशिष्ट-अध्याय-3, क्र॰ सं॰ 18
9. डा॰ भोलानाथ तिवारी—मानक हिन्दी का स्वरूप, पृ. 176
10. दृष्टव्य—डा॰ सत्यव्रत—भारतीय राष्ट्रभाषाः सीमाएं तथा समस्याएं, पृ.105
11. दृष्टव्य—डा॰ हरदेव बाहरी—शुद्ध-हिन्दी, पृ. 8 व 9
12. सावित्री सिंह—हिन्दी शिक्षा, पृ.197
13. दृष्टव्य-कृष्णलाल अरोड़-संपादक-राजभाषा हिन्दीः प्रसंग और संदर्भ, पृ॰ 51
14. डॉ॰ नारायण दत्त पालीवल-व्यावहारिक राजभाषा, पृ॰ 84
15. किशन सिंह—द्रव नोदन प्रणाली, प्रकाशक-केन्द्रीय प्रलेख-विभाग, विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केन्द्र, त्रिवेंद्रम, राजभाषा-भारती, राजभाषा-विभाग, गृह-मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, अक्तूबर-दिसंबर, 1990, पृ॰ 147

◻

निराला प्रासंगिक क्यों!

—अनिल त्रिपाठी

प्रासंगिकता की बात जब किसी रचना के बारे में करते हैं तब सवाल उठता है—प्रासंगिकता—किन संदर्भों में? किन अर्थों में? बहुत सारे अमूर्तीकरण के शिकार शब्दों की तरह—प्रासंगिकता भी ऐसा ही शब्द है। फिर भी "प्रासंगिकता" की जो अर्थ-छाया पाठक समुदाय के मन में सबसे पहले उभरती है वह है—उपयोगिता। रचना की उपादेयता एवं उपयोगिता वर्तमान सामाजिक-राजनैतिक संदर्भों में कितनी है? इससे ही रचना की "प्रासंगिकता" निर्धारित होती है। नामवर जी ने 'वाद-विवाद संवाद' में एक लेख लिखा है, "प्रासंगिकता का प्रमाद"। लेख का प्रारम्भ होता है—"प्रासंगिक क्या वही है जो हमारे विचारों का अनुमोदन करता है और आजकल के अनुकूल है? जो आज से भिन्न है और हमें चुनौती देता है, वह प्रासंगिक क्यों नहीं?" नामवर जी इस बात का उत्तर स्वयं देते हैं अगले वाक्य में—"आज यह सवाल उठाना इसलिए जरूरी है कि प्रासंगिकता की चिंता प्रमाद की सीमा तक बढ़ गयी है।" इस 'प्रमाद' से बचने की जरूरत है।

निराला के काव्य पर विचार करते समय प्रासंगिकता के दो धरातल साफतौर पर नज़र आते हैं—एक यह कि निराला की कविता का सामाजिक सरोकार आज की जटिलता को कितना अपने भीतर समेटता है और दूसरा है—निराला के काव्य-कला संबंधी सर्जनात्मक सरोकार; जिसको आज के रचना-धर्मी लोग प्रासंगिक मान रहे हैं (और वे गलत नहीं मान रहे हैं)। इसको थोड़ा-सा और स्पष्ट रूप से रखा जाए तो कहा जा सकता है कि निराला की कविताओं में व्यक्त होने वाले राजनीतिक विचार की आज के सन्दर्भ में सामाजिक पक्षधरता क्या है? वे कहां खड़े हैं? दूसरा यह कि कला के स्तर पर कवि "माध्यम" एवं "आशय" के जटिल तथा तनावपूर्ण स्थिति को कितना साध सका है? वैसे तो निराला अपने गद्य लेखन में ज्यादा साफ तौर पर अपने समय की सामाजिक समस्याओं एवं कलात्मक समस्याओं से जूझते नज़र आते हैं, किन्तु कविता के नियमों के भीतर वे कविता में उक्त समस्याओं को कहीं न कहीं पूरी शिद्दत के साथ रखते हैं। यानी माध्यम बदल गया है लेकिन सामाजिक सरोकार नहीं। निराला एक साथ सामाजिकता और साहित्यकता का सर्जनात्मक संतुलन बनाये रखते हैं। आज जबकि एक साथ साहित्य की साहित्यिकता एवं सामाजिकता की रक्षा करना कठिन हो रहा है, ऐसे में निराला का यह अद्‌भुत "संयोग" हमारे लिए प्रासंगिक हो जाता है। तात्कालिकता को अतिक्रान्त करती निराला की कविताएं किसी भी अनुभव के ध्रुवान्तों पर जाने से बच जाती हैं। इतना ही नहीं, अपितु वे (दोनों) ध्रुवान्तों को मिलाने वाली एक समन्वयकारी शक्ति के रूप में हमारे सामने आती हैं। आचार्य शुक्ल के शब्दों का इस्तेमाल करें तो कह सकते हैं निराला के यहां "विरुद्धों का सामंजस्य" मिलता है।

खासकर निराला की दूसरे दौर की रचनाएं (1932-35 के बाद) सामाजिक पक्षधरता को ज्यादा स्पष्ट करती है। संधिकाल की कविताओं में निराला की बदली हुई चेतना साफ़ नज़र आती है। 1935-36 में लिखी गयी रचनाओं में छायावादी प्रवृत्तियों का त्याग और साधारण/सामान्य का अपनाव-निराला में सर्जनात्मक प्रतिभाशील चेतना के बदलते हुए स्तरों का संकेत है। इसी दौर में निराला के काव्य में उपेक्षित-दलित के उन्नयन और जन-साधारण की प्रतिष्ठा के प्रति गहरी आस्था के दर्शन होते हैं। आज की सभ्यता किस प्रकार सामान्य जनता को दगा दे रही है, यह जो बात आज लोग सोच रहे हैं—उसकी मुक्ति का संकेत निराला की कविताओं में व्यापक रूप से मिलता है। आज जिस अंध-विश्वासी चेतना ने गुलाम मानसिकता का ईजाद किया है उससे ठगने वाली जनता धीरे-धीरे मृत्युगर्भ में घिसट रही है—आखिर जनता की यह भोली भाली आस्था ही तो थी जिसने जनता को कई बार ठगा—निराला इस आस्था पर चोट करते हैं। -"दगा की इस सभ्यता ने हर बार दगा की। अपनी कविताओं में इसी ऐतिहासिक पहचान की पृष्ठभूमि पर वे जन साधारण की प्रतिष्ठा का बीड़ा उठाते हैं।

आज इतिहास की पुनर्व्याख्या की जरुरत जान पड़ती है लोगों को। जब हम अपने दो हजार साल के इतिहास में तथा उसकी सामाजिक रचना में बार-बार जनसाधारण को टटोलते हैं तब यह सवाल उठता है वह कहां है। उसका पक्षधर कौन है? उसे कैसा व्यवहार मिला है? निराला की वैचारिक प्रतिबद्धता जनता के साथ है—साधारण जनता। निराला के अनुसार शोषक का कोई चरित्र नहीं होता है, वह तो बस पूरे सिस्टम को अपनी रखवाली के लिए रखता है—

"राजे ने अपनी रखवाली की
किला बनाकर रहा
बड़ी बड़ी फौजें रखी।"

और इस दुरभिसन्धि में कवि-लेखक भी शामिल हैं—

"कवियों ने उसकी बहादुरी के गीत गाये
लेखकों ने लेख लिखे
ऐतिहासिकों ने इतिहासों के पन्ने भरे
कितने नाट्य कलाकारों ने नाटक रचे
रंगमंच पर खेले।"

निराला उस समय ऐसे कवि-लेखकों की धज्जियां उड़ा रहे थे। जाति, वर्णव्यवस्था और ब्राह्मण संस्कृति द्वारा निचले वर्ग के लोगों को लगातार सदियों तक दबा-दबाकर उन्हें जर्जर बना देना तथा अन्ततः भारतीय मेधा का भी अपने स्वार्थों के लिए बड़ी चालाकी से इस्तेमाल कर लेना और आज के भारतीय समाज में भी उसकी पुनरावृत्ति पर पुनरावृत्ति—इसे निराला अच्छी तरह समझते थे और इसके खतरों से वे पूरी तरह आगाह

5 - 48/D. of OL/ND/97

है। 'विधवा', 'दीन', 'भिक्षुक', 'वनबेला', 'तोड़ती-पत्थर', 'कुकुरमुत्ता', 'गर्म पकौड़ी' आदि कविताएं निराला के "स्टैण्ड" को स्पष्ट करती हैं। पोलिश उपन्यासकार जोसेफ कोनराड ने कहा है कि "कविता मनुष्यता की मातृभाषा है।" "मातृभाषा"

ज्यादा महत्वपूर्ण है क्योंकि निराला क्रमशः वायवीय (कुछ हद तक कठिन भी) चेतना युक्त भाषा से मुक्त होकर जन-भाषा अपनाते हैं। अभिजात भाषा की मुक्ति को ध्यान में रखते हुए शायद केदारनाथ सिंह ने कहा है—निराला की कविता "परदेस से घर लौटने की कविता है।" केदारनाथ सिंह का एक वाक्य है—"बड़ा कवि अपनी कविता में एक छोटा छिद्र छोड़ देता है और आने वाला समय अपने अनुसार अर्थ डाल देता है।" निराला की कविताओं की यह अद्भुत विशेषता ही निराला की कविता को प्रासंगिक बनाती है। निराला की कविताओं में कई बार ऐसा होता है—जैसे राम की शक्ति पूजा में "राम" मिथक राम नहीं है, बल्कि वह आधुनिक संशय एवं दुविधाग्रस्त मानव के प्रतीक हैं। आज भी परिस्थितियों की जटिलता का समाधान दुर्निवार लगता है—ऐसे में राम की शक्तिपूजा का संदेश जीवनाकांक्षा के लिए एक नयी आशा का संचार करता है। शक्ति की मौलिक कल्पना की प्रेरणा देता है

टामसमान ने कहा है—"हमारे समय में मनुष्य की नियति को परिभाषित करने वाली शक्ति राजनीति है।" कदाचित् निराला पहले कवि हैं जो इस चेतना को पहचानते हैं। निराला अक्सर 'रिएक्ट' करते हैं। निराला यह बहुत अच्छी तरह जानते हैं कि किसको स्वीकृति देनी है और किसका विरोध करना है।

लेख के प्रारम्भ में आशय एवं माध्यम के जटिल एवं तनावपूर्ण संबंध की बात की गयी है—निराला इसको कैसे साधते हैं तथा भाषा एवं अभिप्रेत के बीच कलात्मक संतुलन को कैसे एक नया अर्थ देते हैं, इसके लिए एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

"श्याम तन भर बंधा यौवन
नत नयन प्रिय कर्म रत मन"

अब यहां अर्थ—सघनता की दृष्टि किस प्रकार हुई है—सुन्दर श्याम एवं बंधे यौवन वाली स्त्री के जीवन में एन्द्रिकता के लिए स्थान कहां है? उसे तो सुखी रहकर अपना जीवन गुजारना चाहिये था किन्तु यहां निरन्तर कर्मरत स्त्री का दृश्य है। इस वैषम्य में निराला यथार्थ के बीच जिन्दगी की "आयरनी" को उपस्थित करते है। अब यहां कवि का अभिप्रेत है कि भर बंधा यौवन के बावजूद वह स्त्री उस पत्थर को तोड़ रही है। कविता में प्रयुक्त भाषा इसी बात को रखती है, किन्तु कहीं यह अभिप्रेत अवांछनीय अर्थ की निष्पत्ति न करने लगे उसके लिए निराला ने "बंधा" शब्द का प्रयोग करके बहुत कुछ उक्त निष्पन्न खतरे से उसको बचा लिया है। "भर बंधा यौवन" उमड़ता नहीं है—बंधा है—स्थिति की विवशता और उस पर व्यंग्य; द्रष्टव्य है—आंद्रेबेंद्रोतो का एक कथन याद पड़ रहा है-"सुन्दरता अगर बेचैन करने वाली नहीं है तो वह सुन्दरता नहीं है। "सुन्दरता को उदात्त बनाने वाला निराला का यह छोटा-सा शब्द "बंधा" है। कई बार अभिप्रेत "माध्यम" (भाषा) से व्यक्त नहीं होता है उसके लिए निराला यथास्थान पर व्याकरण के नियमों को तोड़ देते हैं। उनके लिए "आशय" (कथ्य / अभिप्रेत) ज्यादा महत्वपूर्ण है। मुक्त छंद का प्रयोग शायद वह इसी लिए करते हैं क्योंकि उनके आशय बद्ध रूप में अंटते नहीं। निराला यह काम अपने सामाजिक संबंधों के परे जाकर करते हैं—"बाहर मैं कर दिया गया हूं। भीतर पर भर दिया गया हूं।"

आज का रचनाकार निराला को बड़ा कवि इसीलिए मानता है। लेकिन हर बात हर समय प्रासंगिक हो—ऐसा संभव नहीं। असुविधाजनक असंगतियों की तरफ ध्यान जाना ही चाहिए नहीं तो वर्तमान में उसकी प्रासंगिकता को सिद्ध करने के चक्कर में उसका अपना वैशिष्ट्य खोता जाएगा। क्योंकि प्रगतिशील तत्वों की छानबीन में रामचन्द्र शुक्ल, निराला, प्रेमचन्द एक जैसे ही दिखेंगे। कम से कम उक्त प्रासंगिकता कमोबेश एक जैसी दिखने लगेगी। नामवर सिंह ने भी इस बात की ओर संकेत किया है,—"इस प्रकार फौरी तौर पर यह प्रगतिवादी रणनीति भले ही कारगर प्रतीत हो, किन्तु अंततः यह आश्चर्यजनक एकरूपता ही उसे सन्दिग्ध बना देती है।" बर्तोल्ट ब्रेष्ट ने भी शायद इसी बात से चिंतित होकर "एलियनेशन इफेक्ट" नामक सुप्रसिद्ध प्रविधि का ईजाद किया था। नामवर सिंह ने आगे लिखा है—"यदि ब्रेष्ट के "अलगाव प्रभाव" को आलोचना के क्षेत्र में लागू करें तो अतीत की कृतियों को आज के लिए प्रासंगिक बनाने का सबसे वैज्ञानिक और वस्तुनिष्ठ ढंग यह है कि अपने और उनके बीच की दूरी को सुरक्षित रखा गया और इस प्रकार पाठकों में उस आलोचनात्मक विवेक को जाग्रत रखा जाए जिससे वे अतीत की महान से महान कृति के अपने अन्तर्विरोधों के प्रति सजग रहे।" आज का पाठक या आलोचक समुदाय इस खतरे से ग्रस्त है। किन्तु निराला का काव्य भाषा वाला पक्ष काव्य-सृजन के महत्वपूर्ण पक्ष को अपने ढंग से रखता है जिससे निराला के वैशिष्ट्य को खतरा कम जान पड़ता है।

निराला के काव्य की प्रासंगिकता इन्हीं संदर्भों एवं अर्थों में हैं। आज भी उनकी कविताएं सौन्दर्य बोधीय प्रतिमानों को आंक देती है। □

पुरानी यादें: नए परिप्रेक्ष्य

जैनेन्द्र : पुनर्मूल्यांकन की पेशकश

—विश्वंभरनाथ उपाध्याय

अंततः जैनेन्द्र जी भी हमें छोड़ गये और हिंदी में अपनी बांकी शैली, अपने नुक्तादां अंदाजे बयां, अपनी सबसे अलग राह और रीति से, अपने विचारों की मौलिकता या गांधीवादी-विचारधारा, मूल्य-परंपरा की प्रासंगिक व्याख्या से, संबंधों, विशेषकर, प्रेम संबंधों के क्षेत्र में, वैयक्तिक स्वतंत्रता की वकालत से तथा पाठकों को स्वतः खींचने की विलक्षण-शक्ति से जैनेन्द्र एक परिघटना, एक 'फिनोमेना' बन गये थे। किंतु सवाल यह है कि वह अपनी रचनाओं की उत्कृष्टता के कारण इतने ध्यानाकर्षक हुए या बहसों के कारण? वह भड़काने की ताकत, प्रवोक करने की क्षमता के कारण बड़े बने या सकारात्मक (पॉजिटिव) मनन-चिंतन-सृजन के सामर्थ्य के कारण?

जैनेन्द्र जी ने रचनाकार के रूप में, प्रेमचंद की रीति छोड़ दी, जिसमें 'महाकाव्यात्मक उपन्यास' और सुधारवादी कहानियां लिखी जाती थीं। इस 'विचलन' (Deviation) के बावजूद, प्रेमचंद उन्हें अपना पथबंधु मानते रहे। क्यों? इसलिए कि प्रेमचंद की निगाह में जैनेन्द्र अपनी राह-रीति अलग कर रहे थे किंतु सारतः जैनेन्द्र को समाज की चिंता थी। जैनेन्द्र ने, सामाजिक विषय में पारस्परिक जैनदर्शन वाला अहिंसा प्रेम वाला मार्ग चुना जिसे गांधी पहले ही चुन चुके थे किंतु जैनेन्द्र जी ने 'व्यक्ति' को पारस्परिक जैन धर्म की तुलना में अधिक स्वतंत्रता दी, उसे नयी आधुनिक नैतिकता दी कि उसे वर्जित या गतानुगतिक डिब्बे या संदूक में बंद समाज (Closed Society) को अस्वीकार कर, प्रेम संबंधों में, एक हद तक स्वतंत्रता का अधिकार है।

इस बिंदु के सिवा, जैनेन्द्र के अन्य विचार जैन-साधुओं की अपरिग्रही-अहिंसक क्षमामणिप्रधान हृदय परिवर्तनवादी परंपरा के ही हैं और यही परंपरा गांधी जी में मिलती हैं। अतएव जैनेन्द्र गांधीवादी कहलाते हैं जो वह है भी और वह जैन भी हैं क्योंकि जैन-अवधारणाओं का एक विशेष रूप उनमें मिलता है, महात्मा गांधी, में भी। अतएव जैनेन्द्र जी, सामाजिक विकल्प की दृष्टि से, नयी सामाजिक व्यवस्था की कशमकश में पूंजीवाद के अविरोधी हैं और समाजवाद या साम्यवाद के विरोधी हैं।

यह वास्तविक कारण हैं, जिससे श्री नरोत्तम नागर ने जैनेन्द्र को नकारा था, क्योंकि वह साम्यवाद विरोधी विकल्प पेश कर रहे थे। प्रेमचंद की समाजशास्त्रीय सामाजिक यथार्थवादी-परंपरा को छोड़ रहे थे और 'व्यक्तिवाद' के शिकार बन गये थे। चूंकि पूंजीवाद के मूल में व्यक्तिवाद है, अतः जैनेन्द्र के विचार और रचनात्मक लेखन, पूंजीवादी मानसिकता वाले 'आधुनिकों' या पैटी-बुर्जुआ वर्ग के पढ़े-लिखे तबकों में सर्वाधिक लोकप्रिय हो रहा था और इसी अल्पसंपत्तिशाली पढ़े-लिखे (इलीट) वर्ग को, जैनेन्द्र से ही प्रेरित होकर स० ही० वात्स्यायन 'अज्ञेय' ने प्रभावित-प्रेरित किया।

लेनिन ने लिखा है कि टटपूंजियावर्गीय विशेषता यह होती है कि यह वर्ग यानि इस वर्ग के प्रतिनिधि विचारक और लेखक, अपनी लघुवर्ग सीमा का अतिक्रमण नहीं कर पाते यानी कि यह बौद्धिक साहस नहीं जुटा पाते कि एक ऐसे समाज की परिकल्पना करें, उसके लिए लड़ें जो व्यक्तिगत संपत्ति-शोषणजन्य वैषम्य पर आधारित न हो।

चूंकि जैनेन्द्र और 'अज्ञेय', अपने साहित्य सृजन के न्ये आकर्षणों के बावजूद, अपने मूल में छिपे टटपूंजिया-मनोभाव और पैटी-बुर्ज्वा विचार प्रवाह को नहीं छिपा सके थे, अतएव हिंदी में प्रगतिशीलों, विशेषकर साम्यवादी साहित्यिकों ने इन दोनों का विकट विरोध किया। नरोत्तम नागर के सदृश डॉ० रामविलास शर्मा ने 'सुनीता' तथा 'परख' जैसे उपन्यासों में औरत के नग्नीकरण को, बुर्ज्वा या पूंजीवादी भोगवादी दृष्टि की उपज मानकर, जैनेन्द्र के 'साड़ी-जम्पर उतारवाद' पर आक्रमण किया। साम्यवादी अलोचकों ने प्रेमचन्द परंपरा का समर्थन किया और जैनेन्द्र-अज्ञेय-इलाचन्द्र जोशी के तथाकथित मनोविश्लेषक लेखन को यौन (सैक्स) और व्यक्तिवाद का साहित्य कहा। कुछ क्षेत्रों में यह अभिमत अभी भी चल रहा है।

जैनेन्द्र जी उक्त साम्यवादी पक्ष में निहित सामाजिक क्रांति, वर्गविहीन समाज की परिकल्पना के सत्य से वाकिफ न हों, ऐसा नहीं था, न यह कि वह साम्यवादी-विकल्प में निहित मानवप्रेम से अपरिचित थे किंतु उन्होंने सामूहिक आंदोलनात्मक रवैये में यह पाया कि व्यक्ति की उपेक्षा होती है। अतः उन्होंने 'व्यक्ति' को सर्वत्र अपने लेखन की धुरी में रखा है किंतु यह जैनेन्द्रीय—व्यक्ति, स० ही० वात्स्यायन 'अज्ञेय' तथा जोशी के 'व्यक्ति' से भिन्न है। इसे अभी तक परखा ही नहीं गया है।

जैनेन्द्र, प्रेमचंद का विचलन है, यह सही है किंतु उनका 'व्यक्तिवाद', अज्ञेय तथा जोशी इलाचंद के व्यक्तिवाद से भिन्न है और इस भिन्नता में ही जैनेन्द्र की व्यापक लोकप्रियता का रहस्य छिपा हुआ है।

जैनेन्द्र का 'व्यक्ति', जैनेन्द्रनुमा ही है, टिपीकल पूंजीवादी नहीं। यह विचित्र लग सकता है परंतु है यह सत्य क्योंकि जैनेन्द्र जी अमुक्त कामवासना की अनिवार्य उपस्थिति की ओर ध्यान खींचते हैं, क्रांतिकारियों का पतन नहीं दिखाते। उनके प्रेमी-प्रेमिकाओं में त्याग, आत्मसंयम और

परोपकार तथा मैत्री की होड़ है। जैसे 'त्यागपत्र' में। वह पतित से पतित 'व्यक्ति' में छिपी मानवता को दिखाते हैं। अतः जैनेन्द्र के लेखन में शरद् और कैवल्यी महावीर तथा महात्मा गांधी घुल-मिल जाते हैं, अतः जैनेन्द्र जी का 'व्यक्ति', एक मिश्रित या 'सिंथैटिक इंडीवीजुअल' है। वह सीधा, सपाट और अमिश्रित अथवा अजटिल नहीं है।

बंबई में, डा॰ महेन्द्र कार्तिकेय के एक लेखक सम्मेलन में जैनेन्द्र जी आये थे। डा॰ धर्मवीर भारती भी थे पर जैनेन्द्र जी वहां सपत्नीक पधारे जहां हम लेखकगण ठहराये गये थे। यह जैनेन्द्र जी की शान-ए-इंसानियत थी, 'ग्रेस' थी कि वह आये और हम सबके विशेषकर मेरे प्रहारों को झेलते रहे और अंत में अपने बेजोड़ अंदाज में बोले कि वह समाजवाद के विरुद्ध नहीं हैं किंतु वह 'व्यक्ति' में मानवप्रेम के रूप में जगे, तब है। उन्होंने कहा कि यदि क्रांति का मूलाधार प्रेम है तो वह क्रांतिकारी है। शोषित-दलित जन के प्रति गांधी जी में प्रेम था, उनमें (जैनेन्द्र) भी हैं और आप बलात् शोषकों को बेदखल करना चाहते हैं। हम कह रहे हैं कि प्रेमी हो, जैनी हो तो धन को, सबकी धरोहर समझो... यह हृदयपरिवर्तन का मार्ग अधिक स्थायी है...धन के प्रति जो ममत्व है, वह छोड़ो, वह क्रांतिकारियों को भी भ्रष्ट कर देता है, सो यह ममत्व, यह अहम् यह त्वम्, यह जो 'मैं पन' है, इसके विरुद्ध मैंने लिखा है। प्रेम, अहम् और मोह को छोड़ें बिना संभव ही नहीं है... मैं हिंसा के विरुद्ध हूं, प्रेम से परिवर्तन का समर्थक....।

एक वाक्य में वह 'गांधीवादी समाजवादी' प्रकार के विचारक थे। जब मैंने उनसे उनके चिन्तन को अव्यवहार्य कहा कि वह स्वैच्छिक अपरिग्रह बंहिएबिल, (व्यवहार्य) नहीं है, कल्पना प्रसूत है, सद्भावना मात्र, तो जैनेन्द्र जी ने कहा था कि यह तो भविष्य में साबित होगा। यदि भारत को स्वतंत्रता अहिंसक मार्ग से मिल सकती है तो सामाजिक संरचना में परिवर्तन हिंसा के बिना क्यों नहीं हो सकता?

सारतः जैनेन्द्र जी, 'व्यक्ति' को आध्यात्मिक ऊंचाइयां देते हैं किंतु जैविक पर वह उसकी संतुष्टि भी चाहते हैं। ऐसा जैनेन्द्रीय 'व्यक्ति' विरोधाभासी लग सकता है किंतु स्वयं जैनेन्द्र में परस्पर विरोधी तत्वों का एक जैनेन्द्रीय समन्वय था। यही तो उनके व्यक्तित्व का वैशिष्ट्य था कि वह प्रचलित कोटियों से परे चले जाते हैं।

जैनेन्द्र के कथासाहित्य में सत ही सामाजिकता या सामूहिकता की जगह, अपने अंतःकरण, अपने मन तथा अपनी चेतना का आमना-सामना है और यह इतने निरालेपन के साथ है कि उसका अनुकरण संभव नहीं। जैनेन्द्र जी की भंगिमा वस्तुतः पुराने तत्वदर्शियों की थी जो बात निकाल कर, स्थूल से सूक्ष्म की ओर चलते थे। मैं तब आगरा कालेज में था, 1958-59 की अवधि होगी शायद। ठीक से याद नहीं। उनसे पूछा कि कहानी किसे कहते हैं? उन्होंने पलट कर पूछा कि आप बताइए। कहा गया, 'कहानी वह जो अच्छी लगे।' जैनेन्द्र ने बताया, 'कहानी वह जो अच्छी लगती रहे।'

जैनेन्द्र के वर्णनात्मक लेखन की जगह मननात्मक लेखन (कन्टैम्प्लेटिव) की नयी रीति चलायी। इस मननशीलता के कारण ही जैनेन्द्र आकर्पित करते हैं। वह चिंतन करने को मजबूर करते हैं। वह उत्तेजना, क्रोध, आंदोलन, उग्रता, सामूहिकता और सतहीपन के विरोध में खड़े हुए और उन्होंने मनुष्य के मन को छुआ। उस मन को उन्होंने साम्यवादी मूल्यवाद के विरुद्ध खड़ा किया, अतः वह वर्जित कामवासना से ग्रस्त भारतीयों में सर्वाधिक प्रिय लेखक बन गये।

जैनेन्द्र मन के मित्र लेखक हैं और मन को संतुष्ट करने के लिए वह उपन्यासों में प्रेम का त्रिकोण रचते हैं किंतु अंत में हमें लगता है कि वह टिपीकल रोमानी लेखन नहीं कर रहे हैं बल्कि वह मानव-संबंधों में क्रांति कर रहे हैं यानी मनुष्य को वह संबंधों में स्वतंत्रता देते हैं किंतु इतने ऊंचे और गहरे स्तर पर कि प्रेमी परमात्मा होने लगता है।

क्या अज्ञेय और इलाचंद्र जोशी या बाद के लेखकों में जैनेन्द्रीय 'व्यक्ति' का सिलसिला है या जैनेन्द्रीय व्यक्तिवाद, सबसे परे की कोई स्वगत अवधारणा है। मेरा मत है कि जैनेन्द्र फ्रायडीय-पुस्तक मनोविश्लेषण से भी परे गये हैं, अतः वह सबसे भिन्न और अनोखे हैं, मौलिक और मननशील हैं।

इस दृष्टि से वह शरद्चंद्र से प्रेरित होकर भी उनसे भिन्न हैं। अभी तक सादृश्य खोजे गये हैं, भिन्नताएं नहीं। मेरी देखरेख में डा॰ नीरू खींचा (हिंदी विभाग, जे॰ बी॰ शाह महिला महाविद्यालय, झुंझुनूं) ने शरदचन्द्र और प्रेमचंद के कथा साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन किया है किंतु मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूं कि तुलना जैनेन्द्र और शरद् की होनी चाहिए। प्रेमचंद तो शरद् की परंपरा, या रीति-राह के विरोधी थे। प्रेमचंद का लेखन, सामाजिक हस्तक्षेप का लेखन है, वहां यह माना गया है कि 'व्यक्ति' की समस्या का समाधान भी अंततोगत्वा समाज के वांछनीय परिवर्तन में ही निहित है क्योंकि बुभुक्षित-व्यक्ति का कोई व्यक्तित्व नहीं होता क्योंकि उसके सामने समस्या अस्तित्वरक्षण की होती हैं, व्यक्तित्व की नहीं।

जैनेन्द्र जी के साहित्य का, उसमें चित्रित 'व्यक्ति' का, वर्णित मूल्यों और समस्याओं का पुनर्मूल्यांकन हो, यह समय की मांग है किंतु यह याद रहे कि जैनेन्द्र जी का व्यक्तित्व, उनका अपना 'व्यक्ति', जितना मानवीय था, जितना उदार, सहनशील, जितना आत्मीय, उतना अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। अंतिम बार मैंने उन्हें झालावाद में एक परिसंवाद में देखा था। सभा में तो वह अप्रभावक रहे परंतु शाम को, मुझे और जैनेन्द्र जी को, स्थानीय लेखकों ने एक गोष्ठी में बुलाया। वहां भी मैं जैनेन्द्रीय दर्शन और दृष्टि के विरुद्ध बोला और उन्हें जनक्रांति में बाधक बताया, उनके प्रेम और समाज-दर्शन को 'हवाई' कहा किंतु जैनेन्द्र जी ने वही अपनी चिरपरिचित शैली में अपने विचारों का समर्थन किया और ज़ब हम लौटे तो वह बोले —"आप औरों से, अन्य साम्यवादियों से, भिन्न हैं, स्वयं सोचते हैं,...आपको नहीं लगता कि आप में एक जैनेन्द्र बैठा हुआ है?'

एक अपनत्व भरा अट्टहास हुआ किंतु मैं यही सोच रहा हूं कि जहां मननशीलता होगी, वहां जैनेन्द्र की उपस्थिति अवश्य होगी।

जैनेन्द्र जैसा लेखक हिन्दी में जन्मा, इससे हिंदी अपने पर गर्व कर सकती है।

* * *

अज्ञेय: मेरे आईने में

—पवन चौधरी 'मनमौजी'

सन् 1977 ही की तो बात है। मुझे अंगरेजी के अतिरिक्त, हिन्दी में भी लिखने की लत लग चुकी थी। अज्ञेय जी नवभारत, टाइम्स के संपादक थे। उनके बारे में मुझे कुछ मालूम नहीं था। उनके नाम तक से मैं अपरिचित था। कारण? मैं कानून का एक साधारण सिपाही था।

'क्यों न नवभारत टाइम्स में लेख लिखने के लिए कोशिश की जाए'। एक दिन, लिखने की लत से मजबूर, मेरे मस्तिष्क में सहसा विचार आया। इस विचार को अमली जामा पहनाने के लिए मैंने इस अखबार के संपादक से मुलाकात करना आवश्यक समझा। उन्हीं दिनों, मेरे एक मित्र रमेश गौड़ भी इसी अखबार में कार्यरत थे। मैंने उनसे संपादक महोदय से मिलवाने के लिए आग्रह किया।

'पंडित जी, संपादक महोदय से मिलना इतना आसान नहीं है, जितना कि आप सोच रहे हैं।" रमेश ने मुझे समझाया। साथ ही, विश्वास भी दिलवाया कि उपयुक्त अवसर आने पर वह मेरी मुलाकात करवा देगा।

दो-तीन महीने पश्चात्, रमेश ने मेरे घर टेलीफोन किया। उसने सूचना दी कि संपादक महोदय ने अगले दिन दोपहर बाद चार बजे मिलने के लिए समय दिया है। मुझे आगाह भी कर दिया कि संपादक महोदय समय के बहुत पाबंद हैं। उन्होंने संपादक से मिलने से पूर्व दफतर में उनसे मिलने का सुझाव भी दिया, ताकि वह मुझे आवश्यक सलाह दे सके। चूंकि वे मेरे मित्र थे, और उन्होंने ही मेरी इस मुलाकात का प्रबंध किया था, उनकी यह हार्दिक अभिलाषा थी कि मैं इस इंटरव्यू में सफल होऊं। इस इंटरव्यू में सफल होने का मतलब मैदान मार लेने समान था।

साढ़े तीन बजे, कलाई पर बंधी घड़ी के निर्देशानुसार, मैं कवि-मित्र रमेश गौड़ के दफतर में उनके सामने जा खड़ा हुआ। उन्होंने अपने मुंह पर मुस्कुराहट बिखेरी, मेरा अभिवादन स्वीकार किया। मुझे कुछ समझाया कि संपादक महोदय से किस प्रकार बात करनी है। समझाने से अधिक शुभकामनाएं दीं, अपने मन मंदिर में मेरी सफलता के लिए कामना के कई दीप भी जलाए।

ठीक चार बजे, संपादक महोदय के कमरे के बाहर निजी सेवक नत्थू राम खड़ा था। उसने मुझे संपादक के आमंत्रण का इशारा किया। मैंने संपादक के कमरे में प्रवेश किया। कुर्सी छोड़ते हुए, दोनों हाथ जोड़ते हुए, उन्होंने अपनी अद्‌भुत मुस्कुराहट और 'नमस्कार' द्वारा मेरा अभिवादन किया, मानों साहित्य का कृष्ण अपने सुदामा से मिल रहा हो, मन ही मन असीम प्रसन्नता महसूस कर रहा हो। उनकी असीम सज्जनता के कारण एक क्षण के लिए मेरा आश्चर्य में डूब-सा जाना, अवाक-सा बन जाना स्वाभाविक था।

"हुजूर, पेशे से तो मैं वकील हूं। मगर लिखने का शौक है। आपके पत्र में कुछ लिखने की अभिलाषा है। यदि आप अनुमति दें तो .... ।

"आप क्या लिखते हैं?"

"मैं अधिकतर कानूनी विषयों पर लिखता हूं।"

"किस प्रकार के कानूनी विषयों पर?"

"मैं आम आदमी के लिए आम आदमी की भाषा में लिखता हूं ताकि आम आदमी कानून के बारे में जान सके।"

"आप कानून और इंसाफ में क्या अंतर समझते हैं?"

"इस समय तो मैं अधिक नहीं बता सकता। फिर भी, कानून धरती पर है और इंसाफ आसमान पर। कानून कागज की सड़क पर, नियमों की पटड़ी पर रेंगता है, जबकि इंसाफ, आजाद पक्षी के समान, खुले आकाश में उड़ता है।"

"ऐसा है कि फिलहाल एक महीने में केवल एक लेख ही छप सकता है। 'आम आदमी और कानून' पर एक लेख भिजवा दीजिए।" उन्होंने निर्णय सुनाया।

मैंने विदाई की अनुमति चाही।

"तो आप लेख कब तक भिजवा देंगे?" अनुमति देने से पूर्व उन्होंने पूछा।

"शीघ्र, अगले मंगलवार तक," मैंने विश्वासपूर्वक उत्तर दिया।

इस पहली मुलाकात के पश्चात्, अज्ञेय जी से मैं निरंतर मिलता रहा। मिलने का सिलसिला लगभग दस वर्ष तक चला। उन्होंने 'चौधरी कुटीर' का शिलान्यास किया, मेरी चार पुस्तकों का लोकापर्ण किया। 'चौधरी कुटीर' में गृह प्रवेश किया। मुझे आशीर्वाद दिया। 'युगास्त' यानी उनके निधन के पश्चात् मैं उनके आस-पास था, 'अलविदा' और 'शुद्धिकरण' के समय भी, और वो तो आज भी मेरे मकान एवं मन मंदिर में विराजमान हैं। 'निधन' के पश्चात् भी, वो एक बार सपने में मुझे अपने साथ विदेश ले गए। वहां उन्होंने मेरे लिए सुन्दर सफारी सूट अपनी पसंद का सिलवाया। एक बार मुझे पलंग पर अपनी कविताएं भी सुर में सुनायी।

मेरे आईने में, अज्ञेय जी सार्थकता के प्रतीक थे, एक महापुरूष थे, इन्द्र धनुषी अवतार थे। विश्व में, व्यक्तित्व की व्याकरण और कृतित्व की कविता में अव्वल थे। वो सदा कुर्सी अथवा पद के ऊपर विराजमान होते थे, उसके नीचे नहीं। उनका खाना खाने का अंदाज अनोखा था। वो थाली के अंदर और बाहर रखी सभी कटोरियों और उनके अंदर सभी व्यंजनों को एक समान सम्मान देते थे।

वे व्यवस्था द्वारा आम आदमी के लिए बनाए गए कानून में कम आस्था रखते थे, इंसाफ में अधिक विश्वास रखते थे। वो इंसाफ की दुनिया के नागरिक थे।

वे अखबार के पर्दे के पीछे रह कर सुधार की भूमिका अदा करना अधिक पसंद करते थे और पर्दे पर हीरो बनना अथवा दिखना कम। वे अपने अखबार के शरीर पर सजने में कम विश्वास रखते थे और उसकी आत्मा में रचने-बसने में अधिक। उन्हें अखबार का साज बनने की बजाय, इसकी आवाज बनना और सुनना अधिक पंसद था।

अज्ञेय जी रचनाकार और रचना दोनों को एक समान महत्व देते थे। वे मैडम - रचना के मूड़-मिजाज के मुताबिक ही मिस्टर अखबार को मेकअप - माहौल तैयार करने के लिए मजबूर किया करते थे। अज्ञेय जी अपने और अपने विचारों के प्रति सदैव सजग रहते थे। पाठक समाज के स्वास्थ्य और सौंदर्य का पूरा ध्यान रखते थे, इन्हें संवारने-सजाने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहते थे। वे अपने प्रिय पाठक समाज को कोई 'शराब' अथवा 'शरारत' पेश करने की बजाय, केवल 'शरबत' और 'शराफत' पिलाने के लिए दृढ़ संकल्प थे, भले ही यह समाज इस 'शराब' और 'शरारत' के लिए कितना ही लालायित क्यों न हो। वे स्वयं को पाठक समाज का, सच्चे अर्थ में, एक साहित्यक चिकित्सिक समझते थे।

उन्हें अपनी पसंद, पहचान, प्रयास, परिचय और रखन नामक प्रियसियों पर पूर्ण गर्व था और इन सभी को उन पर अक्षेयजी साधारणतः सोचे-समझे जाने वाले माली नहीं थे। उन्होंने अन्य परिभाषाओं, मूल्यों, मर्यादाओं, मान्यताओं, इत्यादि के समान, माली की परिभाषा, मूल्य और मान्यता की सीमाएं भी तोड़ डालीं, अपने व्यक्तित्व, कृतित्व, विचारधारा और कलम द्वारा।

अज्ञेय जी अत्यंत स्वाभिमानी थे। वे केवल स्वाभिमानी ही नहीं थे, वे दूसरों के स्वाभिमान के प्रति भी पूरी तरह सजग थे। उनको कानून की सुगंध की अपेक्षा इंसाफ की शुद्ध हवा अधिक पसंद थी।

मेरे मन में अज्ञेय साहित्य को पढ़ने की तीव्र जिज्ञासा रही है। इस जिज्ञासा को संतुष्ट करने में असफल रहा हूं। पिछले दिनों, मैंने इसे संतुष्ट करने का श्रीगणेश कर दिया है। देश 'कानून' के 'इंसाफ' कस्बे में बेगम 'नगीना' से विवाहित होने के कारण, मेरा उनके साहित्य में 'कानून और इंसाफ' के प्रति आकर्पित होना स्वाभाविक है, प्रभावित होना भी अस्वाभाविक नहीं है। उनकी कानून और इंसाफ एवं पराधीनता तथा स्वाधीनता संबंधी सोच कितनी स्पष्ट है, यह इस कथन से साबित हो जाता है:

> कानून की चौहद्दी एक चीज़ है और इंसाफ दूसरी चीज़। हमारा हक समाज कानून की चौहद्दी में रहना तो सीख गया है, बल्कि कंह सकते हैं कि 'नित-नेम' के अक्षरशः पालन की तो उस की लम्बी परम्परा रही है— लेकिन इंसाफ से कोई फालतू सरोकार उसने नहीं रखा है। कानून की चौहद्दी में रहता हुआ वह नाइंसाफी देखता भी है, सहता भी है और करता भी है। इंसाफ की हत्या से भी उसे बहुत बेचेनी नहीं होती जब कि नाइंसाफी देख कर भी उसे व्याकुल हो जाना चाहिए।
>
> कानून केवल नकारात्मक पक्ष है। न्याय का धन-पक्ष संकल्प की अपेक्षा रखता है। इंसाफ हो और नाइंसाफ न होने पाये, जब तक हम इसके लिए कृतसंकल्प नहीं है तब तक समाज में इंसाफ नहीं है, न्याय नहीं है, धर्म भी नहीं है : केवल कानून है, केवल व्यवस्था है जिस से हम बंधे हैं।
>
> वास्तव में पराधीनता के अन्त और स्वाधीनता में भी ऐसा ही अन्तर है। पराधीनता का बन्धन न रहने से ही हम स्वाधीन नहीं हो जाते, स्वाधीनता भी संकल्प मांगती है और वह संकल्प केवल स्वाधीनता के भोग का नहीं, उसके दूसरे तक प्रसार का संकल्प है। जो पराधीनता में इतने-भर से संतुष्ट हैं कि 'हम पर तो कोई बन्धन नहीं है', 'वे दूसरे की स्वाधीनता का छिनना देख लेते हैं, बल्कि स्वयं छीन लेते हैं। स्वाधीनता भी न्याय की तरह अविभाज्य और संकल्पमूलक है।

अज्ञेय जैसे व्यक्तित्व एवं कृतित्व को सामने देखकर कौन आईना मन ही मन 'मस्त-मस्त' नहीं गुनगुनाएगा, उनकी मिश्रित महक से लहलहाएगा।

"अगर आज हिन्दी भाषा मान ली गई तो वह इसलिए नहीं कि वह किसी प्रांत विशेष की भाषा है, बल्कि इसलिए कि वह अपनी सरलता, व्यापकता तथा क्षमता के कारण सारे देश की भाषा है"

–नेताजी सुभाष चन्द्र बोस

पंजाबी कविताः

भारत के गगन का इन्दु

—भाई वीर सिंह

वह सोया था सड़क के किनारे
धरती की गोद में
बिछी हुई सी उस गोद में
बिछा हुआ था हरी-हरी दूब का बिछौना
फैल रही थी चतुर्दिक मीठी-सौंधी सुगंध
हवा जो बह रही थी हौले-हल्के
ठिठक कर खड़ी हो गई किसी युवती की तरह
पूछा उसने: कौन है यह अपनी महक में
मुझे मगन कर देने वाला?
किस माता का सपूत है यह?
किस सौभाग्यवती का सुहाग है यह?
धरती बोली: यह सुगन्ध है
साकार सुगन्ध है यह
सुगन्ध फैलाना गुण है इसका
और इसी लिए इसे 'गांधी' कहते हैं !

हवा हिली-डुली तो धरती बोली:
सुगन्ध देने वाले को मत छेड़
कहीं ऐसा न हो विलीन हो जाये यह
साकार सुगन्ध

अरी भोली, सुगन्ध देने वाला यह
अभी तो हमारी आंखों का विषय है
कहीं सुगन्ध ही सुगन्ध हो गया है
तो आंखो का विषय नहीं रहेगा
और ओझल हो जायेगी फिर यह सुगन्ध
मेरी तेरी आंखो से!

हे मनुपुत्र, तू रचा ही इस लिए गया था
कि अपने आस पास की पीड़ा समझे
सहानुभूति का माद्दा दिया गया था तुझे
मगर ओ निर्लज्ज
जब क्रूर हो उठता है तू
तो करूणा-विहीन जड़-धरा भी जेल जाती है
कांप जाती है तेरे मन की पाषाणता देखकर!
एक ऐसा भी समय था जब देवता आते थे
तुझसे सहानुभूति
करुणा
और प्रेम का पाठ लेने!
मगर हाय,
आज तू गिरता ही चला जा रहा है
हिंसक पशुओं से भी अधिक नीचे-नीचे
क्या यही है तेरी सभ्यता?
ठांय ठांय गोली की आवाज हुई
और हत्यारे ने कहा:
सदा के लिए बन्द हो गई उसकी आवाज
अब कभी सुनाई नहीं पड़ेगी वह!
ताली बजाई इतना कह कर उसने
शिन्तु जैसे कंकर फेंके कोई सरोवर में
और लहर पर लहर उठे
फैल जायें उठी लहरें एक किनारे से दूसरे किनारे तक

ऐसे ही फैल गई
संसार के इस इस छोर से उस छोर तक
'गांधी की जय?'

सिन्धी कविताएं

मूल कवयित्रीः कला प्रकाश
अनुवादकः भगवान अटलानी

एक

घर भी तेरा
वर भी तेरा!
जैसे हैं वर में प्राण
वैसे हैं घर में प्राण
इस घर के आंगन में
धूप कब आती है
और कब जाती है
द्वार पर आहट
दूध वाले की है
या किसी साधु फकीर की
बड़ी, पापड़ कब बनेंगे
अचार कौन से महीने में
डाला जायेगा
गेहूं, चावल
कितना काम में आता है
हर साल
रसोईघर में भगौने कितने हैं
थालियां, कटोरियां कितनी हैं
बिस्तर, तकिये कितने नये बनवाने हैं
इस साल
सब तेरी अंगुलियों पर हैं
सहेजना तो तेरा दुल्हन !
घर भी तेरा है
तेरा चेहरा मैला क्यों है?
तेरा मैला चेहरा देखकर
मेरा जी मैला हो जाता है

दो

घर भी तेरा
वर भी तेरा
तू है मेरे मन का मोती
आबदार आँखें
आसमान की तरह खुला मस्तक
जुबान खोले तो
सुनने वाला सम्मोहित हो जाये
मैंने तो दुल्हन!
अकेली जान हाड़ तोड़ कर
दीवारों से बातें करते
जीवन काटा
तूने आकर मेरी सारी थकान
उतार दी
मेरी सदा भाग्यवान बहू!
तू दिल को छोटा मत करना
लड़के का चलुबुलापन
अधिक समय नहीं चलेगा
घर भी तेरा है
वर भी तेरा है
तेरा चेहरा कुम्हलाया हुआ क्यों है?
दुल्हन! तेरा कुम्हलाया हुआ चेहरा देखकर
मेरा जी कुम्हला जाता है

तीन

घर भी तेरा
वर भी तेरा!
"हां बाबा"
"जी बाबा"
"अभी आई"
"जैसा कहे"
"अच्छा बाबा, हाजिर बाबा"
ऐसे बोल, बोल-बोलकर
अपने ससुर पर
ठण्डे छींटे तूने आकर डाले
नहीं तो वे ऐसे थे
जैसे आग की लपट!
उन्हें कुल्ले-दातुन
खान-पान
चिलम-दवा
हर जरूरत का समय मालूम है तुझे
उनका चेहरा देखकर
तू समझ जाती है
कि अब उन्हें क्या चाहिये
तुझ जैसी सुघड़ बहू
सब को मिले
घर भी तेरा है
वह भी तेरा है
दुल्हनः तेरा चेहरा बुझा हुआ क्यों है?
तेरा बुझा चेहरा मेरा जी बुझा देता है

चार

घर भी तेरा
वर भी तेरा!
कुछ दिनों के लिये मायके जाये
वहां भी चिन्ता ससुराल की
मैं कितना ही कहूं
सारी उम्र घर संभाला है
अब दस पन्द्रह दिनों की ही तो बात है
संभाल लूंगी
चिन्ता मत कर
तू तुरन्त कहेगी
"घर तो आप संभाल लेंगी
लेकिन अपना ध्यान नहीं रखेंगी...."
वहां से पत्र भी ऐसे लिखेगी
कि रो पड़ती हूं
लिखती है
"उस फूहड़ अंगूरी से कहियेगा
आपके घुटनों की मालिश
नियमित रूप से करे
नहीं तो जवाब मिल जायेगा काम से
और बाबा को धुले कपड़े
रोजाना समय पर देती है या नहीं?
अम्मी! आपको कोई तकलीफ तो नहीं है?
कहें तो मैं आज ही लौट आऊं!"
तूने मायके सहित खुद को
न्यौछावर कर दिया है हम पर
घर भी तेरा है
वर भी तेरा है
दुल्हन! तू क्यों बेचैन होती है?
तुझे बेचैन देखकर
मेरा जी बेचैन हो जाता है

पांच

घर भी तेरा
वर भी तेरा!
तेरे चहरे पर सदा मुस्कराहट
तुझसे पास-पड़ोस खुश
मेहमान सन्तुष्ट
बेटी-दामाद का सत्कार ऐसा करे
कि अघा जायें
समधियों के लिये इस साल
विशेष क्या किया जाये,
बैठी सोचती रहेगी
आ तो जाये कोई मेरे मायके से!
हथेली पर सौ दीये जला लेगी
कहेगी, अम्मी आपके यहां
आने की स्थिति में नहीं है
आप लोगों को तो जल्दी-जल्दी आना चाहिये न!

तेरे स्नेह-अपनत्व ने
खरीद लिया है मुझे
घर भी तेरा है
वर भी तेरा है
दुल्हन! तू उदास क्यों है?
तेरा उदास चेहरा देखकर
मेरा जी डूबने लगता है

छह

घर भी तेरा
वर भी तेरा!
प्यार करने में तू पारंगत
लड़के ने घर में पैर रखा नहीं
कि तेरा रूप ही बदल जाता है
पांव जमीन पर नहीं पड़ते
हवा में चलती है
कोई पक्षी भी तेरी उड़ान की
बराबरी न कर सके
ऐसा व्यवहार तेरा
जैसे फूल चुनती हो
सितारों को पकड़ती हो
रागिनी गाती हो
चांदनी पीती हो
लड़के को दुर्भाग्य ने रस लिया है
तुझ जैसी मूमल घर में
बाहर धूल में लोट रहा है
लेकिन मैं तुझे लिखकर देती हूं, दुल्हन!
लड़का धक्के खाकर
लोट आयेगा
घर भी तेरा है
वर भी तेरा है
दुल्हन! तू जी छोटा मत कर
तेरा उतरा चेहरा देखकर
मेरा जी उतर जाता है......

☆☆☆

"हिंदी का प्रचार किया जा रहा है, इसका कारण उसकी साहित्यिक समृद्धि नहीं है (इस विषय पर किसी विवाद में उलझना महत्वहीन है) वरन् इसलिए क्योंकि वह सबसे अधिक व्यक्तियों द्वारा बोली और समझी जाती है और वह एक सरल तथा लचीली भाषा है।"

सुभाष चन्द्र बोस

हिन्दी साहित्य के सुप्रसिद्ध आलोचक और भारतीय तथा विश्व वाङ्मय के मर्मज्ञ अध्येता डॉ० रामविलास शर्मा ने 'इतिहास और समकालीन-परिदृश्य' शीर्षक से एक पुस्तकमाला तैयार की है जो दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय द्वारा हाल ही में प्रकाशित की गई है। इस पुस्तकमाला के चारों खण्डों की समीक्षा करने के लिए हमने जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय की रिसर्च स्कॉलर डॉ० गीता शर्मा से अनुरोध किया था। डा० गीता शर्मा ने डा० रामविलास पर विशिष्ट अनुसंधान कार्य भी किया है। उक्त पुस्तक-माला के पहले खण्ड 'ऋग्वेद, आर्यजन और पश्चिमी एशिया' की समीक्षा राजभाषा भारती, जुलाई-सितम्बर, 1996 (अंक-74) में और चौथे खण्ड 'भारतीय नवजागरण और यूरोप' की समीक्षा राजभाषा भारती अक्तूबर-दिसम्बर, 1996, (अंक-75) में छप चुकी है। इस अंक में उसी पुस्तकमाला के दूसरे व तीसरे खंडों यथा, 'स्वाधीनता संग्राम : बदलते परिप्रेक्ष्य' व भारतीय इतिहास और ऐतिहासिक भौतिकवाद' की समीक्षाएं प्रकाशित की जा रही हैं।

— संपादक]

स्वाधीनता संग्राम और समकालीन भारत

[पुस्तकः स्वाधीनता संग्रामः बदलते परिप्रेक्ष्य, लेखकः डा० राम विलास शर्मा, प्रकाशकः हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, मूल्यः 35.00 रु०]

समीक्षित कृति दिल्ली विश्वविद्यालय के हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय द्वारा प्रकाशित "इतिहास और समकालीन परिदृश्य" शीर्षक पुस्तकमाला का पहला खंड है। डॉ० रामविलास शर्मा की "स्वाधीनता संग्रामः बदलते परिप्रेक्ष्य" शीर्षक इस कृति में उनके कुल अठारह निबंध संकलित हैं। इनमें से 'कांग्रेसी मंत्रिमंडल और किसान आंदोलन' (अगस्त 1941 में 'हंस' में प्रकाशित तथा डॉ० शर्मा के संग्रह 'विराम चिन्ह' में संकलित) लेख को छोड़कर शेष सभी सत्रह लेख पहली बार यहीं संकलित हुए हैं। इस पुस्तक की एक अन्य उल्लेखनीय विशेषता यह है कि इसमें संकलित चार सुदीर्घ एवं विस्तृत आलेख, 'नवजागरण की परंपराएं और क्रांतिकारी आंदोलन' शीर्षक के अंतर्गत क्रमशः 'सन्यासियों का योगदान', 'क्रांतिकारियों का योगदान' तथा 'राजस्थान के कवियों और क्रांतिकारियों का योगदान' शीर्षक तीन आलेख और 'स्वाधीनता आंदोलन की गदर-परंपरा और स्वदेशी' शीर्षक अंतिम आलेख सर्वप्रथम यहीं प्रकाशित और संकलित हुए हैं। इस दृष्टि से यह पुस्तक रामविलास शर्मा के जिज्ञासु अध्येताओं के लिए विशेष महत्व रखती है।

इस संकलन की सबसे उल्लेखनीय विशेषता यह है कि इसमें शामिल किये गये अठारह आलेखों में 1940-41 के निबंधों से लेकर बिल्कुल इधर के 1990-91 के दौरान लिखे गये लेख मिलकर एक समग्र कृति का रूप ले लेते हैं। पुस्तकमाला के संपादक ने अपनी 'भूमिका' में इस तथ्य को रेखांकित करते हुए लिखा है कि इसमें "1857 के स्वाधीनता संग्राम से लेकर राष्ट्रीय एकता के लिए भारतीय जनता द्वारा किये जा रहे वर्तमान संघर्षों तक की एक मुकम्मिल तस्वीर पेश" की गयी है। संपादक की इसी 'भूमिका' में इस कृति की एक अन्य उल्लेखनीय विशेषता की ओर भी ध्यान दिलाया गया है: 'यह सन्' 40 से सन्' 91 तक के निबंधों का संकलन होने के कारण डॉ० शर्मा के आधी शताब्दी से अधिक के लेखन काल को समेटने वाली एक दुर्लभ कृति बन गई है। इसके आधार पर सहज ही उनकी भाषा-शैली के क्रमिक विकास को उजागर करते हुए उसके विविध आयामों को रेखांकित तथा विश्लेषित किया जा सकता है। इस दृष्टि से भी यह पुस्तक हिंदी विद्वानों, हिंदी के शैलीकारों और शैलीतत्व विवेचकों के आकर्षण का केन्द्र होगी।" इसमें संदेह नहीं कि यह पुस्तक डॉ० शर्मा के पाठकों के लिए दिल्ली विश्वविद्यालय की एक अनुपम भेंट है।

समीक्षित कृति भारत के इतिहास के आधुनिक काल खंड को समेटते हुए मुख्य रूप से यह प्रतिपादित करती है कि लगभग दो सौ वर्षों से हमारे देश की मुख्य समस्या राष्ट्रीय स्वाधीनता और राष्ट्रीय एकता की समस्या रही है। आजादी से पहले स्वाधीनता संग्राम के दौरान ही नहीं बल्कि 1947 में स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद भी हमारी मुख्य समस्या यही रही है— केवल उसका परिप्रेक्ष्य बदलता रहा है। इस दृष्टि से पुस्तक का नाम भी विशेष अर्थ-व्यंजक है। इस मुख्य समस्या के विवेचन के क्रम में डॉ० शर्मा का ध्यान सर्वप्रथम 1857 के स्वाधीनता संग्राम की ओर जाता है। अपनी 'पुस्तकमाला' शीर्षक प्रस्तावना में डॉ० शर्मा सन् सत्तावन की इस महाक्रांति की सबसे बड़ी विशेषता यह बतलाते हैं कि इसका नेतृत्व पूंजीपतियों और पूंजीवादी पार्टियों के हाथ में नहीं था। स्वयं उन्हीं के शब्दों में "इसके नेता फौजी वर्दी पहने हुए किसान थे और वे सामंतों को अपने साथ लेकर चले थे, उनके पीछे न चले थे।" स्वभावतः पुस्तक का पहला लेख 'सन् सत्तावन के स्वाधीनता संग्राम में सिपाहियों की भूमिका' है, जिसमें इन क्रांतिकारी स्वाधीनता सेनानियों के माध्यम से 'गदर' की विशेषताओं और उसके ऐतिहासिक महत्व का संक्षिप्त विवेचन किया गया है।

सन् सत्तावन के सशस्त्र संग्राम के बाद हमारे स्वाधीनता आंदोलन की मुख्य लहर सांविधानिक दायरे के भीतर चलती रही, जो कभी समझौते और कभी संघर्ष के रूप में सामने आई। डॉ० शर्मा के शब्दों में "चाहे दक्षिण अफ्रीका का सत्याग्रह हो, चाहे सन् '20 और '30 के आंदोलन हों, गदर इनसे गुणात्मक रूप से भिन्न था। जहां अंग्रेजों से समझौता करने की गुंजाइश खत्म कर दी गई हो, वहां ग़ैर-पूंजीवादी नेता राजनीतिक समस्याएं दूसरे ढंग से हल करते हैं। मूल समस्या हिंसा और अहिंसा की नहीं है, वरन् साम्राज्यविरोधी संघर्ष को सुसंगत रूप से चलाने की है।" पहले

आलेख के बाद वाले छहों आलेखों में गांधीजी के नेतृत्व में कांग्रेस के आन्दोलनों का मूल्यांकन करते हुए उसके चरित्र और उसकी आंतरिक असंगतियों का विवेचन किया गया है। इनमें से आखिरी निबंध 'कांग्रेस की शुद्धि' (जनवरी 1945) को छोड़कर शेष पांचों लेख 1940-41 के हैं, जब गांधीजी और कम्युनिस्ट पार्टी टकराव की स्थिति में थे। कम्युनिस्ट पार्टी के नेताओं में से एक होने की बजह से स्वभावतः इन लेखों में गांधीजी और कांग्रेस के आंदोलन के प्रति डॉ॰ शर्मा का रुख बहुत तीखा और आक्रामक नजर आता है। हालांकि ये सातों लेख गांधीजी और कांग्रेस आंदोलन का समग्र मूल्यांकन नहीं हैं और पुस्तक के संपादक ने अपनी 'भूमिका' में डॉ॰ शर्मा के रुख के औचित्य-स्थापन का प्रयास भी किया है, लेकिन फिर भी यह कहना ही होगा कि इन पर उस समय के कम्युनिस्ट पार्टी के एकांगी और संकीर्णतावादी रुख की पर्याप्त छाया है। इनमें निष्कर्षों के कमोबेश सही होने के बावजूद अनेक सकारात्मक पहलुओं की उपेक्षा की गई है। इनकी तुलना में डॉ॰ शर्मा का रुख अपने परवर्ती कृतित्व में ज्यादा संतुलित, समग्रतापूर्ण और वस्तुनिष्ठ नजर आता है। फिर भी इन निबंधों का ऐतिहासिक महत्व असंदिग्ध है।

'साम्राज्यवादी कूटनीति और भारत का विभाजन' (1970) शीर्षक आठवें लेख में, जैसा कि इसके शीर्षक से भी व्यंजित है, साम्राज्यवाद की 'फूट डालो और राज करो' की विश्वव्यापी कूटनीति को बेनकाब करते हुए डॉ॰ शर्मा ने आयरलैंड, नाइजीरिया, फिलिस्तीन, सूडान और अमरीकी गृहयुद्ध की मिसालें याद दिलाते हुए लिखा है कि ''एशिया, अफ्रीका, अमरीका, कोई ऐसा महाद्वीप नहीं है, जहां अंग्रेजों ने विभाजन कराने की कोशिश न की हो। भारत का विभाजन उनकी इसी नीति का परिणाम है।'' वे ध्यान दिलाते हैं कि सांप्रदायिक आधार पर भारत के विभाजन का जो षड़यंत्र 1947 में बड़े पैमाने पर सफल हो गया, छोटे पैमाने पर उसका रिहर्सल अंग्रेजों ने बंग-भंग के रूप में 1905 में किया था। यह बात अलग है कि उन्हें इसमें सफलता नहीं मिली। इसी तरह हिंदू-मुस्लिम सांप्रदायिक विभाजन के प्रयास उन्होंने 1857 में भी किये थे, लेकिन तब भी उन्हें सफलता नहीं मिली थी। डॉ॰ शर्मा के अनुसार 1947 में उन्हें ''सफलता मिलने का कारण है भारत के स्वाधीनता आंदोलन की भीतरी कमजोरियां।'' अपने इस अत्यंत महत्वपूर्ण आलेख में डॉ॰ शर्मा ने इन कमजोरियों का सांगोपांग विवेचन किया है, जो आज भी प्रासंगिक है।

अंग्रेजों ने 1919 के मार्ले-मिन्टो सुधारों के नाम पर सांप्रदायिक विभाजन की पुख्ता नींव डाल दी थी। इसी तरह 1935 के कानून में भी भारत-विभाजन का सिद्धांत बीज-रूप में मौजूद था। कांग्रेसी नेताओं ने केवल इन दोनों स्थितियों को स्वीकार किया बल्कि 1935 के कानून के आधार पर प्रांतीय मंत्रिमंडल भी बनाए। ब्रिटिश कूटनीति और सुधारवादी कांग्रेसी नेताओं का समझौता परस्त रुख देश को विभाजन की ओर ही ले जा रहे थे। डॉ॰ शर्मा के शब्दों में ''भारत का विभाजन उस सारे विकास का परिणाम था, जो 1861 के इंडियन कौंसिल ऐक्ट से शुरू हुआ था और 1947 में इंडियन इंडिपेंडेंस ऐक्ट से समाप्त हुआ। कांग्रेस ने जितने भी आंदोलन चलाए, वे कहीं-न-कहीं ब्रिटिश सुधारों के आकर्षण केन्द्र से जुड़े हुए थे।'' डॉ॰ शर्मा की मान्यता है कि कोई दूसरा नेतृत्व ही इन ब्रिटिश 'सुधारों' को ठुकराकर देश को नये संघर्ष के लिए तैयार कर सकता था। लेकिन ऐसा नेतृत्व न कांग्रेस के भीतर था, न बाहर। कांग्रेस के बाहर कम्युनिस्ट पार्टी के नेताओं ने 'आत्मनिर्णय के सिद्धांत' के नाम पर विभाजन का समर्थन किया था। दरअसल सन् 1947 में देश में कोई ऐसी पार्टी न थी जो सामंतविरोधी क्रांति से राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन को जोड़कर उसे अजेय बनाने की ब सोचती। कांग्रेसी आंदोलन और कम्युनिस्ट नेताओं की इन आत्मघा समर्पणवादी नीतियों के अलावा भारत में अंग्रेजी राज और ब्रिटिश कूटनी के सबसे बड़े सहायक राजा, नवाब, ज़मींदार और अन्य सामंती तत्व थे इनके अलावा अंग्रेजों की पलटन में अछूतों, उनसे भिन्न अब्राह्मणों अं मुस्लिम लीग के रूप में सांप्रदायिक नेताओं का जंगी तोपखाना भी था इसीलिए ब्रिटिश कूटनीति सफल हुई और भारत का विभाजन हो गया वास्तव में इस लेख को, दो खंडों में प्रकाशित डॉ॰ शर्मा की बहुचर्चित कृ 'भारत में अंग्रेजी राज और मार्क्सवाद' का बीज रूप भी कहा जा सकत है।

इसके बाद के तीनों लेख पाठक को उस सकारात्मक और क्रांतिकार धारा से परिचित कराते हैं जो 1757 की प्लासी की लड़ाई के फौरन बा 1773 में उत्तरी बंगाल में हुए सन्यासी विद्रोह से लेकर आर्यसमाज तथ आजाद-भगतसिंह और हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी वे क्रांतिकारियों और नवजागरण की अन्य शक्तियों के योगदान को पहली बा बड़े वस्तुपरक ढंग से रेखांकित करते हैं। इनके बाद के चारों लेखों मे आजादी के बाद के भारत की बुनियादी राजनीतिक, सामाजिक औ सांस्कृतिक समस्याओं का विश्लेषण और विवेचन किया गया है। एक अन्य लेख में रूसी क्रांति के विशिष्ट चरित्र का उद्घाटन करते हुए समाजवादी जनतंत्र का मूल्यांकन इस दृष्टि से किया गया है कि वह भारत और तीसरी दुनिया के अन्य नवस्वाधीन देशों के लिए प्रासंगिक हो। इसके बाद वाले लेख में भारत पर 1962 में चीन के सैनिक आक्रमण और उसकी पृष्ठभूमि का परिचय देते हुए भारतीय जनता के रक्षात्मक संग्राम को उजागर किया गया है। 'स्वाधीनता आंदोलन की ग़दर परंपरा और स्वदेशी' शीर्षक अत्यंत विस्तृत और सुदीर्घ लेख डॉ॰ शर्मा ने विशेष रूप से इस पुस्तक के लिए ही लिखा है। यह अत्यंत महत्वपूर्ण लेख एक ओर जहां हमें 'ग़दर' और 'स्वदेशी' की महान परंपरा से परिचित कराते हुए उनकी प्रासंगिकता रेखांकित करता है, वहीं दूसरी ओर इसमें 'मंडल' और 'कमंडल' सहित समकालीन भारत की मूल समस्याओं का विवेचन करते हुए राष्ट्रीय एकता और अखंडता के लिए उत्पन्न आसन्न खतरों के प्रति सचेत किया गया है। डॉ॰ शर्मा के अनुसार इस समय जातिवादी विघटन और सांप्रदायिक विघटन दोनों साथ-साथ चल रहे हैं, जबकि 1947 में संप्रदायवाद तो था पर जातिवाद इस विघटनकारी रूप में न था।

डॉ॰ रामविलास शर्मा की मान्यता है कि समकालीन भारत में इन विघटनकारी प्रवृत्तियों का मुकाबला एक सशक्त वामपक्षीय जनांदोलन ही कर सकता है। स्वयं उन्हीं के शब्दों में ''यह वामपक्ष का दायित्व है कि वह जनता को वर्गों के आधार पर संगठित करे। जाति-बिरादरी और संप्रदाय के आधार पर बनाए हुए संगठन वास्तव में सामाजिक अन्याय को कायम रखते हैं, देश का विघटन तो करते ही हैं। सामाजिक अन्याय के विरुद्ध वास्तविक लड़ाई तब शुरू होगी जब पूंजीपतियों और ज़मींदारों की राज्यसत्ता की जगह लोक किसानों और मजदूरों की राज्यसत्ता कायम करने के लिए आगे बढ़ेंगे। इससे सामाजिक अन्याय तो खत्म होगा ही, राष्ट्रीय एकता भी सुदृढ़ होगी।'' इस प्रकार यह कृति स्वाधीनता संग्राम और उसके क्रमशः बदलते हुए परिप्रेक्ष्य का एक ऐतिहासिक दस्तावेज होने के साथ ही समकालीन भारत के भावी परिप्रेक्ष्य के सक्रिय कार्यक्रम की ठोस कार्यनीति भी प्रस्तुत करती है।

—डॉ॰ गीता शर्मा

इतिहास-विज्ञान और भारत

[पुस्तकः भारतीय इतिहास और ऐतिहासिक भौतिकवाद, लेखकः डा॰ रामविलास शर्मा, प्रकाशकः हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, मूल्यः 45.00 रु॰]

डॉ॰ रामविलास शर्मा की पुस्तक माला 'इतिहास और समकालीन परिदृश्य' का दूसरा खंड मुख्यतः इतिहास-विज्ञान की सैद्धांतिक समस्याओं पर आधारित होते हुए भी मध्यकालीन और आधुनिक भारत के इतिहास का विवेचन करने वाली एक ऐसी अनुपम कृति है जिसमें वर्ण-व्यवस्था, जाति-बिरादरी और सामंतवाद का सूक्ष्म विश्लेषण करते हुए आधुनिक जातियों के निर्माण की प्रक्रिया और पूंजीवादी व्यवस्था की विभिन्न मंजिलों का विवेचन किया गया है। इसमें व्यापारिक पूंजीवाद, औद्योगिक पूंजीवाद और महाजनी पूंजीवाद का सैद्धांतिक चरित्र निरूपण करते हुए बहुजातीय राष्ट्र के निर्माण और रूस की समाजवादी क्रांति का मूल्यांकन किया गया है।

इस पुस्तक की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि 'पूर्वी यूरोप तथा सोवियत संघ में समाजवाद का विघटन और तीसरी दुनिया' शीर्षक अंतिम अध्याय 1991 में उस समय लिखा गया था जब पूर्वी यूरोप और सोवियत संघ में समाजवाद की विश्व-व्यवस्था में दरारें पड़ रही थीं और विघटन की प्रक्रिया अपने समूचे वेग के साथ जारी थी। परिशिष्ट में 'समाजवादः इतिहास की भूल?' शीर्षक लेख (नवभारत टाइम्स में 1 सितंबर 1991 में प्रकाशित) मानो उस विघटन की प्रक्रिया के मुकम्मिल हो जाने पर पटाक्षेप की तरह है, जिसकी ओर अंतिम अध्याय में संकेत किया गया है और जिस खतरे की भविष्यवाणी डॉ॰ शर्मा बहुत पहले से करते आ रहे थे। प्रसंगवश, इसी संदर्भ में पुस्तकमाला के संपादक ने अपनी 'भूमिका' में डॉ॰ शर्मा के नवंबर 1982 के भाषण का उल्लेख भी किया है।

डॉ॰ शर्मा सुज्ञात मार्क्सवादी विचारक और चिंतक हैं। उनके समस्त चिंतन की धुरी भारत, उसका अतीत, उसकी समकालीन समस्याएं और उसका भावी परिप्रेक्ष्य है। इसीलिए, स्वभावतः इस युगांतरकारी और सैद्धांतिक कृति का आरंभ 'मार्क्स और भारत' शीर्षक अध्याय से होता है। वैसे तो पूरी पुस्तक में ही मार्क्स-एंगेल्स और लेनिन की मान्यताओं की संदर्भगत व्यवस्था करते हुए उन्हें भारत के ऐतिहासिक विकास पर सृजनात्मक ढंग से लागू किया गया है, किंतु पहला अध्याय इस दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय है कि इसमें भारत के संदर्भ में मार्क्स की कतिपय गलत और अधूरी टिप्पणियों का खंडन करते हुए यह दिखलाने का प्रयास किया गया है कि वे भारत के संदर्भ में अपनी ऐसी मान्यताओं में, नए तथ्यों की रोशनी में, किस तरह परिवर्तन और सुधार करते हैं। इसीलिए डॉ॰ शर्मा इस तथ्य पर विशेष बल देते हैं कि मार्क्स और एंगेल्स के विचारों को उनकी समग्रता और विकास मानता में देखना, परखना और समझना चाहिए। लेनिन की तरह वे यह अंतर करते हैं कि मार्क्स-एंगेल्स की कौनसी मान्यताएं सारभूत हैं और कौनसी असारभूत।

मार्क्स के हवाले से डॉ॰ शर्मा बताते हैं कि भारत में अंग्रेजी राज कायम होने से पहले वह विश्व-बाजार में केन्द्रीय भूमिका निभाता था। विशेष रूप से सूती माल की सप्लाई तो वह पूरी दुनिया को करता था। इंग्लैंड की ओद्योगिक क्रांति के बाद भी काफी अर्से तक यूरोप और विशेष रूप से इंग्लैंड भारत के सूती माल से आतंकित रहे। यह औद्योगिक क्रांति भी इंग्लैंड ने भारत की संपदा की लूट के बल पर ही संपन्न की थी। धीरे-धीरे स्थिति बदल गई और भारत अंग्रेजों के लिए संपदा की लूट और कच्चा माल सप्लाई करने वाला एक पिछड़ा हुआ देश तथा इंग्लैंड के तैयार माल की मंडी में बदलता चला गया। अंग्रेजों के आने के पहले भारत का समाज परिवर्तनशील और विकासमान था। यहां का सामंती ढांचा अपने आंतरिक अंतर्विरोधों से कमजोर पड़ रह था और नए पूंजीवादी माल उत्पादन का विकास हो रहा था। बड़े पैमाने की केन्द्रीय मंडियों के साथ ही विदेशी व्यापार के फलफूल रहा था। अंग्रेजों ने अपनी हिंसा, तोड़फोड़, और उत्पीड़न से भारत सहज औद्योगिक विकास का गला घोंटकर यह झूठ प्रचारित किया कि भारत में सामूहिक संपत्ति वाली ग्राम समाजों की अपरिवर्तनशील व्यवस्था थी। डॉ॰ शर्मा ने ध्यान दिलाया है कि मार्क्स एक ओर जहां अंग्रेजों की गढ़ी हुई इस दंतकथा और उन्हीं के माध्यम से उपलब्ध जानकारी से प्रभावित होते हैं, वहीं दूसरी ओर से वे भारत पर अंग्रेजों की विजय को एक महान सभ्यता पर बर्बरता की विजय भी मानते हैं। वे भारतीय समाज की 'अपरिवर्तनशीलता' के बावजूद अंग्रेजों से लड़ना जरूरी समझते थे। इसीलिए मार्क्स और एंगेल्स ने 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संघर्ष का पुरजोर समर्थन किया था।

पहले अध्याय में डॉ॰ शर्मा ने यह स्पष्ट दर्शाया है कि मार्क्स अपनी 1853 वाली उपर्युक्त मान्यताओं में 1881 और 82 में क्रमशः बुनियादी परिवर्तन करते हैं, जिसकी ओर उन जड़-सूत्रवादी कम्यूनिस्टों का ध्यान नहीं जाता, जो अंग्रेजों की बर्बर भूमिका को 'प्रगतिशील' मानकर उनके आगमन से ही भारत में आधुनिकता की शुरुआत मानते हैं। वैसे मार्क्स के विचारों में यह परिवर्तन 1857 के ग़दर से ही आरंभ हो गया था। इसी तरह डॉ॰ शर्मा इस तथ्य की ओर भी ध्यान दिलाते हैं कि औद्योगिक क्रांति से पहले तक इंग्लैंड में खेती और उद्योग-धंधों के बीच अलगाव नहीं हुआ था, जबकि भारत में यह अलगाव बहुत पहले (प्रायः उत्तर-वैदिक काल में) हो चुका था। अनेक बातों में 18वीं सदी के पूर्वार्द्ध तक का इंग्लैंड आर्थिक विकास के मामले में भारत से पिछड़ा हुआ था। जो सामंती ढांचा यहां टूट रहा था, अंग्रेजी राज ने उसे नया जीवन दान दिया और भारत में एक नए सामंतवाद की नींव पुख्ता की। मार्क्स ने इस तथ्य की ओर बार-बार ध्यान दिलाया है कि भारत के उद्धार के लिए भारत की स्वाधीनता जरूरी थी, क्योंकि अंग्रेज पूंजीपति भारत की लूट में से एक छोटा सा हिस्सा देकर इंग्लैंड के मजदूरों को भ्रष्ट और क्रांति-विमुख बना रहे थे। यूरोप में समाजवादी क्रांति की विजय के लिए भी पराधीन देशों का मुक्ति आंदोलन जरूरी था।

दूसरे अध्याय में डॉ॰ शर्मा ने सामंतवाद का चरित्र निरूपण करते हुए भारत के संदर्भ में विशेष रूप से उन परिस्थितियों को चित्रित किया है जब आदिम साम्यवादी व्यवस्था के बाद समाज सामंती संबंधों की ओर संक्रमण करता है। वे सामंतवाद के अनेक रूपों का वर्णन करने के साथ ही इस तथ्य की ओर ध्यान दिलाते हैं कि इस व्यवस्था का सामान्य तत्व है अवकाश भोगी भूस्वामियों द्वारा किसानों की अतिरिक्त उपज की लूट तथा छोटे पैमाने का उत्पादन; अर्थात् छोटे पैमाने की खेती और स्वतंत्र कारीगरी। उनके मतानुसार सामंती समाज में जाति-प्रथा श्रम के विशेषीकरण का परिणाम होती है और भारत की वर्ण-व्यवस्था से मिलते-जुलते विभाजन यूरोपीय समाज की भी विशेषता रहे हैं। खास बात यह है कि अंग्रेजी राज में जाति-बिरादरी वाली प्रथा शिथिल होने के बदले और कठोर होती चली गई। स्वाधीन भारत में भी सामंतविरोधी क्रांति के कार्य पूरे न होने की वजह से यहां आज भी जाति प्रथा बनी हुई है। सांप्रदायिकता के साथ-साथ आज अलगाववादी विघटन और जाति-प्रथा को भी नया बल

मिल रहा है। इस अध्याय में भी डा शर्मा यह दर्शाते हैं कि मार्क्स-एंगेल्स के विचार 1842-46 में, फिर कम्युनिस्ट घोषणा-पत्र वाले 1848 के दौर में और भारत के संदर्भ में 1853 में क्या थे तथा 1858-59 से उनमें किस तरह और कैसे परिवर्तन लक्षित होते हैं, जो 1881-1882 में और मार्क्स की मृत्यु के बाद एंगेल्स की परवर्ती रचनाओं में और भी प्रौढ़ता प्राप्त करते हैं।

तीसरा, चौथा और पांचवा अध्याय पूंजीवाद और उसकी विभिन्न मंजिलों का चरित्र निरूपण करते हुए भारत के संदर्भ में इस विकास के सूक्ष्म विश्लेषण के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। डॉ॰ शर्मा तीसरे अध्याय में बताते हैं कि पूंजीवाद के प्रारंभिक विकास में मुख्य भूमिका विनिमय की होती है जो उत्पादन को निरंतर प्रभावित करती रहती है। वे मार्क्स के हवाले से यह भी रेखांकित करते हैं कि इस व्यापारिक पूंजीवाद के दौर में प्रमुख भूमिका व्यापारी की होती है, कारखानेदार की नहीं। अतएव कारखानेदारी को व्यापारिक पूंजीवाद के अंतर्गत मानना ही उचित है। अंग्रेजों के आने से पहले भारत इस व्यापारिक पूंजीवाद की काफी विकसित अवस्था में था और सांस्कृतिक विकास में भी अपने शिखर पर था। एक ओर जहां आधुनिक जातियों के निर्माण की प्रक्रिया जोरों पर थी और जातीय भाषाओं में सामंतविरोधी जनवादी चेतना वाला श्रेष्ठ साहित्य लिखा जा रहा था, वहीं दूसरी और ददनी प्रथा के रूप में कारीगरों को पेशगी पैसा देकर माल उत्पादन की पूंजीवादी पद्धति भी अस्तित्व में थी। जैसे यूरोप का पुनर्जागरण काल इस व्यापारिक पूंजीवाद का सांस्कृतिक प्रतिबिंब था, वैसे ही भारत का भक्ति-आंदोलन यहां के विकसित हो रहे व्यापारिक पूंजीवाद का सांस्कृतिक प्रतिबिंब था। इसी अध्याय में वे जातीय निर्माण की प्रक्रिया का विश्लेषण करते हुए बहुजातीय राष्ट्रों के विकास का भी परिचय देते हैं।

चौथे अध्याय में औद्योगिक पूंजीवाद की विशेषताएं बताने के बाद डॉ॰ शर्मा इस तथ्य की ओर भी संकेत करते हैं कि इंग्लैंड और यूरोप के अन्य देशों में भी पूंजीवादी क्रांति अधूरी रहती है, क्योंकि वहां के पूंजीपति सामंतों से समझौता कर लेते हैं और औद्योगिक क्रांति के बाद भी वहां पुराने अर्थतंत्र के बहुत सारे अवशेष कायम रहते हैं। पश्चिमी यूरोप में मजदूरों का क्रांतिकारी आंदोलन तभी सफल हो सकता था जब किसान आंदोलन और पराधीन देशों के राष्ट्रीय मुक्ति-आंदोलन से उसको एकता होती। रूस में क्रांति इसीलिए सफल हुई, क्योंकि लेनिन के नेतृत्व में बोल्शेविक पार्टी ने मजदूरों और किसानों का एका कायम किया तथा पराधीन देशों के जनगणों की राष्ट्रीय मुक्ति का समर्थन किया। डॉ॰ शर्मा वैज्ञानिक समाजवाद के दोनों प्रारूपों का उल्लेख करते हैं: एक सर्वहारा क्रांतिवाला और दूसरा नई जनवादी क्रांति वाला प्रारूप। इस प्रसंग में भी वे मार्क्स और एंगेल्स के विचारों की व्याख्या उनकी विकासमानता के संदर्भ में करते हैं और यह तथ्य रेखांकित करते हैं कि रूस और चीन में तथा आगे चलकर वियतनाम में भी जो क्रांतियां हुई, वे नई जनवादी क्रांति के प्रारूप के अनुसार थीं। इनमें मजदूर और किसान अधूरी पूंजीवादी क्रांति के सामंतविरोधी कर्तव्य भी स्वयं पूरे करते हैं।

पांचवां अध्याय महाजनी पूंजीवाद का चरित्र निरूपण करते हुए उस रणनीति और कार्यनीति का प्रारूप प्रस्तुत करता है जिसके आधार पर पूंजीवाद के इस सबसे खतरनाक और युद्धोन्मादी रूप का विनाश संभव हो सकता है। डॉ॰ शर्मा के शब्दों में "पूंजीवाद की शुरूआत सूदखोरी से होती है, उसका खातमा भी सूदखोरी से होता है।" पूंजी के अंतर्राष्ट्रीयकरण और केन्द्रीयकरण में वृद्धि के साथ पूंजीवाद गुटों की आपसी होड़ तेज होती है और दुनिया के बटवारे के लिए वे युद्ध छेड़ देते हैं। वे ध्यान दिलाते हैं कि महाजनी पूंजीवाद की कुछ विशेषताएं मार्क्स और एंगेल्स के जमाने में उभर आई थीं, पर उनका भरपूर विकास लेनिन के समय में हुआ। दो विश्व-युद्धों के बाद आज "अमरीकी पूंजीवाद दुनिया के बंटवारे की नहीं, पूरी दुनिया पर हावी होने की कोशिश कर रहा है। ऐटमी हथियारों का सबसे बड़ा जखीरा उसके पास है और इन हथियारों के लिए उसे आवश्यक पूंजी पिछड़े हुए देशों से सूद के रूप में मिलती है। राष्ट्रीय स्वाधीनता को सुदृढ़ करने और युद्ध को रोकने का एक ही तरीका है—साम्राज्यवाद की आर्थिक नाकेबंदी। मानवता तभी तक असहाय है जब तक वह सांप को दूध पिलाती जाती है। उसका फन कुचलने के अस्त्र हैं—"स्वदेशी और असहयोग।" अपने स्वाधीनता आंदोलन के दौर से ही भारत स्वदेशी और असहयोग की नीतियों से भलीभांति परिचित है और आजादी की लड़ाई में उसका सफलतापूर्वक उपयोग भी कर चुका है। आज भी भारत और अन्य विकासशील देश स्वदेशी और असहयोग द्वारा साम्राज्यवाद के आर्थिक स्रोतों को समाप्त कर सकते हैं और इस प्रकार समूची मानवता को आणविक महाविनाश से बचा सकते हैं।

डॉ॰ शर्मा ने व्यापारिक पूंजीवाद से संबंधित तीसरे अध्याय में जातीय निर्माण की प्रक्रिया पर विस्तार से प्रकाश डाला है। पुस्तक के छठे अध्याय 'जातियों के आत्मनिर्णय का अधिकार और बहुजातीय राष्ट्र का निर्माण' में वे मुख्य रूप से इसी विषय की विशद व्याख्या करते हैं। यहां भी उनके समूचे विश्लेषण के केन्द्र में भारत और उसकी जातीय समस्या है। जातीयता की यह चेतना मार्क्स और एंगेल्स के लेखन में विद्यमान है। लेनिन और उनके बाद स्तालिन ने जातीयता की समस्या पर काफी कुछ लिखा है। लेकिन फिर भी मार्क्सवादी-सिद्धान्त निरूपण के क्षेत्र में इस विषय में बहुत कुछ किया जाना बाकी दिखता है। इस अध्याय में, और अन्यत्र भी, डॉ॰ शर्मा ने अपने लेखन से इस कमी को बड़ी हद तक पूरा करने का प्रयास किया है। इस संदर्भ में अनेक जगह उनका सिद्धांत-निरूपण मार्क्स-एंगेल्स और लेनिन के तद्विषयक विचारों की पुनर्व्याख्या ही नहीं बल्कि इस क्षेत्र में मार्क्सवाद का सृजनात्मक विकास भी लक्षित होता है। यह विडंबना ही है कि भारत के मार्क्सवादियों द्वारा इस विषय की घोर उपेक्षा की गई है, जबकि बहुजातीय राष्ट्र के रूप में भारत की आज भी यह एक केन्द्रीय समस्या है। इस दृष्टि से पुस्तक का यह अध्याय अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें जातियों के आत्मनिर्णय के अधिकार की सही व्याख्या करते हुए यूरोप के अनेक देशों के ठोस उदाहरण के साथ बहुजातीय राष्ट्र के निर्माण की प्रक्रिया समझाई गई है।

जैसा कि पहले भी उल्लेख किया गया है, पुस्तक के अंतिम अध्याय में पूर्वी यूरोप और सोवियत संघ में समाजवाद के विघटन की प्रक्रिया को उसके समूचे ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में रेखांकित करते हुए यह प्रस्थापित किया गया है कि यह विघटन मार्क्सवाद के अजेय और वैज्ञानिक सिद्धांतों का नहीं बल्कि उन सिद्धांतों से विचलन का ही परिणाम है। डॉ॰ शर्मा ने इस अध्याय में इस विचलन के समूचे इतिहास का परिचय देते हुए विघटन के बुनियादी कारणों को रेखांकित किया है। इसके अलावा उन्होंने उन सैद्धांतिक और भौतिक स्थितियों तथा साथ ही उस कार्यनीति की ओर भी स्पष्ट संकेत किया है, जिसे अपना कर आंतरिक अन्तर्विरोधों का सफलतापूर्वक समाधान किया जा सकता था और साम्राज्यवाद का डटकर प्रतिरोध भी। इस प्रकार इस विघटन से बचा जा सकता था। यह अनिवार्य नहीं था। इसे संभव बनाया विश्व समाजवादी व्यवस्था में साम्राज्यवादी पूंजी के बड़े पैमाने पर प्रवेश ने और साथ ही जनवादी केंद्रीयता सहित

मार्क्सवाद-लेनिनवाद के बुनियादी उसूलों के परित्याग ने। इस अध्याय की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें मार्क्सवाद की प्रासंगिकता को पुनः बलपूर्वक रेखांकित करते हुए समाजवाद के विघटन के फलस्वरूप तीसरी दुनिया के विकासशील देशों पर पड़ने वाले प्रभाव का मूल्यांकन किया गया है। खाड़ी युद्ध के ताजा उदाहरण की व्याख्या करते हुए डा॰ शर्मा ने समकालीन अंतर्राष्ट्रीय परिस्थिति का विशद विश्लेषण किया है और तीसरी दुनिया के लिए इससे सीखे जा सकने वाले सबक और ऐतिहासिक कार्यभार प्रस्तुत किये हैं। कुल मिलाकर यह सहज ही कहा जा सकता है कि डा॰ शर्मा की इस कालजयी कृति का ऐतिहासिक महत्व है।

— डॉ॰ गीता शर्मा

बैंकिंग शब्दावली

[पुस्तकः बैंकिंग शब्दावली, लेखकः श्री ब्रजकिशोर शर्मा; प्रकाशकः भारतीय बैंक संघ, मुम्बई, मूल्यः 275.00 रु॰]

किसी भी विशिष्ट क्षेत्र में किसी भाषा में काम करने के लिए एक विशिष्ट पारिभाषिक शब्दावली की आवश्यकता होती है। यदि कामकाज की भाषा के रूप में किसी भाषा को प्रतिष्ठापित करना हो तो उस भाषा में उस विषय विशेष की शब्दावली की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। निःसंदेह प्रारंभ में, विशिष्ट शब्दावली का अभाव सुचारू रूप से और दक्षतापूर्वक कार्य करने में आड़े आता है। भारत के प्रमुख बैंक भारत सरकार के सार्वजनिक उपक्रमों के अंतर्गत आते हैं। भारत संघ की भाषा नीति बैंकों और अन्य सरकारी तथा सार्वजनिक वाणिज्यिक प्रतिष्ठानों में भी यथावत प्रवृत्त है। अतः हिन्दी में बैंकिंग शब्दावली के निर्माण और विकास की तीव्र आवश्यकता महसूस की गई। इस दिशा में भारतीय रिज़र्व बैंक आदि बैंकों ने तथा भारत के नियंत्रक और महालेखा-परीक्षक कार्यालय आदि विभागों और कार्यालयों ने बैंकिंग और वाणिज्यिक शब्दावली के छुट-पुट प्रकाशन प्रस्तुत किए। वर्तमान शब्दकोशों और शब्दावलियों से राजभाषा नीति के कार्यान्वयन की दिशा में अग्रसर होने का मार्ग प्रशस्त हुआ। फिर भी प्रायः देखने में आता है कि बैंकिंग अंग्रेजी शब्दों के पर्यायों के चयन में राजभाषा और अनुवाद कर्मियों के हाथों अर्थ के अनर्थ हो जाते हैं। उदाहरण के लिए, crossed cheque, draw, drawer, drawee, credit, debit, cheque drawn, money drawn जैसे बैंकिंग क्षेत्र के पारिभाषिक शब्दों के विविध बल्कि अनेकार्थी पर्यायों का इस्तेमाल हो रहा है। वर्तमान बैंकिंग शब्दावली सुनिश्चित और मानक पर्याय के चयन में सही निदेशन का महत्वपूर्ण प्रयास है।

वर्तमान बैंकिंग शब्दावली के रचनाकार और कोशाकार श्री ब्रजकिशोर शर्मा, एक प्रख्यात विधिवेत्ता एवं भाषाविद् हैं। उन्होंने भारत सरकार के विधि और न्याय मंत्रालय द्वारा प्रकाशित बृहत् 'विधि शब्दावली' के निर्माण और प्रकाशन में प्रमुख योगदान किया है। श्री शर्मा के 'विधि शब्दावली' के निर्माण के विस्तृत और गहन अनुभव का लाभ निश्चय ही वर्तमान बैंकिंग शब्दावली में परिलक्षित होता है। सुनिश्चितता अर्थात् संदर्भानुसार पर्याय चयन विधि शब्दावली की सर्वोपरि विशेषता है। इसी परमावश्यक विशेषता को अंगीभूत और आत्मसात करके रचनाकार ने वर्तमान शब्दावली का निर्माण कर बैंकिंग जगत में राजभाषा के प्रयोग में अभूतपूर्व सुविधा प्रदान की है। अनुवादक को अनुवाद कार्य करते समय सही पर्याय आसानी से सुलभ हो इसके लिए संदर्भगत पर्याय अत्यन्त सहायक होते हैं। शब्दों या पदों में सभी प्रविष्टियों के सामने उसके अर्थ (व्याख्या) दिए गए हैं। इससे अनुवादक का काम बहुत सुकर हो जाएगा। भारत सरकार की विधि शब्दावली के सफल प्रयोग के बाद अब 'बैंकिंग शब्दावली' में भी वही पद्धति अपनाई गई है। "बैंकिंग शब्दावली" में प्रयुक्त शब्दों और पदों के हिन्दी पर्यायों की प्रामाणिकता इसमें निहित है कि इसमें भारत सरकार के वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग और विधि मंत्रालय की विधि शब्दावली प्राधिकारयुक्त दिए गए पर्याय समाविष्ट हैं। इस शब्दावली में विधियों के प्राधिकृत पाठों में पारिभाषित पदों और शब्दों को उनके संदर्भानुसार समाविष्ट किया गया है। इन पर्यायों की प्रामाणिकता विधियों में प्रयोग के कारण अकाट्य है।

आज विशेषज्ञता का युग है। हर क्षेत्र विशेष में भिन्न-भिन्न पारिभाषिक शब्दों और पदों का प्रयोग किया जाता है। विधि और विज्ञान के विद्वान श्री ब्रजकिशोर शर्मा द्वारा निर्मित वर्तमान शब्दावली में ऐसी विशेषज्ञता की छाप आद्योपांत दिखाई पड़ती है। प्रस्तुत शब्दावली (भाग 1) निश्चय ही बैंकिंग विषय के लिए अब तक निर्मित और प्रकाशित शब्दावलियों की श्रृखला में कई कदम आगे है। इसमें पर्यायों की प्रामाणिकता बैंकिंग विधियों में प्रयुक्त होने के फलस्वरूप और विशेषज्ञता (विधिवेत्ता और भाषाविद् द्वारा निर्मित होने के फलस्वरूप) नामक पारिभाषिक शब्दावली के अनिवार्य तत्व सुस्पष्ट रूप से अन्तर्विष्ट हैं। आशा है, प्रयोक्ता को अपने संदर्भ में सटीय अर्थ में खोजने में अपने समय का अपव्यय नहीं करना पड़ेगा और परिमाणतः उतने ही समय में अधिक परिणाम प्राप्त हो सकेगा। स्वयं लेखक के शब्दों में लघुतम प्रयास से विशालतम अभिव्यक्ति इसकी उपलब्धि है। बैंकिंग जगत में आजकल श्रेष्ठी बैंकिंग का कार्य बहुत बढ़ गया है। संगणक का प्रयोग निरन्तर बढ़ रहा है। अन्तरराष्ट्रीय व्यापार में भी वृद्धि हो रही है। ऐसे सभी विषयों की प्रामाणिक शब्दावली के कुछ शब्द भी इस संकलन में प्रकाशित हैं। बैंकिंग क्षेत्र के नए-नए शब्दों को भी इसमें रखा गया है।

हालांकि सर्वांगीण दृष्टि से देखें तो वर्तमान "बैंकिंग शब्दावली" बैंकिंग क्षेत्र में हिन्दी के अधिकाधिक प्रयोग को सुकर बनाने में सहायक सिद्ध होगी, फिर भी स्वयं कोशकार के शब्दों में "यह शब्दावली व्यक्तिगत प्रयास है जो सीमित अवधि में एक आवश्यकता की पूर्ति के लिए किया गया है। इसलिए इसमें कुछ त्रुटियां अवश्य होंगी। इस क्षेत्र के हिन्दी अनुवादकों और भाषा प्रेमियों" बैंककारी संस्थानों और उपक्रमों में कार्यरत कार्मिकों एवं आम ग्राहकों (जन साधारण) सभी के लिए प्रस्तुत कोश निश्चय ही उपयोगी होगा और ज्ञान-विज्ञान के विशिष्ट विषयों के हिन्दी में पहले से विद्यमान शब्द-भंडार में वृद्धि करके उसे और अधिक पल्लवित व पुष्पित करने में सहायक होगा।

हां, समापन से पूर्व, इस प्रकाशन के लिए, भारतीय बैंक संघ बधाई का पात्र है। संघ ने बैंकिंग विषयक अंग्रेजी-हिन्दी और हिन्दी-अंग्रेजी पारिभाषिक शब्दावलियां तैयार कराने का जो फैसला किया था उसी को कार्यरूप देने की दिशा में वर्तमान प्रकाशन एक महती उपलब्धि है। भारतीय बैंक संघ के वर्तमान प्रकाशन की उत्कृष्ट कोटि की छपाई, कागज तथा सुन्दर आवरण आदि को देखते हुए इसका मूल्य युक्तियुक्त और तर्कसंगत प्रतीत होता है। निःसंदेह, वर्तमान बैंकिंग शब्दावली मेरे विचार में औद्योगिक एवं वाणिज्यिक विस्तार और प्रसार के युग में बैंकिंग उद्योग में प्रयुक्त होने वाले शब्दों के निश्चित अर्थ, पर्याय, परिभाषा एवं प्रयोग निर्धारित करके उनका मानकीकरण करने में तथा उनमें एकरूपता लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी।

—कृष्ण गोपाल अग्रवाल

कानूनश्री

[पुस्तकः कानूनश्री (उपन्यास), लेखकः पवन चौधरी 'मनमौजी', प्रकाशक; विधि सेवा, ई-31, मानसरोवर गार्डन, नई दिल्ली, मूल्यः 80.00 रु०]

उपन्यासों में नायक और नायिका का होना बहुत जरूरी है। "मनमौजी" जी के उपन्यासों में नायक की भूमिका तो वह 'जलज' बनकर अदा कर देते हैं पर नायिका का स्थान प्रायः रिक्त ही रहता है। "कानूनश्री" की कथावस्तु में यद्यपि एक नारी पात्र आता है जो तलाक की तलाश में है पर "मननौजी" जी उसे मुँह नहीं लगाते, उससे दामन बचाकर आगे बढ़ने लगते हैं। मैं इसे उनकी संयमशीलता कहूँ या उपन्यास लिखने की टैकनीक को न जानने की विवशता, कुछ समझ में नहीं आता। सफल उपन्यास लिखने का एक ही गुर है—उपन्यासकार किसी आधुनिका को अपने ज़हन में रखे, किसी उपन्यास में उसे फुलझड़ी बनादे, किसी में तितली, किसी में दुखियारी, किसी में विधवा, किसी में वैश्या, किसी में समाज-सुधारिका, किसी में शिक्षिका, किसी में प्रेमिका, किसी में माँ किसी में भावज तो किसी में परकीया—चाहे वह मध्या हो, प्रौढ़ा हो या मुग्धा हो, सफल उपन्यास लिखने के लिये एक सशक्त नारीपात्र (नायिका) चाहिये। 'काउण्ट लियो टाल्सटाय' की " अन्ना करेनिन्रा" बीसवीं शताब्दी का सबसे ज्यादा शक्तिशाली नारी-पात्र है, उसके बाद' गोर्की की "माँ" है। "मनमौजी" जी बिना नारी-पात्र के उपन्यास लिख लेते हैं, यह एक अजूबा ही है। "कानूनश्री" में तलाक तलाशती नायिका को अधर में छोड़ देना इस उपन्यास के साथ किया गया "मनमौजी" जी का सबसे बड़ा अन्याय है।---------थ्रिल पैदा करना इसी नारीपात्र का काम है। बिना थ्रिल के उपन्यास क्या? फिर भी "मनमौजी" जी अपने अगाध ज्ञान-भंडार को रोचकता से वर्णन करने के कारण बाजी मार ले जाते हैं। पृष्ठ 92 पर उनका यह वर्णन पढ़िये—

"वकील समाज में कानून और व्यवस्था के सजग और सर्तक पहरेदार होते हैं।"

बिना वकीलों के किसी सभ्य-समाज की कल्पना करना कठिन है। समाज के उत्तम पेशों में वकालत भी एक है।

वकीलों के गाउन पर मुवक्किलों के हठ की धारियाँ पड़ी होती हैं। वकीलों के महल मूर्खों के सिर पर बने होते हैं।

यदि समाज में बुरे आदमी नहीं होते, तो अच्छे वकील भी नहीं होते। यदि कानून अपने बारे में बोल सकते, तो सबसे पहले व वकीलों की शिकायत करते।

सबसे पहले हमें सभी वकीलों की हत्या कर देनी चाहिये। वकील सदा आदमी को मुसीबतों से बाहर निकालने की बजाय, इनमें धकेलने के लिये अधिक तैयार रहते हैं।

— (कानूनश्री—पृष्ठ 92)

यह अवतरण विश्व-साहित्य में अनूठा है। ज्ञान और चरित्र की जो छाप इस पैराग्राफ में है वह लेखक की अपनी विद्धत्ता है। किसी ने ठीक ही कहा था—"ए मिल्टन इज़ रिक्यार्यड टू अण्डरस्टैण्ड ए मिल्टन" [A Milton is required to understand a Milton] एक मिल्टन को समझने के लिये मिल्टन ही चाहिये। यहाँ मैं यह कहना अभीष्ठ समझता हूं कि "मनमौजी" जी के साहित्य को पढ़ने और समझने के लिये "मनमौजी" जैसा ही काबिल पाठक चाहिये। वे न शौकिया लेखक हैं न पैसे के लिये वे लिखते हैं। वे तो अवाम को जगाने के लिये लिखते हैं—और यही जागरण श्रेष्ठ साहित्यिक धर्म है।

वकील कौन है, यह उन्हीं के शब्दों में पढ़िये—

"-----------मेरे विचार में वकील वह होता है, जो झूठ बोलता है, अपने मुवक्किल की खातिर सबकुछ करता है और करने के लिये तैयार रहता है, वह रिश्वत देता है; गलत गैर-कानूनी-काम करता है; रात को दिन और दिन को रात कहता है; गलत को सही और सही को ग़लत साबित करने की कोशिश करता है। मतलब को सलाम मारता है। और, न जाने क्या-क्या करता है। चूंकि आप वह सब नहीं करते हैं और न ही आपके अन्दर वे गुण अथवा लक्षण हैं, इसलिऐ मैंनें उस दिन कहा था कि आप वकील नहीं हैं और वही बात मैं आज भी कहता हूं।"

— (कानूनश्री — पृष्ठ 93)

"मनमौजी" जी के दृष्य-चित्र कितने मार्मिक बने हैं इसके लिये उनका कैदी का शब्दचित्र देखते ही बनता है। आप भी देखियेगा—

"टाट वर्दी का अभिप्रायः उर्फ अभिशाप होता है। कैदी के तमाम कपड़े उतारकर उसे टाट बोरी के कपड़े पहनाना। यानी टाट की कमीज, टाट का पाजामा, और टाट की ही टोपी। सजा के आदेश के कुछ मिनट के बाद किशोर के कपड़े बदल दिये गये। गेहूं की बड़ी बोरी में तीन छेद होते हैं— दो में बाहें निकाल दी जाती हैं और बीच के छेद में सिर। पाजामे में दो टुकड़े टाट के जुड़े हुये होते थे। ऊपर की रस्सी कसकर बांध दी जाती थी। टाट को दो—तीन बार मोड़कर पाजामा बन जाता था।"

—("कानूनश्री"—पृष्ठ 104)

यह टाट का लिवास कैदी के शरीर को कितना है; "मनमौजी"जी को इसका भी अनुभव है। वे लिखते हैं—

"किशोर का टाट वर्दी का शौक दो चार घण्टों के बाद ही एकदम शांत हो गया। शरीर पर शरारत महसूस होने लगी। टाट की रगड़ शरीर को नोचने लगी।"

—("कानूनश्री"—पृष्ठ 204)

एक तो वकील उस पर साहित्यकार—एक तो करेला नीमचढ़ा। वर्णन एक से एक प्रभावकारी हैं। होमर की कविता या की "मां"—किसी से भी कम नहीं।

कानून और इन्साफ का अन्तर देखिये—

"कानून धरती पर है और इन्साफ आसमान पर । कानून नियमों की पटरियों पर रेंगता है और इन्साफ आसमान में उड़ता है। कानून की मंजिल सफलता होती है, और इन्साफ की सार्थकता।......"

—("कानूनश्री"—पृष्ठ 105)

लगता है; "मनमौजी की लेखनी में कबीर बोल रहे हैं और वह भी तब—जब वह कहते हैं:—

"मैं अच्छे कर्मों को पूजा मानता हूं। मैं समझता हूं कि अच्छे काम करना और अच्छे काम करने के लिये सोचना यह सभी

भगवान की पूजा करना है। घर अथवा मंदिर में घंटिया बजाने की बजाय मैं अच्छे काम करने में अधिक सुख-सन्तोष महसूस करता हूं।

("कानूनश्री"; पृष्ठ 118)

जस्टिस और कानून का फर्क है देखियेगा "मनमोजी" जी का एक पात्र (जो स्वयं लेखक "मनमौजी" ही हैं) "जलज" के रूप में कहता है—

"जस्टिस आसमान पर है और कानून धरती पर। जस्टिस कुदरती होता है और कानून इनसानी। कानून धाराओं और उपधाराओं की पटरियों पर चलता है जबकि इन्साफ हवा में उड़ता है।"

—("कानूनश्री"; पृष्ठ 125)

पृष्ठ 105 के वर्णन से पृष्ठ 125 का यह वर्णन तो मिलाइये। यह "पुनरुक्ति-दोष" है जो कि लेखक के अत्यधिक भावुक होने के कारण पैदा हो गया है। .... कभी कभी "मनमौजी" जी अपनी कलम की कुव्वल पर प्रसन्न हो कर लिखते हैं—

"केवल ऐसी ही कलम हर महिला में यौन; हर बोतल में शराब, हर बात में रोमांस, हर देवी में देवदासी, और हर देवता में दुष्ट देखने की शक्ति रख सकती है। इस कलम के विराट रूप के सामने कृष्ण का विष्णु रूप भी फीका पड़ जाता है।"

—("कानूनश्री"; पृष्ठ 143)

लगता है; "मनमौजी" जी व्यंग कर रहे हैं। आगे चलकर वे आज के संपादकों की थोथी-नैतिकता का कैसा चुटीला रूप सबके आगे रखते है। देखिये—

"देखिये मैडम, मैं अखबार बेचने के लिये छापता हूं। मैं केवल वही छापता हूं जो मेरे पाठक पसंद करते हैं। जो उन्हें पसंद नहीं होता है; मैं उसे नहीं छापता हूं मुझे अपने पाठकों की पसंद मालूम है। इसीलिये, पिछले 6 महीने में, जबसे मैं सम्पादक बना हूं, मेरे पाठक अखबार का सर्कूलेशन 'डबल' हो गया है। मेरे पाठक केवल सैक्स, क्राइम और रोमांस चाहते हैं। आप बलात्कार कत्ल, दहेज, लूटमार पर कोई भी चीज लिखिये मैं उसे फौरन ही छाप दूंगा। आप लिख कर भेजती रहिये, और मैं छापता रहूंगा।"

—("कानूनश्री"; पृष्ठ 144)

व्यंग के माध्यम से "मनमौजी" आज के आदमी के मुंह पर जैसे तमाचा मारते हैं। 'जलज' आज की स्थिति का वर्णन करते हुये जो कहता है वह आज के हर आदमी का कहना है—

"........आजादी के बाद हम गुलामी के वातावरण में जी रहे हैं। आजादी से पहले हमें अंग्रेज ठगते थे, आज हम स्वयं को ठग रहे हैं। तब हम अंग्रेजों को ठेंगा दिखाने और ठिगना बनाने के लिये दृढ़ संकल्प थे, आज स्वंय को। उन दिनों अंग्रेज हम पर अत्याचार करने से नहीं चूकते थे, अपना शासन बनाये रखने के लिये, आज हम स्वयं पर अत्याचार करने नहीं चूक रहे हैं अपनी आज़ादी को खतरे में डालने के लिये। ऐसा लगता है—वर्तमान व्यवस्था का लगभग हर बड़ा आदमी आदर्श में बौना है, दूसरे आदमी को बौना बनाकर प्रसन्न होता है और उसे बौना देखकर स्वयं को बड़ा महसूस करता है, स्वयं को ऊंचा समझकर नहीं, उंचा उठाकर भी नहीं, सामने खड़े, बैठे दूसरे छोटे आदमी को ऊंचा उठाने अथवा बड़ा बनाने की तो बात ही छोड़ दीजिये। उसने यथार्थ और व्यापार का काला कोट पहना हुआ है, आदर्श के लिये वह न कोई नोटिस भेजने के लिये तैयार है, और न कोई 'समन' लेने के लिये।"

—("कानूनश्री;" पृष्ठ 201-202)

।। उपसंहार ।।

'जलज' के रूप में "मनमौजी" जी ने अपने प्रसिद्ध उपन्यास "कानूनश्री" में जितना कुछ कहा है उतना ही यदि वे और अधिक व्याख्या के साथ लिखते तो यह उनकी आत्मकथा हो जाती। उनकी जीवनी बन जाती। वैसे ही हिंदी में आत्मकथाओं और जीवनियों का अकाल पड़ा हुआ है। "मनमौजी" जी इस अकाल को सुकाल में बदल दें तो हिन्दी साहित्य पर यह उनका वरदान ही होगा। किस्सागोई में तो वे माहिर हैं ही—लगे हाथों जीवनी भी लिख डालें।

आजादी से पहले महात्मागांधी ने जब रामराज्य की परिकल्पना अपने मस्तिष्क में संजोयी थी तब सब कहते थे कि पंचायतीराज आने वाला है, वकील लोग वकालत छोड़ देंगे। बच्चे गली गली में गाते फिरते थे—

"हो जायेंगे मुकदमा बंद वकिलवा चाट बेचैंगे।
उनके मुहर्रिर बागों में, लोकाट बेचेंगे।।"

पर हाय रे अफसोस। ऐसा हुआ नहीं। वकालत तो और दैत्याकार रूप धारण करने लगी है। इससे छुटकारा पाने का कोई कारगर नुस्खा "मनमौजी" जी ही बतायेंगे।

—रसिक बिहारी मंजुल

सनातन धर्म और महात्मा गांधी

[पुस्तक: सनातन धर्म और महात्मा गांधी, लेखक: डा० पुषराज, प्रकाशक; श्री विनायक प्रकाशन, बी-17, प्रशांत बिहार, मूल्य: 200 रु०]

डा० पुपराज ने अपनी पुस्तक "सनातम धर्म और महात्मा गांधी" के माध्यम से धर्म और वर्णाश्रम के संबंध में आज समाज में फैली भ्रांतियों का निराकरण करने का सफल प्रयास किया है। उपर्युक्त दोनों विषयों सहित पुस्तक में आठ अध्याय हैं और इनमें महात्मा गांधी जी के धार्मिक विचारों का प्रतिपादन हुआ है। आलोच्य पुस्तक में धर्म जिज्ञासा, सनातन धर्म, सत्य और ईश्वर, भगवद्गीता, यम नियम, वर्णाश्रम धर्म तथा रामराज्य संबंधी महात्मा गांधी जी के तर्कपूर्ण विचारों को सुस्पष्ट ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

महात्मा गांधी जी के दर्शन पर इस पुस्तक से पहले देश-विदेश में प्रचुर साहित्य प्रकाशित हो चुका है परन्तु उनके जीवन और विचारों के मूल स्रोत का विश्लेपण करने के कम ही प्रयास हुए हैं।

डा० पुपराज की इस पुस्तक का गहराई से अध्ययन करने पर एक तथ्य उभर कर आता है कि गांधी जी ने धर्म का एक व्यापक अर्थ लिया था और सनातन धर्म उनके विचारों एवं मान्यताओं की बुनियाद रहा है। उनकी इन अवधारणाओं को अधिकांश व्यक्ति ठीक से समझ नहीं पाए हैं। अन्य

महापुरुषों की भांति गांधी जी के अनुसार सनातन धर्म की देशकाल के अनुरूप व्याख्या करके तथा अपने जीवन में ढालकर ज्वलन्त सामाजिक समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। उनके अनुसार भारत में समस्त प्रवृतियां धर्म में समाविष्ट हो जाती हैं।

गांधी जी ने स्वतंत्रता की लड़ाई कोरे राजनैतिक अर्थ में नहीं लड़ी थी बल्कि वह एक सभ्यता की लड़ाई थी जिसकी नींव आध्यात्मिक थी।

गांधी जी के अनुसार धार्मिक और लौकिक शिक्षा साथ-साथ दी जानी चाहिए। गांधी जी मूर्ति पूजा में विश्वास करते थे परन्तु यह उनके लिए आस्था का प्रश्न था। उन्होंने भगवद्‌गीता में बताए गए मानवीय, सत्योन्मुख और मूल्य प्रेरित आदर्शों को अपनाने पर बल दिया तथा इसी आधार पर वर्णाश्रम का पक्ष लिया परन्तु ऊंच-नीच और जात-पात से घृणा की। गांधी जी के अनुसार ग्रामस्वराज्य व्यवस्था कायम करके रामराज्य की पुरानी कल्पना को साकार किया जाना आवश्यक है। उन्होंने यम नियमों का पालन किया और आश्रम स्थापित किए। गांधी जी साधना के लिए श्रद्धा सहित ईश्वर को आवश्यक मानते थे।

समीक्षित कृति में गांधी जी ने अपने विचार स्पष्ट करते हुए कहा है कि भारत स्वधर्म को पहचान कर और शास्त्रीय परंपरा को अपनाकर आधुनिक सभ्यता की बुराइयों को दूर कर सकता है तथा इसके लिए वे सनातन धर्म की वर्तमान संदर्भ में व्याख्या को मूल आधार मानते हैं।

—कंवर सिंह

कल से बेखबर

[पुस्तकः कल से बेखबर, लेखक; पुष्पा हीरालाल, प्रकाशकः विश्वोदय प्रकाशक, सी-67 बी, सिद्धार्थ एक्सटेंशन, नई दिल्ली, मूल्यः 80.00 रु०]

भारतीय पारिवारिक व्यवस्था में नारी के महत्व को झुठलाया नहीं जा सकता। तमाम दबाव, अत्याचार व अनदेखी के बावजूद परिवार में महिला की मौजूदगी घर के भविष्य से बेखबर होने का प्रमाणपत्र है। शायद इसलिए लेखिका ने ऐसे चरित्र को अपने उपन्यास में मुख्यपात्र बनाया जो अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों से बिलकुल बेखबर है।

पुष्पा हीरालाल का उपन्यास "कल से बेखबर" भारतीय समाज के किसी "स्लम" परिवार को कागज पर उतारने का सफल प्रयास प्रतीत होता है। लेखिका प्रयास मात्र माया की भावनाओं और संघर्ष को उभारने का ही नहीं रहा। बल्कि उन्होंने अपने इस पात्र के माध्यम से कुछ ऐसे प्रश्न खड़े किए हैं जो केवल दौलत राम व माया की ही समस्या नहीं है। यह समस्या "शिविर" होते परिवारों की है। सभी इसके दायरे में फंसे हैं। हर किसी पर इसका असर पड़ रहा है।

माया सैकड़ों मध्यमवर्गीय परिवारों की महिलाओं का प्रतिनिधित्व करती नजर आती है। जो पुरुषों के गैर-जिम्मेदाराना खर्च के कारण परिवार के बिखराव के प्रति चिंतित है।

उपन्यास का मुख्य पात्र दौलत राम वास्तविकता में जो है, वह उससे मूंह मोड़े हुए है। और वह चाहता है कि परिवार में उसकी स्थिति एक प्रतिष्ठित मुखिया की बनी रहे। दौलत राम के घर के बाहर टंगा "इंजीनियर" का बोर्ड उसके चरित्र का आइना है।

"माया मेरी नौकरी छूट गई। मैं तेरे से झूठ बोला था कि मैं इंजिनियर हूं और मेरी नौकरी पक्की है। दरअसल मैं एक ठेकेदार का एकांउटेंट था।"

दौलत राम ने यह एक सच बता कर माया को जिम्मेदारियां उठाने के लिए धीरे-धीरे तैयार करना आरंभ कर दिया। माया ने भी वही किया जो भारतीय नारियों की नसों में दौड़ रहा है। वह तैयार थी। लगा कि छः बेटियों व एक पुत्र को उसे ही पहचान देनी है। इतना ही नहीं बेटियों ने भी मां के संघर्ष के साथ न्याय किया।

माया की सफलता उपन्यास में आया वह मोड़ है जो लड़कियों की स्थिति को यह दिखाता है। यह प्रश्न है "बस एक लड़का हो जाए" चाह रखने वालों के लिए चाहे वह लड़का दौलत राम के चरित्र के इर्द गिर्द ही घूमता नजर आए।

हांलाकि पुष्पा हीरालाल ने जो दृश्य पेश करने का प्रयास किया है। वह प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप में हमारे समाज में न जाने कब से घटता चला आ रहा है। हां, इतना जरूर है कि लेखिका ने इस उपन्यास के माध्यम से कुछ गंभीर प्रश्न ऐसे काल में खड़े करने का प्रयास किया है, जहां परिवारों की टूट व परिवारों में भीड़ के समय मानवीय अहसासों को आहत करने में सक्षम हैं। दौलत राम की मौत के बाद लड़कियों का कहना "नहीं मम्मी पेना नहीं, हम तेरे साथ हैं" लेखिका के प्रयासों को सार्थकता प्रदान करता है।

—जस्सी सिद्धू

गजानन माधव मुक्तिबोध

[पुस्तकः गजानन माधव मुक्तिबोध, लेखक; रणजीत सिंह, प्रकाशकः जय भारती प्रकाशन, इलाहाबाद-211003, मूल्य : 125.00 रु०]

डा० रणज़ीत सिंह की सद्यः प्रकाशित आलोचना-पुस्तक "गजानन माधव मुक्तिबोधः सृजन और शिल्प" मुक्तिबोध की कविताओं की समीक्षा-आलोचना और मूल्यांकन-पुनर्मूल्यांकन की दृष्टि से एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है। मुक्तिबोध की कविताओं की आलोचना-समीक्षा की एक लंबी परम्परा रही है, जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। उस श्रृंखला में डा० सिंह की पुस्तक एक महत्वपूर्ण कड़ी मानी जायेगी। इस प्रसंग में उनका यह कथन उद्‌धृत करना प्रासंगिक होगा कि 'संपूर्ण हिन्दी साहित्य के इतिहास में मुक्तिबोध का अपना एक निजी रचनात्मक चरित्र है।' (पृ० 5) इसका प्रमाण यह है कि उन्होंने अपने कवि-जीवन के दौरान कुछ ऐसे काव्य-मूल्यों और साहित्य-सिद्धांतों की प्रस्तावना की जो हिन्दी जगत के लिए अब एक उपलब्धि बन गये हैं। अतः उनकी कविता के निजी स्वर के संदर्भ में ही उनकी वस्तुपरक संतुलित समीक्षा की जानी चाहिए।

पुस्तक के प्रथम अध्याय में 'नई कविता : मार्क्सवाद और मुक्तिबोध' में नई कविता आन्दोलन के दौरान उभरने वाली नई कविता की सामान्य विशेषताओं के संदर्भ में विभिन्न कवियों के काव्य-वैशिष्ट्य का सर्वेक्षण करते हुए डा० सिंह ने मुक्तिबोध की कुछ विशिष्ट मौलिक उपलब्धियों का उल्लेख किया है। उनका निष्कर्ष है कि नई कविता के मार्क्सवादी कवियों में मुक्तिबोध का सबसे अलग एक अपना निजी स्वर है। पर इस अध्याय का महत्व सिर्फ परिचयात्मक ही है।

पुस्तक का द्वितीय अध्याय 'मुक्तिबोध की विश्व-दृष्टि' हैं। वस्तुतः इसी अध्याय से मुक्तिबोध की वैचारिकता और काव्य-विवेक का गम्भीर अध्ययन आरंभ होता है। इसमें विश्व-मानवता के संदर्भ में मुक्तिबोध के सौंदर्यशास्त्रीय चिंतन का मूल्यांकन करते हुए कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्रस्तुत किए गए हैं कि मुक्तिबोध की कविता वस्तुतः उनके निगूढ़ चिंतन, समाजशास्त्रीय दृष्टि और मनोवैज्ञानिक विश्लेषणपरक दृष्टि का परिणाम है।

तृतीय अध्याय में 'वस्तु-तत्व' के आधार पर कवि की वैचारिकता, बौद्धिकता और प्रगतिशील जीवन-दृष्टि को रेखांकित किया गया है। इसमें कवि की कुछ वैसी महत्वपूर्ण कविताओं की वस्तु का निर्देश किया गया है जो उसकी जीवन-दृष्टि सभ्यता-समीक्षा तथा सौंदर्यशास्त्रीय चिंतन को पूरी प्रखरता के साथ द्वन्द्वात्मक जीवन-संदर्भों में समकालीन मनुष्य के हालात से हमारा साक्षात्कार कराती है। इस प्रसंग में 'मुक्तिबोध की काव्य-चेतना' नामक अध्याय में डा॰ सिंह का यह कथन उद्धृत करना प्रासंगिक होगा जिसमें उन्होंने लिखा है—मुक्तिबोध का काव्य कवि के व्यक्तिगत मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक चिंतन से लेकर विश्व-दृष्टि के संदर्भ में ह्रासग्रस्त मूल्यों की सामाजिक चेतना और द्वन्द्वात्मक जीवनानुभवों से जुड़ा हुआ है।' (पृ॰ 84) लेखक की यह स्थापना है कि मुक्तिबोध की कविता की भाव-चेतना का संबंध मानव-जीवन के यथार्थ और उसकी अनिवार्य कटु नियति से है। उनकी सर्जनशीलता के पीछे एक ऐसा मानसिक और सामाजिक दबाव है, एक ऐसी चिंता और ऐसा तनाव है, एक मध्यवर्गीय जीवन की ऐसी महागाथा है कि वे दुःखों के क्रम को भीतरी और बाहरी संघर्ष को ही जीवन का सत्य मान लेते हैं। मुक्तिबोध के आत्मचेतस् व्यक्ति की खोज निरंतर जारी है। वे दुःख और दैन्य से कभी घबराते नहीं। जन और जन-शक्ति में उनकी आस्था इतनी प्रबल है कि वे मनु के हर पुत्र पर विश्वास करना चाहते हैं। आलोच्य समीक्षा-पुस्तक में मुक्ति-बोध की कविताओं में संवेदनात्मक के कई स्वरों को रेखांकित करते हुए उनके भाव-बोध और वैचारिक तनाव से उत्पन्न समकालीन सभ्यता और संस्कृति की विकृतियों की ओर सांकेतिक रूप से निर्देश किया गया है। कविता में जिस सभ्यता-समीक्षा और समाज-समीक्षा की जिस पद्धति का सहारा लिया गया है, उसका सार निष्कर्ष रूप में प्रस्तुत करते हुए यह भी विश्लेषित किया गया है कि मुक्तिबोध ने 'संकल्पधर्मा चेतना' की अभिव्यक्ति मुख्यतः जीवन-मूल्यों और मानव-चरित्र के संदर्भ में ही किया है। कवि की काव्य-चेतना के विश्लेषण की दृष्टि से यह अध्याय अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

प्रस्तुत पुस्तक का सबसे महत्वपूर्ण अध्याय 'मुक्तिबोध का काव्य-शिल्प' है। इसमें बिंब, प्रतीक, मिथ, फेंटेरी और भाषिक संरचना की दृष्टि से मुक्तिबोध की कविता का, स्वयं उनके द्वारा निर्मित काव्य-दृष्टि के आलोक में विश्लेषणपरक पुनर्मूल्यांकन प्रस्तुत किया गया है। इसमें पहली बार मुक्तिबोध की कविताओं का संदर्भ सापेक्ष समाजशास्त्रीय विवेचन प्रस्तुत किया गया है। मुक्तिबोध की सर्जनात्मक भाषा पर लगाये गये अनगढ़ता और उबड़-खाबड़पन के आरोपों पर सूक्ष्म और तार्किक रूप से विचार करते हुए यह निष्कर्ष दिया गया है कि वे एक विशेष अर्थ में एक नई और मौलिक काव्य-भाषा के निर्माण-कवि थे, जिन्होंने अपेक्षाकृत छोटी और सुगठित काव्यान्दोलन के दौर का कवि होकर भी जटिल संवेदनाओं से युक्त ऐसी लंबी कविताओं की रचना जिनमें अपने समय की जीवन-स्थितियों को उनकी पूरी भयावहता और व्यापकता में उपस्थित किया गया है।

अंतिम अध्याय 'रामविलास शर्मा की अलोचना-दृष्टि और मुक्तिबोध' है। वस्तुतः 'मुक्तिबोध के संबंध में सबसे अधिक विवादास्पद आलोचना-दृष्टि के प्रवर्तन का श्रेय रामविलास शर्मा को है।' (पृ॰ 188) पुस्तक में मुक्तिबोध की कविता की समस्त आलोचना-परम्परा को विचार और पुनर्मूल्यांकन को केन्द्र में रखते हुए इस अध्याय में विशेष रूप से, उनकी कविताओं के संदर्भ में रामविलास शर्मा की आलोचना-दृष्टि और स्थापनाओं से किन्हीं बिन्दुओं पर महत्वपूर्ण असहमति रखते हैं तथा यह सिद्ध करते हैं कि यदि रामविलास शर्मा मुक्तिबोध की कविताओं पर रहस्यवाद की छाया और अस्तित्ववाद का अलोक देखते हैं तो कोई अस्वाभाविक नहीं। इसका कारण यह है कि उसमें उनकी पूर्वाग्रहग्रस्त और आरोपित आलोचना-दृष्टि के कारण मुक्तिबोध की कविताओं के भाष्य की समस्या आड़े आती है। यदि डा॰ शर्मा उनकी कविताओं का सही और संतुलित भाष्य कर सके होते तो जन-चेतना, सभ्यता-समीक्षा, समाज-समीक्षा तथा शोषित जनों के जीवन के कटु-यथार्थ के पक्षधर कवि मुक्तिबोध को वे मार्क्सवाद से रहस्यवाद का समन्वय बिठाने वाला तथा अस्तित्ववादी कवि करार न देते। इस क्रम में डा॰ सिंह की यह स्थापना महत्वपूर्ण प्रतीत होती है कि मुक्तिबोध की कविता के संबंध में चली आ रही आज तक की आलोचना-परम्परा में स्वयं कवि मुक्तिबोध की अवधारणाओं, विचारधाराओं तथा विश्व-दृष्टि के आलोक में उनकी कविता की संतोषजनक, संतुलित और सम्पूर्ण भाष्य प्रस्तुत नहीं किया गया। यही कारण है कि उनकी कविता के संबंध में, कविताओं के माध्यम से प्रस्तुत जीवन-दृष्टि के संबंध में, उनके द्वारा की गई वर्तमान सभ्यता-समीक्षा और आलोचना-दृष्टि के संबंध में, अनेक प्रकार की भ्रांतियां फैलती रही हैं। जहां तक अस्तित्ववाद का प्रश्न है डा॰ सिंह लिखते हैं;, 'मुक्तिबोध इतिहास की भौतिकवादी अवधारणा में विश्वास करते थे, पर अस्तित्ववादी दार्शनिक इतिहास-विरोधी थे।' (पृ॰ 194) उनके विचार से मुक्तिबोध की कविता के संबंध में डा॰ शर्मा की सारी उलझनें इसलिए पैदा हुई कि वे उनकी कविताओं की द्वन्द्वात्मक संदर्भ में भौतिकवादी व्याख्या न कर व्यंग्य और विडम्बना के संदर्भ में कवि द्वारा गृहीत नैतिक-धार्मिक शब्दावलियों के आधार पर उसकी कविता की नैतिक धार्मिक व्याख्या करते हैं। मुक्तिबोध की जीवन-दृष्टि वस्तुतः अलौकिक रहस्यानुभूति की नहीं मानव जीवन के सामाजिक यथार्थ से जुड़ी हुई है।

प्रश्न है कि क्या किसी कवि को सिर्फ इसलिए उतना महत्व न दिया जाए कि वह अपनी कविताओं में समाज-विश्लेषण और समीक्षा की जिस द्वन्द्वात्मक पद्धति का सहारा ले रहा है, उसमें योग-साधना, रहस्य-चिंतन परम्परा, पाप या पाप-भावना तथा अपराधबोध जैसे नैतिकबोध से युक्त शब्दों का प्रयोग करता है। क्या सिर्फ इसी कारण से उसकी मूल चेतना से अलग हटकर उनकी कविताओं का विवेचन-विश्लेषण किया जाए और उसे रहस्यवादी-अस्तित्ववादी करार दे दिया जाए? वस्तुतः मुक्तिबोध का समाजबोध तथा इतिहास बोध इतना सजग और प्रखर था कि वर्तमान समाज और राजनीति की समस्याओं से मुंह मोड़ ही नहीं सकते थे। इस तथ्य की ओर संकेत करते हुए डा॰ सिंह ने लिखा है: तमाम आरोपों, आक्षेपों और आलोचना-प्रत्यालोचनाओं के बावजूद उनका रचनात्मक व्यक्तित्व अप्रतिहत रहा है और बार-बार अपनी सार्थकता सिद्ध करता रहा है। (पृ॰ 5)

'उपसंहार' के अन्तर्गत मुक्तिबोध की समग्र जीवन-दृष्टि और रचनात्मक उपलब्धियों का निष्कर्ष प्रस्तुत करते हुए यह प्रतिपादित किया गया है कि वे वर्तमान जीवन-समस्याओं और स्वानुभूत सत्य के तनाव से उत्पन्न मध्यवर्ग

और निम्न मध्यवर्ग की मानसिक उलझनों, असामान्य मनोदशाओं तथा जीवन-स्थितियों के साथ समकालीन समाज के दुःस्वप्न को पूरे साहस के साथ प्रभावशाली रूप में चित्रित करते हैं। समकालीन जीवन-स्थितियों को उनकी पूरी भयावह व्यापकता और गहराई में परिभाषित करने में वे 'अपने मुहावरों में विनोदप्रियता, व्यंग्य, विश्लेषण, उत्सवधर्मिता, रिटोरिक, बातचीत, बिंबधर्मिता और सपाटबयानी आदि का अद्‌भुत जटिल संयोजन करते हैं'। (पृ॰ 209) डा॰ सिंह आगे लिखते हैः 'अतः उनकी कविता खुरदरी और विचलित करने वाली होकर भी अभी तक चमकीली और प्रीतिकर बनी हुई है।' (पृ 209)

विवेच्य पुस्तक अन्तर्दृष्टि सम्पन्न विचारोत्तेजक और बौद्धिक विश्लेषण से युक्त रोचक और पठनीय है। मुझे विश्वास है कि यह मुक्तिबोध के साहित्य पर नये सिरे से विचार करने और बहस करने की संभावनाओं के द्वार खोलेगी। यह इसकी उपलब्धि है।

—रमणिका गुप्ता

प्रशासनिक हिन्दी

[पुस्तकः प्रशासनिक हिन्दी, लेखकः डॉ॰ ओम्प्रकाश सिंहल, प्रकाशकः पीताम्बर पब्लिशिंग कम्पनी प्रा॰ लि॰, 888 ईस्ट पार्क रोड, करोल बाग, नई दिल्ली, मूल्यः 75.00 रु॰]

राजभाषा हिन्दी को राजकाज की भाषा बनाने की दिशा में किये जा रहे अनेक प्रयासों की श्रृंखला में प्रकाशित यह पठनीय पुस्तक सचमुच एक सार्थक प्रयास है। इसके लिए विद्वान लेखक बधाई और साधुवाद के पात्र हैं। नितनूतन आविष्कारों, यंत्रों, उपकरणों तथा विविध विधानों के झंझावत को अपने उर अंतरात्मा में समेटे हुए यह पुस्तक न केवल कामकाज में लीन कर्मचारियों की ही आभूषण बन रही है अपितु नवयुवकों के लिए प्रेरणा का स्रोत बनने की दिशा में अभिनव प्रयोग है। पांच अध्यायों में बंटी यह पुस्तक अपने में संपूर्ण है जो पाठ्य पुस्तक के रूप में विश्वविद्यालयों तथा प्रशिक्षण संस्थानों में व्यवहार में लाने योग्य है।

पुस्तक का आरंभ सविस्तार लिखी भूमिका से किया गया है जो लेखक के मनोभावों का सोद्देश्य प्रस्तुतीकरण है। राजभाषा, अनुप्रयुक्त भाषा, राष्ट्रभाषा, संपर्क भाषा, भाषायी विविधता, विविध सरकारी नैमित्तिक कागजात, पारिभाषिक शब्दावली, अनुवाद, प्रूफपाठन और विचारक्रांति अभियान की एक कड़ी के रूप में वर्तमान स्वरूप का निरुपण किया गया है।

यह ध्रूव सत्य है कि कार्यालयीन कार्यों की शुरूआत फाइल या मिसिलों पर टिप्पण (नोटिंग) से होती है जिसका व्यावहारिक ज्ञान कर्मचारी, प्रशासक एवं प्रशासनिक अधिकारी के लिए अनिवार्य है। बड़े दिग्गज लोग भी टिप्पण का तरीका नहीं जानते अतएव अर्थ का अनर्थ कर बैठते हैं जिनकों उनके नीचे के कर्मचारी सिखाते हैं और टिप्पण ठीक न कर पाने के कारण परमुखापेक्षी होना पड़ता है। पुस्तक में सोदाहरण अंग्रेजी तथा हिन्दी में टिप्पण को नमूनार्थ प्रस्तुत करने का भगीरथ प्रयास किया गया है। वाक्यांशों, छोटे-छोटे संयुक्त शब्दों के उपयुक्त हिन्दी पर्याय लिखकर न केवल अपने सुदीर्घ अनुभव से पाठकों की लाभान्वित किया हैं या पत्राचार से जुड़े कतिपय वाक्यांशों को कुछ सटीक उदाहरण सहित दर्शाया गया है। अनेक रोजमर्रा के इस्तेमाल के प्रशासनिक तथा तकनीकी शब्दों के अंग्रेजी रूपांतरण दिये गये हैं। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि एक ही अंग्रेजी शब्द के लिए अनेक हिन्दी पर्यायवाची शब्द दिए गए हैं।

शब्दावली निर्माण के लिए मध्यमार्ग अपनाने वालों में काशी नागरी प्रचारिणी सभा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, केन्द्रीय हिन्दी निदेशलाय आदि हैं। डॉ॰ रघुवीर की शब्दावली में कुछ परिवर्धन किये गये हैं।

चौथा अध्याय अनुवाद और उसके विविध आयामों को उद्‌घाटित करते हुए इसकी मीमांसा की गई है। शब्दानुवाद, भावानुवाद, छायानुवाद, टीकानुवाद, सारानुवाद, रूपांतर, आदि का विस्तृत विवेचन किया गया है अंततः अच्छे अनुवाद के गुणों को उजागर करते हुए अनुवाद को अनुवादक की अंतशत्मा और शुद्ध अंतःकरण से निकली विधा कहा गया है। विविध समस्याओं का उल्लेख करते हुए बहुत सटीक उदाहरण दिये गये हैं। अनुवाद का एक नमूना द्रष्टव्य हैः "oral contraceptive" के लिए "मौखिक गर्भनिरोधक" लिखना उस अनुवादक की भारी भूल कही जायेगी। इससे अनुवाद सार्थक न होकर हास्यास्पद हो जाता है। काव्य, गद्य, कथा, प्रशासनिक एवं अखबारी अनुवाद के अनेक स्वरूपों को लेखक ने समाविष्ट किया है।

प्रूफलेखन को भी प्रशासनिक कार्यों का एक अंग मान कर इसके प्रतीक चिह्नों को दर्शाया गया है। संकेत—हिन्दी, अंग्रेजी को विकेन्द्रित कर प्रदर्शित किया गया है। प्रूफरीडिंग के पारिभाषिक शब्द भी दिये गये हैं। अंत में राष्ट्रभाषा और राजभाषा के रूप में हिन्दी का उल्लेख किया गया है।

दूसरा अध्याय प्रारूपण अर्थात् ड्राफ्टिंग के विविध आयामी पहलुओं तथा उपयुक्तता की दृष्टि से यथासाध्य प्रतिपादन करने की चेष्टा की गई है। प्रारूपण की मूल आत्मा को समझाते हुए सरल, सुबोध भाषा में विषयवस्तु को उपयोगकर्त्ता तक पहुंचने की कला वस्तुतः अपने में तकनीकी विधा हो सकती है। आवेदन, प्रतिवेदन, विचारणीय विषय आदि को संपुर्णता के साथ उल्लिखित किया जाता है। चूंकि फाइल नीचे से लेकर ऊपर और फिर ऊपर से आदेश प्राप्त करनी होती और आती—जाती है, इसलिए ड्राफ्टिंग के बलबूते पर ही समूचे प्रकरण को समझाया जा सकता है।

प्रायः लिपिक स्तर पर प्रारूपण की शुरूआत होती है इसलिए उसे ऐसी भाषा का अनुसरण व्यवहार करना होगा जो कम हिन्दी का ज्ञान रखने वाला अधिकारी भी सुगमता से पढ़-समझ सके। यही नहीं भाषा में स्वयं स्पष्ट होने की भी बात आलेखन का मूल आधार माना गया है।

इस बात की ताकीद (ध्यानाकर्षण) कर दी जाये कि पत्र किस प्रकृति का है लेकिन यदि उससे कुछ कहता है। समय, प्रेषक का नाम पता साफ रहना समीचीन है। पुस्तक में सरकारी पत्राचार का विशद् वर्णन है। यह पुस्तक सरकारी कार्यालयों में कार्यरत अधिकारियों में कार्यरत अधिकारियों एवं कर्मचारियों के लिए हिंदी में काम करने के लिए उपयोगी है।

— मुकुल चंद पाण्डेय

प्रतिनिधि कहानियां

[पुस्तकः प्रतिनिधि बाल कहानियां, संपादकः जय प्रकाश भारती, प्रकाशकः समय प्रकाशन, 33 ए संचार लोक एपार्टमेंट, पटपड़ गंज डिपो, दिल्ली-110092, मूल्यः 40.00 रू]

हिंदी बाल कहानी जगत के जाने-माने हस्ताक्षर और बाल पत्रिका "नंदन" के संपादक श्री जयप्रकाश भारती द्वारा सम्पादित समीक्ष्य पुस्तक में कुल मिलाकर 33 कहानियां संग्रहीत है। इनमें से अधिकांश कहानियां

"नंदन" में समय-समय पर प्रकाशित हो चुकी हैं। इनमें जादुई, नीति संबंधी, परियों की, बाल-पात्रों वाली, मनोरंजक, शिक्षाप्रद, राक्षसों, डाकुओं वाली सभी प्रकार की कहानियां सम्मिलित की गई हैं। पुस्तक में व्यथित हृदय, भीष्म साहनी, डा. श्याम सिंह शशि, डा. रेखा व्यास, कविराज ओमप्रकाश, डा. भगवती शरण मिश्र और स्वयं जयप्रकाश भारती इत्यादि जैसे चर्चित कथाकारों की बाल कथाएं सम्मिलति की गई हैं। कुछ नाम एकदम नए भी प्रतीत होते हैं।

इन कथाओं की सबसे बड़ी विशेषता इनका सरल सहज और रोचक होना है। कथावस्तु में बाल सुलभ रोचकता अंत तक बनी रहती है। वाक्य विन्यास बहुत अच्छा है। वाक्य संक्षिप्त एवं सरल है।

व्यथित हृदय की 'सुख का सागर', भीष्म साहनी की "मौसी", देवेन्द्र सत्यार्थी की "पिता के लिए", यादवेन्द्र शर्मा की "छड़ी की आवाज, भीष्मपाल की "कैधार का कैदी" और डा. विनय अग्रवाल की "नहीं चाहिए सोना" आदि कहानियां विशेष तौर पर छाप छोड़ती हैं लेकिन कुछ कहानियों में कल्पना की उड़ान कुछ ज्यादा ही है। एकाध कथा ऐसी भी है जो बाल कथा-सी प्रतीत नहीं होती। कुछ मिलाकर यह एक अच्छा एवं संग्रहणीय बाल कथा संकलन बन पड़ा है लेकिन हमेशा की तरह पेपर-बैंक एवं सजिल्द मूल्य इतने ज्यादा हैं कि खरीदने की हिम्मत आम पाठक वर्ग शायद ही जुटा पाए। यदि इस कमी को छोड़ दिया जाए तो इस समय जरूरत है कि इसी प्रकार के मनोरंजक एवं शिक्षाप्रद बाल कथा संग्रह अधिकाधिक प्रकाशित किए जाएं।

—राजेश श्रीवास्तव

आस्था में आस्था को खोजता 'प्रपंच'

[पुस्तकः प्रपंच (उपन्यास), लेखिकाः श्रीमती बाला शर्मा, प्रकाशकः वातायन प्रकाशन, 73, बनारसी दास स्टेट, लखनऊ रोड, दिल्ली-54. मूल्यः 68/- रुपए]

आज का सामाजिक एवं पारिवारिक वातावरण संभ्रम और संशय का वातावरण बनकर रह गया है। अनास्था के स्वर हर कोने में गूंजित हैं। यह आस्था जब विराट होती है तो स्वयं का व्यक्तिगत और महत्व भी शंकित सा अनुभव होता है। इन्हीं प्रश्नों का उत्तर पाने और 'स्व' से 'पर' की और उन्मुख होने की सनातन प्रकृति को पुनः जागृत करने का सृजनात्मक प्रयास कथाकार बाला शर्मा ने अपने ताजे उपन्यास प्रंपच में किया है।

वैसे कथा साहित्य में बाला शर्मा कोई नया नाम नहीं है। सामाजिक और पारिवारिक धरातल को उन्होंने अपनी संवेदनशील दृष्टि से बहुत सूक्ष्मता से देखा है। मानवीय जीवन का प्रत्येक प्रसंग एक कथा है। लेखिका भूमिका में स्पष्ट करती है कि कथा चक्र जारी है, सम्पूर्ण वेग से जारी है। स्वयं में और भी न जाने कितने कथा चक्र सिमेटे न जाने कितने ध्वंस-विध्वंस का ब्यौरे लिए है। सामाजिक और पारिवारिक पृष्टभूमि से उर्वरता ग्रहण करता 'प्रपंच' भी ध्वंस-विध्वंस मूल्यों के मध्य नवसृजित एवं मानवीय मूल्यों के आग्रहों का प्रभावशाली अभिलेख है।

'विनय' के रूप में लेखिका एक ऐसे पार को प्रस्तुत करती है जो कि आधुनिक परिवेश में लगभग हर गली कूचे में मिल जाएंगे। वह निश्चित ही भावुक है लेकिन अपने जीवन प्रसंगों के प्रति संतुष्ट नहीं है। असंतोष और व्यक्तिगत उपादेयता के प्रति उपजी आस्था को लेखिका अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करती है। "रात के अंधेरे में यह प्रश्न साकार खड़ा हो जाता तो दिन के उजाले में स्वयं से भी दृष्टि चुरा लेते विडंबनाओं के जाल में फंसते चले जाना बस यही से पति बनकर रह गई है। कहीं न कहीं उनकी आत्मा जमीर को कचोट उठती फिर रात भर नींद नहीं आती कि क्या इसीलिए बचपन में गांव छोड़ा था।" आज एक नहीं हजारों विनय खण्डित संकल्पों को लेकर महानगरों में कंकरिठ की सभ्यता और आग्रहों में खो जाते है। यही विनय के साथ भी हुआ लेकिन उसकी संकल्प धर्मिता उसे आत्मावलोकन हेतु निरत्तर प्रेरित करती रहती है।

'प्रपंच' किस बात का प्रपंच? लेखिका ने इस शब्द को बहुत व्यापकता के साथ देखा है। जीवन का पर्याय ही प्रपंच बन गया है। 'देवनाथ' जैसा सरल और सहज व्यक्ति भी कहीं न कही उपेक्षा का शिकार हो जाता है। असल में विनम्रता को दीनता समझ बैठे हैं सब।

कुल मिलाकर 'प्रपंच' उपन्यास सामाजिक रिश्तों और आग्रहों को नवीन दिशा देने में समर्थ प्रतीत होता है। वैसे कटुता से भरे जीवन के क्षणों को तब ही मधुमय किया जा सकता है जबकि प्रपंचों के मकड़जाल से बाहर निकलें। ये प्रपंच केवल बाह्य ही नहीं है बल्कि आंतरिक अधिक घातक है। उपन्यासकार बाला शर्मा ने प्रपंच के माध्यम से युगबोधता का निर्वाह किया है।

—अशोक त्यागी

भारत के प्रसिद्ध तीर्थ

[पुस्तकः भारत के प्रसिद्ध तीर्थ, लेखकः श्री नाथ मिश्र, प्रकाशकः राजकुमारी प्रकाशन, बेनीपुर, वाराणसी, मूल्यः 20 रु०]

भारत को तीर्थों का देश कहा जाता है। यहां शायद ही कोई ऐसी जगह हो जहां तीर्थ स्थल न हों। कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी, पूर्व से पश्चिम तक तीर्थों से भरा हुआ है। यहां का हर शहर किसी न किसी पन्थ की महत्वपूर्ण घटनाओं से जुड़ा हुआ है। इन तीर्थ स्थलों की यात्रा से तीर्थ-यात्रियों को एक दूसरे की संस्कृति व सभ्यता के बारे में रोचक जानकारी प्राप्त होती है।

समीक्षित कृति में पर्यटकों के लिए उपयोगी सूचनाएं दी गई हैं, जैसे देश के किसी भी तीर्थ स्थल तक जाने के लिए कौन-कौन से साधन उपलब्ध हैं, कौन से मौसम में किस तीर्थ स्थल में जाया जा सकता है। यहां तक इनके आस-पास के मुख्य स्थलों की दूरी, वहां के वातावरण का भी कहीं-कहीं जिक्र किया गया है।

बीच-बीच में लेखक ने विषय से हट कर कुछ अन्य सामान्य, जानकारियां भी दी हैं। जैसे भूमिहार, पचांग तथा कैलेण्डर, विश्व की कुछ प्रमुख सूचनाएं आदि। इससे पाठक थोड़ा सा परिवर्तन महसूस करता है। अच्छा भी लगता है। हर तीन-चार तीर्थों के बाद महत्वपूर्ण विवरण से पाठक की जिज्ञासा और बढ़ जाती है।

लेखक को स्वयं भी कई तीर्थ स्थलों के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है और उन्हें इन यात्राओं में नये-नये अनुभव हुए। नई-नई जानकारियां मिलीं। उन सभी को लेखक ने इस पुस्तक में समेटने का सफल प्रयास किया है।

प्रस्तुत पुस्तक तीर्थ यात्रियों, पर्यटकों, धार्मिक विचारधारा रखने वाले पाठकों आदि के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

—शान्ति कुमार स्याल

तिरूप्पावै

[पुस्तकः विरूप्पावै, लेखकः पा० वेंकटाचारी, प्रकाशकः श्री सेवा भारती, 64 गांधी रोड़, चूलैमेडु, मद्रास-600 094, मूल्यः 70.00 रु०]

दक्षिण में शिव की उपासना के समानान्तर विष्णु या नारायण की उपासना भी प्रचलित रही है। विष्णु अथवा नारायण को परमतत्व का प्रतीक अथवा परब्रह्म मानने वाले इन भक्तों को आलवार की संज्ञा दी जाती है। सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, सर्वान्तर्यामी विष्णु के प्रति असीम अनुराग तथा अहर्निश उसके स्मरण, चिंतन, कीर्तन तथा श्रवण आदि के माध्यम से उसके सामीप्य का प्रयास इस श्रेणी के संतों का वैशिष्ट्य है। माधुर्य तथा प्रेम से सिरक्त यह भाक्तिधारा यद्यपि सगुण भक्ति के अधिक समीप है किन्तु उसका मूल आधार अद्वैत ही है।

प्राचीन काल से दक्षिण भारत, विशेषतः तमिलनाडु अनेक संतों एवं आचार्यों का अवतार स्थल रहा है। इन पूज्य संतों में 12 वैष्णव भक्त आलवार (दिव्य सूरि) के नाम से विख्यात हैं। इन आलवारों में से कुछ सातवीं/आठवीं शताब्दी के हैं तो कुछ उससे पहले के भी है। ये आलवार विभिन्न मंदिरों में भगवान के दर्शन करके उनका मंगलगान करते थे। भगवान के दर्शन की अनुभूति से उनके मन में भक्ति की जो भावनात्मक लहरें उठीं, वे ही भगवान के संकल्प से तमिल भाषा की सुन्दर गीतियों में उनके श्रीमुख से प्रकट हुई। इन आलवारों द्वारा मंगलाशसित क्षेत्रों को दिव्य देश कहने की परम्परा है। भारत में 108 दिव्य देश हैं जिनमें से 11 दिव्य देश उत्तर में अवस्थित हैं। इन्हीं से संबंधित तथ्यों को उजागर करती है—पा० वेंकटाचारी द्वारा रचित पुस्तक 'तिरूप्पावै'।

प्रस्तुत पुस्तक दो खण्डों में विभक्त हैं खण्ड-1 में महान भक्तिन आंडाल का संक्षिप्त परिचय तथा तिरूप्पावै की 30 दिव्य सूक्तियों को देवनागरी में लिप्यंतरित करके उनकी व्याख्या सरल एवं बोधगम्य हिंदी भाषा में की गई है। प्रत्येक सूक्ति के अंत में स्वापदेश भी दिया गया है जो पाठकों का ज्ञानवर्धन करते हैं।

तिरूप्पावै की 30 सूक्तियों में भक्तिन आण्डाल तथा अन्य गोपियों के नानाविध कार्यकलापों का मनोहारी वर्णन है। ये भगवान कृष्ण को प्रसन्न करने के लिए ब्रत्त रखती हैं। जो गोपियां ब्रत्त में शामिल नहीं होती हैं, उन्हें भी बुलाया जाता है। सभी गोपियां यमुना में स्नान करती हैं। कृष्ण की दिव्य लीलाओं की स्तुति, कीर्तन आदि करती हैं।

समीक्षित कृति के खण्ड-2 में उत्तर के दिव्य क्षेत्रों का वर्णन है तथा इनसे संबंधित सूक्तियों का भावानुवाद हिंदी में किया गया है। इन सूक्तियों के माध्यम से लेखक द्वारा इन दिव्य क्षेत्रों की भौगोलिक स्थिति, इनकी उत्पत्ति, सत्मार्ग पर चलने की प्रेरणा तथा मर्यादा एवं नियमों का उल्लंघन करने पर दण्ड है, गंगा की महिमा, गंगाजल की उत्कृष्टता, गोवर्धन पूजा आदि का वर्णन किया गया है। इस प्रकार आज के संदर्भ में ऐसी कृतियों की नितांत आवश्यकता है।

हिंदी भाषा-भाषी पाठकों के लिए 'तिरूप्पावै' को एक अनुपम लघु धार्मिक ग्रंथ की संज्ञा दी जा सकती है। अंततः जहां एक ओर इन दिव्य सूक्तियों के चिंतन, मनन, एवं अध्ययन से शांति प्राप्त होती है वहीं दूसरी ओर जन-जन का आध्यात्मिक एवं भौतिक विकास भी होता है।

पुस्तक की साज-सज्जा, मुद्रण आदि आकर्षक है।

— नेत्र सिंह रावत

☆☆☆

"प्रान्तीय ईर्ष्या–द्वेष को देर करने में जितनी सहायता इस हिंदी प्रचार से मिलेगी, उतनी किसी दूसरी चीज से नहीं मिल सकती। अपनी प्रान्तीय भाषाओं की भरपूर उन्नति कीजिए, उसमें कोई बाधा नहीं डालना चाहता और न हम किसी की बाधा को सहन ही कर सकते हैं । पर सारे प्रान्तों की सार्वजनिक भाषा का पद हिंदी या हिंदुस्तानी को ही मिला। नेहरु रिपोर्ट में भी इसकी सिफारिश की गई है। यदि हम लोगों ने तन–मन–धन से प्रयत्न किया तो वह दिन दूर नहीं है जब भारत स्वाधीन होगा और उसकी राष्ट्रभाषा होगी हिंदी ।"

सुभाष चन्द्र बोस

गांधी के सभापतित्व में कलकत्ता में आयोजित राष्ट्रभाषा सम्मेलन के स्थानाध्यक्ष सुभाष चन्द्र बोस के भाषण का अंश, 1929

हिंदी दिवस/सप्ताह/मास

केनरा बैंक

जालंधर क्षेत्र द्वारा 15 अगस्त, 1996 से 14 सितम्बर; 1996 तक हिंदी मास मनाया गया। हिंदी दिवस समारोह का आयोजन दिनांक 12/9/96 को हुआ। इस समारोह में क्षेत्रीय कार्यालय तथा क्षेत्राधीन विभिन्न शाखाओं के प्रबंधकों/कर्मचारियों ने भाग लिया। समारोह की अध्यक्षता बैंक के सहायक महाप्रबंधक श्री पी०एस० कामद ने की। उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में जालंधर क्षेत्र द्वारा राजभाषा के कार्यान्वयन में प्राप्त उपलब्धियों एवं प्राप्त शील्डों की जानकारी देते हुए कहा कि बैंक में हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग किया जा रहा है। इसी के परिणामस्वरूप जालंधर क्षेत्रीय कार्यालय को केनरा बैंक राजभाषा अक्षय योजना 1995-96 के तहत शील्ड मिली है। समारोह में पंजाब केसरी के मुख्य संपादक श्री विजय चौपड़ा मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे। उन्होंने अपने भाषण के माध्यम से उपस्थित अधिकारियों को हिंदी में काम करने के लिए प्रेरित किया। हिंदी मास के दौरान हिंदी निबंध, हिंदी, अंग्रेजी शब्दावली, प्रश्न मंच-प्रतियोगिता, टिप्पण और प्रारूप लेखन प्रतियोगिता आदि विविध प्रतियोगिताएं आयोजित की गईं। प्रतियोगिता में सफल हुए प्रतिभागियों को पुरस्कार प्रदान किए गए।

सैन्ट्रल बैंक आफ इंडिया

सैन्ट्रल बैंक के क्षेत्रीय कार्यालय झांसी में हिंदी दिवस बड़ी धूमधाम से मनाया गया। इस अवसर पर शब्द-ज्ञान प्रतियोगिता आयोजित की गई। जिसमें शाखा एवं क्षेत्रीय कार्यालयों के अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने भाग लिया। इस प्रतियोगिता का प्रारम्भ क्षेत्रीय प्रबंधक श्री एम०सी० शुक्ला ने सर-कोच खानवाला के चित्र पर माल्यार्पण कर अपने स्टाफ को अधिक से अधिक मात्रा में हिंदी में काम करने पर बल दिया। प्रतियोगिता में प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले विजेताओं को पुरस्कार प्रदान किए गए।

इस अवसर पर "राष्ट्रीय एकता में राजभाषा की भूमिका" विषय पर एक भाषण प्रतियोगिता भी आयोजित की गई। बुन्देलखंड विश्वविद्यालय के पूर्व हिंदी विभागाध्यक्ष डा० द्वारिका प्रसाद मित्तल तथा हिंदी विभाग की प्रवक्ता डा० श्रीमती जसवंत कौर ने निर्णायक की भूमिका निभाई। भाषण प्रतियोगिता प्रारम्भ करने से पूर्व माननीय वित्तमंत्री और माननीय गृहमंत्री के संदेश भी पढ़े गए।

मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित कर्नल बी०बी० जोशी ने अपने वक्तव्य में कहा कि हिंदी भाषा स्वतंत्रता दिलाने वाली भाषा है और इसी भाषा के माध्यम से हमें स्वतंत्रता को बनाए रखना है।

आयकर आयुक्त, जालंधर

आयकर आयुक्त जालंधर प्रभार में 12 सितम्बर, 1996 से 18 सितम्बर, 1996 तक हिंदी सप्ताह का आयोजन किया गया। इस सप्ताह के दौरान सभी कार्यालयों में राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकें भी आयोजित की गईं।

इस अवसर पर हिंदी टिप्पण/आलेखन प्रतियोगिता तथा निबंध प्रतियोगिता का भी आयोजन किया गया। कार्यक्रम का मुख्य समारोह आयकर आयुक्त की अध्यक्षता में 17 सितम्बर, 1996 को संमापन हुआ। उन्होंने कहा कि राजभाषा विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए हमें सामूहिक प्रयास करना चाहिए।

महालेखाकार कार्यालय, उड़ीसा

भुवनेश्वर के महालेखाकार कार्यालय में हिंदी पखवाड़े के आयोजन का प्रारम्भ 14 सितम्बर से हुआ। समापन समारोह दिनांक 26 सितम्बर को आयोजित किया गया, जिसकी अध्यक्षता महालेखाकार श्री हर प्रसाद दास ने की। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में कटक आकाशवाणी केन्द्र के निदेशक डा० महावीर सिंह थे। उन्होंने अपने भाषण में कहा कि हिंदी सिर्फ राजभाषा ही नहीं, यह प्रेम, सम्पर्क, एकता और भाइचारे की भाषा है। श्री दास ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि भाषा राष्ट्र की अस्मिता की प्रतीक होती है।

कार्यालय आयुक्त केन्द्रीय उत्पाद शुल्क एवं सीमा शुल्क, इन्दौर

हिंदी पखवाड़े का आयोजन माणिक बाग पैलेस स्थित केन्द्रीय उत्पादन शुल्क एवं सीमा शुल्क आयुक्तालय में किया गया। समापन समारोह के अवसर पर हिंदी में तात्कालिक भाषण प्रतियोगिता आयोजित की गई। प्रतियोगी विजेताओं को पुरस्कार एवं प्रशस्ति-पत्र दिए गए। इसके अतिरिक्त आयुक्तालय में निबंध प्रतियोगिता, हिंदी सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता आदि का भी आयोजन किया गया।

युनाइटेड बैंक आफ इंडिया, उड़ीसा

बैंक के क्षेत्रीय कार्यालय में हिंदी सप्ताह का आयोजन 11/9/96 से 19/9/96 तक किया गया। इस दौरान हिंदी निबंध, हिंदी भाषण आदि प्रतियोगिताएं भी आयोजित की गई। 19 सितम्बर, को समापन समारोह मनाया गया। जिसकी अध्यक्षता मुख्य क्षेत्रीय प्रबंधक श्री वरूण दत्त ने की। उन्होंने हिंदी को व्यापक बनाने के लिए सभी कर्मचारियों से अपील की। प्रतियोगिता के विजेताओं को पुरस्कार प्रदान किए गए।

इंडियन ओवरसीज बैंक मदुरै

इंडियन ओवरसीज बैंक, क्षेत्रीय कार्यालय, मदुरै में दिनांक 14.8.96 से 28.8.96 तक राजभाषा पखवाड़ा मनाया गया। इस दौरान बैंक के कर्मचारियों के लिए हिन्दी में विभिन्न प्रतियोगिताएं आयोजित की गई।

पखवाड़े का समापन समारोह 18.9.96 को मनाया गया। समारोह की अध्यक्षता क्षेत्रीय प्रबंधक श्री डी॰ जयवेलूर ने की तथा अमेरिकन कालेज के विभागाध्यक्ष हिंदी श्री एम॰ बी॰ सुबुरामन, मुख्य अतिथि के रूप में समारोह में विराजमान थे। उन्होंने अपने वक्तव्य में कहा कि हिंदी हमारी राजभाषा है और राष्ट्रभाषा भी। अतः हिंदी सीखना सबके लिए जरूरी है। विजेता प्रतियोगियों को इस अवसर पर पुरस्कार भी दिए गए।

बैंक आफ महाराष्ट्र, बम्बई

बैंक आफ महाराष्ट्र बम्बई के निपियन शाखा में हिंदी दिवस के अवसर पर अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए भाषण तथा निबंध प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। शाखा के मुख्य प्रबंधक श्री अरविन्द ईमानदार ने कहा कि बैंकिंग में हिंदी का प्रयोग बढ़ाने के लिए इस प्रकार के आयोजन का विशेष महत्व है। उन्होंने सभी स्टाफ सदस्यों से अनुरोध किया कि वे अपने दैनिक बैंकिंग कार्यों में हिंदी प्रयोग करें। प्रतियोगिता में विजयी हुए कर्मचारियों/अधिकारियों को पुरस्कार प्रदान किए गए।

कार्पोरेशन बैंक

कार्पोरेशन बैंक क्षेत्रीय कार्यालय, गंटूर में दिनांक 14 सितम्बर, 1996 को हिंदी दिवस मनाया गया। इस अवसर पर वरिष्ठ प्रबंधक श्री शिव प्रसाद की अध्यक्षता में एक समारोह आयोजित किया गया, जिसमें बैंक के अधिकारियों और कर्मचारियों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया समारोह में महावीर कालेज के हिंदी विभागाध्यक्ष मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे। मुख्य अतिथि ने अपने वक्तव्य में कहा कि आज आवश्यकता इस बात की है कि वर्तमान वातावरण में राजभाषा हिंदी के अनुकूल वातावरण बनाया जाए और प्रतिभागियों से अपील की कि वे अपना अधिक से अधिक काम हिंदी में करें।

हिंदी सप्ताह के दौरान विभिन्न प्रतियोगिताएं आयोजित की गईं। प्रतियोगिता में विजयी हुए कर्मचारियों को मुख्य अतिथि ने पुरस्कार दिए।

पंजाब नैशनल बैंक

पंजाब नैशनल बैंक के क्षेत्रीय एवं अंचल कार्यालय सहित मुम्बई एवं गोवा सहित सभी शाखाओं एवं कार्यालयों में 9 सितम्बर से 14 सितम्बर 1996 तक हिंदी सप्ताह मनाया गया। हिंदी सप्ताह का समापन समारोह 14 सितम्बर, 1996 को हिंदी समारोह के रूप में आयोजित किया गया। इस अवसर पर कवि सम्मेलन तथा अन्य प्रतियोगिताएं आयोजित की गईं। समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में डा॰ गिरिजा शंकर त्रिवेदी तथा विशेष आमंत्रित अतिथि के रूप में सुप्रसिद्ध फिल्म संगीत निर्देशक श्री आनंद उपस्थित थे। समारोह की अध्यक्षता उप अंचल प्रबंधक श्री जी॰ एस॰ अरोड़ा ने की। उप प्रबंधक श्री जी॰ एस॰ अरोड़ा ने अपने अध्यक्षीय भाषण में बैंक की उपलब्धियों में राजभाषा कार्यान्वयन प्रगति एव बैंकिंग कार्य में हिंदी की उपयोगिता पर विशेष बल दिया। मुख्य अतिथि डा॰ त्रिवेदी ने उदारीकरण के परिप्रेक्ष्य में बैंक कार्पोरेट एवं हिंदी के प्रयोग की आवश्यकता पर बल दिया और कहा कि जन माध्यम से ही कारोबार बढ़ाने के लिए ग्राहकों में विश्वास् पैदा किया जा सकता है। विशेष आमंत्रित अतिथि श्री आनंद ने कहा कि भाषा दिलों को जोड़ती है, तोड़ती नहीं। उन्होंने विदेशों में प्रस्तुत अपने कार्यक्रमों का उदाहरण देते हुए कहा कि देश से दूर रहने वाले भारतीय हिंदी के द्वारा स्वयं को देश की माटी से जुड़ा महसूस करते हैं और भारतीय होने का कार्य करते हैं। विदेशों में हिंदी जितनी लोकप्रिय है उतनी अन्य कोई भाषा नहीं है। भाषा विवाद केवल हमारे देश के भीतर ही है और वह भी केवल निहित स्वार्थों के कारण ही।

राजभाषा प्रतियोगिता के विजेताओं को माननीय अतिथियों ने अपने करकमलों से पुरस्कार प्रदान किए।

मुख्यालय दीपक परियोजना, द्वारा 56 सेना डाकघर

परियोजना में दिनांक 10 सितम्बर से 14 सितम्बर 1996 तक हिंदी दिवस/पखवाड़े का आयोजन किया गया। इस अवसर पर विभिन्न प्रतियोगिताएं आयोजित की गई जिनमें दीपक परियोजना की अधीनस्थ इकाइयों ने स्वेच्छा से भाग लिया। प्रतियोगिताओं में प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय स्थान पाने वालों को नगद पुरस्कार दिए गए।

हिंदी पखवाड़े समारोह की अध्यक्षता मुख्य अभियंता ब्रिगेडियर सुधीर कुमार ने की। उन्होंने कहा कि हम सभी को अपना अधिक से अधिक कार्य हिन्दी में करना चाहिए क्योंकि यह एक संवैधानिक दायित्व है।

राष्ट्रीय आवास बैंक

राष्ट्रीय आवास बैंक में 1 सितम्बर, 1996 तक हिंदी पखवाड़े का आयोजन किया गया। इस दौरान अधिकारियों के लिए विविध प्रकार की प्रतियोगिताएं आयोजित की गईं। पखवाड़े का मुख्य समारोह 16 सितम्बर, को मनाया गया जिसकी अध्यक्षता कार्यपालक निदेशक श्री के॰के॰मुदगिल ने की। उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि सरकारी कामकाज हिंदी में करने की नितान्त आवश्यकता है। उन्होंने यह भी कहा कि हमें सरल हिंदी का प्रयोग करना चाहिए जिससे उसे सभी समझ सकें। समारोह में हिंदी प्रोत्साहन योजना के अन्तर्गत 14 सफल प्रतियोगियों को पुरस्कृत किया गया और उन्हें नगद पुरस्कार, पुस्तकें एवं प्रशस्ति-पत्र दिए गए।

बैंक आफ इंडिया, राजस्थान

बैंक आफ इंडिया, राजस्थान में कार्यरत सभी शाखाओं एवं क्षेत्रीय कार्यालय में स्वतंत्रता दिवस से हिंदी दिवस तक हिंदी माह का आयोजन किया गया। इस दौरान राजस्थान क्षेत्र की शाखाओं में विविध कार्यक्रम, प्रतियोगिताएं एवं बैठकों का आयोजन किया गया। इन प्रतियोगिताओं एवं कार्यक्रमों, में स्टाफ सदस्यों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया।

हिंदी माह के दौरान बैंक की शाखाओं में आंतरिक कार्य के ग्राहक सेवा संबंधी कार्य एवं सम्पूर्ण पत्राचार हिंदी में किया गया।

लघुशस्त्र निर्माणी, कानुपर

लघुशस्त्र निर्माणी में प्रत्येक वर्ष की भांति इस वर्ष भी 14 सितम्बर 1996 को हिंदी दिवस समारोह का आयोजन किया गया। समारोह की अध्यक्षता महाप्रबंधक श्री आर॰पी॰जौहरी ने की। समारोह में प्रख्यात हिंदी विद्वान उपस्थित थे। मुख्य अतिथि के रूप में उत्तर प्रदेश शिक्षा आयोग के भूतपूर्व अध्यक्ष डा॰ ब्रज लाल वर्मा ने शिरक्त की। मुख्य अतिथि ने अपने प्रेरक भाषण द्वारा हिंदी को एक वैज्ञानिक और उत्कृष्ट भाषा बताते हुए हिंदी के शब्दों को शुद्ध रूप में प्रयोग करने के लिए अह्वान किया।

निर्माणी में 14 सितम्बर, से ही हिंदी पखवाड़े का आयोजन किया गया। इस दौरान हिंदी में विविध प्रतियोगिताएं आयोजित की गईं। सफल प्रतियोगियों को पुरस्कार प्रदान किए गए।

यूनाइटेड बैंक, कलकत्ता

यूनाइटेड बैंक आफ इंडिया कलकत्ता के उत्तर क्षेत्रीय कार्यालय में 14/9/96 को हिंदी दिवस मनाया गया। इस अवसर पर आयोजित समारोह की अध्यक्षता सहायक महाप्रबंधक श्री अरुण कुमार बैनर्जी ने की। कार्यक्रम का शुभारम्भ सुश्री सोम राय के उद्बोधन संगीत से हुआ। इस अवसर पर हिंदी के पोस्टरों की एक प्रदर्शनी भी लगाई गई तथा प्रतियोगिता एवं विचार गोष्ठी का भी आयोजन किया गया। हिंदी वाक प्रतियोगिता में प्रथम, द्वितीय और तृतीय स्थान पाने वालों को पुरस्कार प्रदान किए गए तथा कार्यालीन कामकाज में जिन अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने हिंदी का सर्वाधिक प्रयोग किया उन्हें भी पुरस्कृत किया गया।

पोस्टमास्टर जनरल का कार्यालय उत्तर कर्नाटक क्षेत्र, धारवाड

पोस्टमास्टर जनरल का कार्यालय में दिनांक 13-9-1996 से 27-9-1996 तक हिन्दी पखवाडा का आयोजन किया गया और 27 सितम्बर को कार्यालय के परिसर में हिन्दी समापन समारोह मनाया गया जिसमें विविध प्रतियोगिताएं आयोजित की गईं जैसे, श्रुत लेखन, हिन्दी शब्दों का अुनवाद, हिन्दी से अंग्रेजी तथा अंग्रेजी से हिन्दी में वाक्यों का अनुवाद, हिन्दी शब्द कोश, निबंध, पत्र लेखन, हिन्दी में तार दीजिए और पैसे बचाईये, वाचन स्पर्धा तथा हिन्दी भक्ति गीतों को प्रतियोगिता के आयोजन के साथ—साथ इस अवधि में सरकारी काम—काज जहां तक संभव हो सका अधिक से अधिक हिन्दी में ही हुआ। 27-9-96 को आयोजित समापन रूप में उपस्थित थे। समारोह की अध्यक्षता सहायक निदेशक श्री वि॰आर॰जोशी, ने की। हिन्दी बी॰एड् कालेज के प्राचार्य, श्री के॰ आई॰ सत्तिगेरीजी मुख्य अतिथि के स्थान गृहण की। श्रीमान जी॰एन॰ कुलकर्णी, सहायक निदेशक-II (भवन/शिकायत) ने स्वागत भाषण दिया। श्रीमान टी॰ श्रीधरा, लेखा अधिकारी ने डाक सचिव के संदेश का वाचन किया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि ने हिन्दी में अपना भाषण प्रस्तुत करते हुए कहा कि हिन्दी हमारी पहचान है, राष्ट्र स्तर पर हिन्दी हम सबकी संपर्क भाषा होनी चाहिए। हिन्दी का उपयोग केवल हिन्दी पखवाडा के लिए सीमित नहीं है। हमारे दिन—प्रतिदिन का काम हिन्दी में होना चाहिए। श्रीमती समना आचार्य ने कार्यक्रम प्रस्तुत किया तथा श्रीमती राजश्री ने क्षेत्रीय कार्यालय में आयोजित पखवाडा की रिपोर्ट प्रस्तुत की। समारोह के अध्यक्ष ने हिन्दी के संवैधानिक पहलू पर प्रकाश डाला। अंत में सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया जिसमें श्रीमती लक्ष्मी नवरत्न, रोहिणि राव, समना आचार्य, सुमंगला कुलकर्णी तथा श्रीमती प्रतिभा बोलगावकर ने देश भक्ति गीतों से सभा को उल्लासित किये। तथा विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को मुख्य अतिथि के द्वारा पुरस्कार प्रदान किए गए।

विजया बैंक, आंचलिक कार्यालय, हैदराबाद

विजया बैंक, आंचलिक कार्यालय, हैदराबाद द्वारा अगस्त माह "हिन्दी माह" के रूप में मनाया गया। इस अवसर पर पत्र-लेखन के अतिरिक्त हिन्दी निबंध, वाक्-स्पर्धा, श्रुत लेखन, सुलेखन, शब्द पहली, शब्द संपदा, प्रश्नोत्तरी, अत्याक्षरी आदि प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया जिसमें आंचलिक कार्यालय तथा नगरद्वय की शाखाओं के कर्मचारियों ने उत्साह से भाग लिया।

14 सितम्बर को प्रेस कल्ब आडिटोरियम, हैदराबाद में हिन्दी दिवस समारोह का भव्य आयोजन किया गया। इस अवसर पर आं॰प्र॰ सरकार के भूतपूर्व सचिव श्री नरेंद्र लूथर मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे।

उप महाप्रबंधक श्री यातिराज हैग्डे ने मुख्य अतिथि सहित सभी उपस्थित का स्वागत किया और भारत सरकार की राजभाषा नीति के अनुकूल हिन्दी में अधिकारिक कार्य करने के लिए कर्मचारियों से आग्रह किया।

श्रीमती आर॰टी॰ पुष्पा, प्रबंधक (राजभाषा) ने मुख्य अतिथि का परिचय देते हुए साहित्य, सांस्कृतिक व प्रशासनिक क्षेत्र में श्री नरेन्द्र लूथर की सेवाओं व उपलब्धियों पर प्रकाश डाला।

मुख्य अतिथि श्री नरेन्द्र लूथर ने दीप प्रज्वलित कर समारोह का उद्घाटन किया। अपने विद्वत्तापूर्ण भाषण में उन्होंने जन सामान्य की भाषा को बढ़ावा देने पर बल दिया तथा सरल ढंग से अपने व्यक्तिगत अनुभवों का उल्लेख करते हुए हिन्दी के प्रचार-प्रसार पर जोर दिया।

इस अवसर पर बैंक के कर्मचारियों ने सांस्कृतिक कार्यक्रम का मंचन किया। तत्पश्चात् हिन्दी दिवस के उपलक्ष्य में आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कार वितरित किए गए।

राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम लिमिटेड, नोएडा

राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम लि॰, क्षेत्रीय कार्यालय नोएडा, में 2 से 16 सितम्बर 1996 तक पहली बार हिन्दी पखवाड़े का आयोजन किया गया। पखवाड़े के दौरान क्षेत्रीय महाप्रबन्धक श्री एस॰ के॰ धमीजा की अध्यक्षता में राजभाषा कार्यान्वयन समिति के संयोजक श्री बलराज सिंह तंवर व श्री राजीव गौड़ की देखरेख में विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। दिनांक 10.9.96 को कार्यालय में हिन्दी निबन्ध प्रतियोगिता आयोजित की गयी जिसमें कर्मचारियों व अधिकारियों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया तथा दिनांक 11.9.96 व 12.9.96 को क्रमशः हिन्दी श्रुतलेख प्रतियोगिता व हिन्दी टंकण प्रतियोगिता आयोजित की गयीं और सफल प्रतियोगियों को पुरस्कृत किया गया। पखवाड़े के दौरान अधिकांश पत्र हिन्दी में ही भेजे गये तथा कर्मचारियों द्वारा मिसिलों में टिप्पणियां भी अधिकाधिक हिन्दी में ही लिखी गयीं। वसूली विभाग का कार्य अतिप्रशंसनीय रहा। इस विभाग द्वारा वसूली हेतु अधिकांश पत्र हिन्दी में ही भेजे गये। वसूली प्रभारी श्री बी॰ एस॰.नागरवाल ने अपने अधीन सभी कर्मचारियों को निर्देश दिए कि वे अपने-अपने क्षेत्र की इकाइयों के साथ सम्पूर्ण पत्र व्यवहार केवल हिन्दी में ही करें। संयुक्त प्रबन्धक (लेखा) श्री

वी०डी० शेरकुरे ने भी अपने अधीन कर्मचारियों को हिन्दी में कार्य करने से संबंधित उचित निर्देश दिये तथा पखवाड़े के दौरान चैक इत्यादि हिन्दी में भी जारी किए गए। पखवाड़े के दौरान आयोजित प्रतियोगिताओं में कार्यालय के अहिन्दी भाषी कर्मचारियों ने भी भाग लेकर राष्ट्रभाषा के प्रति रुचि का परिचय दिया।

हिन्दी पखवाड़े के समापन समारोह एवं हिन्दी दिवस के अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में निगम के मुख्य कार्यालय, नई दिल्ली से समूह महाप्रबन्धक श्री एस०आर० राजागोपालन को आमंत्रित किया गया तथा श्री ए०के०एस० राठौड़, महाप्रबन्धक (हिन्दी) ने भी इस अवसर पर उपस्थित होकर समारोह को अलंकृत किया। समारोह का आरम्भ कर्मचारियों व अधिकारियों द्वारा अपना सारा काम-काज, पत्राचार आदि हिन्दी में करने के संकल्प के साथ हुआ। तत्पश्चात मुख्य अतिथि श्री राजागोपालन के कर-कमलों द्वारा विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कार तथा सभी प्रतियोगिताओं के प्रथम, द्वितीय व तृतीय पुरस्कार विजेताओं को प्रमाण पत्रों से भी सम्मानित किया गया। इस अवसर पर क्षेत्रीय महाप्रबन्धक श्री एस० के० धमीजा ने अपने समापन भाषण में राष्ट्रभाषा हिन्दी का महत्व बताते हुए अधिकारियों व कर्मचारियों से आह्वान किया कि वे अपने सरकारी कामकाज में शतप्रतिशत हिन्दी का ही प्रयोग करें व राष्ट्रभाषा का मान बढ़ायें। मुख्य कार्यालय से विशेष रूप से आमंत्रित हिन्दी के महाप्रबन्धक श्री ए०के०एस० राठौड़ ने भाषा की महत्ता बताते हुए कहा कि भाषा ही वह जीवन-ज्योति है जो एक व्यक्ति का दूसरे से संबंध स्थापित करती है। यह सम्पर्क भाषा के माध्यम से ही होता है। और हिन्दी में ही पूरे देश की सम्पर्क भाषा बनने की क्षमता है।

मुख्य अतिथि महोदय ने समारोह का समापन करते हुए कहा कि हिन्दी ही एक ऐसी भाषा है जो पूरे भारतवर्ष के जन समुदाय के साथ मित्र का कार्य करती है।

बैंक नोट मुद्रणालय, देवास,

"हिन्दी के प्रयोग से देश की भौगोलिक तथा सांस्कृतिक दूरी घटी है तथा पूरे देश-वासी राष्ट्रीय एकता की इस कड़ी से जुड़े हैं। यही कारण है कि पूर्व से पश्चिम तक और काश्मीर से कन्याकुमारी तक हम जहां भी जाते हैं हमें राष्ट्रभाषा हिन्दी का अलख जगता हुआ मिलता है।" यह उद्‌गार इन्दौर संभाग के आयकर आयुक्त श्री पी०ए० पाठक ने देवास नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा आयोजित संयुक्त हिन्दी सप्ताह के समापन एवं पुरस्कार वितरण समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में व्यक्त किए।

विद्वान वक्ता श्री पी०एन० पाठक ने बाणभट्ट का उदाहरण देते हुए "अनुवाद" और "भाषान्तरण" की स्थिति स्पष्ट करते हुए सरकारी कामकाज में सहज भाषा के उपयोग की आवश्यकता पर बल दिया। इसके साथ-साथ उन्होंने यह आशा व्यक्त की, कि यहां उपस्थित सभी विभागों के अधिकारी, श्री रामस्वामी जी के नेतृत्व में आपसी सहयोग और सामंजस्य से राजभाषा हिन्दी के दीप से वैचारिक चिंतन का सार्थक उजियारा फैलाने में अग्रणी रहेंगे और देवास समिति को मध्य क्षेत्र की ही नहीं वरन सम्पूर्ण भारत की नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों में आदर्श स्थान दिलाने में सफल होंगे। कार्यक्रम के आरंभ में श्री गोपालकृष्ण जोशी द्वारा सरस्वती वंदना प्रस्तुत की गई।

इस अवसर पर अपने अध्यक्षीय संबोधन में देवास नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष एवं बैंक नोट मुद्रणालय के उप महाप्रबंधक श्री टी०के० रामस्वामी ने कहा कि इस तरह संयुक्त रूप से हिन्दी सप्ताह मनाने का यह अनूठा आयोजन न केवल प्रदेश में बल्कि पूरे देश में एक अभिनव प्रयोग है। उन्होंने हिन्दी सप्ताह के दौरान आयोजित "देवास नगर की जल समस्या के स्थायी निदान" विषय पर सम्पन्न निबंध प्रतियोगिता का उल्लेख करते हुए इसे सामयिक विषय बताया तथा इसमें प्रतियोगियों द्वारा व्यक्त किए बहुमूल्य विचारों को लिपिबद्ध कर स्थानीय प्रशासन तथा जल प्रतिनिधियों तक पहुंचाने का निर्णय लिया गया। जिससे इन निबंधों में अभिव्यक्त व्यावहारिक सुझावों को कार्यान्वित करने की दिशा में कदम उठाया जा सके। साथ ही उन्होंने आपसी सहयोग और समन्वय से सभी कार्यालयों में हिन्दी के अधिकाधिक प्रयोग पर बल दिया।

एक सप्ताह तक चले इस हिन्दी सप्ताह के दौरान देवास नगर के सभी केन्द्रीय कार्यालयों, उपक्रमों, बीमा एवं बैंकों के कर्मचारियों ने निबंध वाचन, हिन्दी टाइपिंग, तात्कालिक भाषण प्रतियोगिता, वाद-विवाद परतियोगिता तथा श्रुत लेखन में उत्साह पूर्वक भाग लिया।

इस अवसर पर आयोजित सांस्कृतिक कार्यक्रम में दूरदर्शन कलाकार नस तरंग वादक आबिद खान के अनूठे नस तरंग वादन की सभी ने प्रशंसा की। कार्यक्रम का संचालन, समिति के सचिव डा० आलोक कुमा रस्तोगी ने किया तथा पंजाब नेशनल बैंक के श्री के० के० दुबे ने आभार माना। स्टेट बैंक आफ इन्दौर के नवीन परिसर में आयजित इस समारोह में प्रतियोगियों, कर्मचारियों के अलावा गणमान्य लोग भी भारी संख्या में उपस्थित थे।

सोनपुर रेल मंडल

राजभाषा हिन्दी के व्यापक प्रचार-प्रसार के लिए पूर्वोत्तर रेलवे के सोनपुर मंडल में गत 25 एवम 26 जून, 1996 को दो दिवसीय राजभाषा सप्ताह समारोह का आयोजन किया गया। कार्यक्रमों का शुभारंभ दिनांक 25.6.96 को मंडल कार्यालय के सभाकक्ष में मण्डल रेल प्रबंधक श्री विजय कुमार सहाय की अध्यक्षता में आयोजित 'रेलों के तकनीकी कामकाज में हिन्दी का प्रयोग' विषय पर हिन्दी तकनीकी गोष्ठी से किया गया जिसमें मुख्य वक्ता के रूप में पूर्वोत्तर रेलवे महाविद्यालय, सोनपुर के भौतिकी विभागाध्यक्ष प्रो० आनंद महतो उपस्थित थे। श्री सहाय ने अपने अध्यक्षीय संबोधन में कहा कि रेलों के कामकाजों में हिन्दी का प्रयोग अब तो बहुतायत में होने लगा है। उन्होंने कहा कि इस मण्डल में हिन्दी प्रयोग की स्थिति काफी अच्छी है और यहां लगभग सभी कामकाज हिन्दी में किये जा रहे हैं। फिर भी तकनीकी कार्यों में हिन्दी का प्रयोग सुनिश्चित करना बहुत ही आवश्यक है। इसके लिए ऐसी गोष्ठियां बराबर आयोजित की जानी चाहिए ताकि इस दिशा में लोगों को सही जानकारी मिल सके और उनकी झिझक दूर हो। उन्होंने कहा कि हम जो कहना चाहते हैं उसे हिन्दी में आसानी से कह सकते हैं। हम अंग्रेजी मानसिकता पर जहां जा रहे हैं वह खतरनाक है। कोई भी अधिकारी बात तो हिन्दी में ही करता है। यहां अंग्रेजी की स्थिति बड़ी दयनीय है। हिन्दी प्रयोग के प्रति अपना दृष्टिकोण व्यक्त करते हुए श्री सहाय ने कहा कि भाषा प्रयोग करने से ही व्यवहार में आती है। व्यवहार में आ जाने पर भाषा चल पड़ती है। व्यावसायिक क्षेत्रों में हिन्दी भाषा का प्रयोग किया जा रहा है। हिन्दी आती है काम बढ़ाने की जरूरत है। उन्होंने अपने संबोधन का समापन यह कहा

हुए किया कि अंग्रेजी हिन्दी की आंधी में समाप्त हो जायेगी। अध्यक्ष ने मंडल राजभाषा सप्ताह समारोह के अवसर पर पुरस्कार विजेता विभाग, अधिकारी एवं कर्मचारियों को बधाइयां देते हुए प्रतिस्पर्धात्मक भाव से हिन्दी प्रयोग करने पर बल दिया। मुख्य वक्ता प्रो० आनंद महतो ने विज्ञान एवं टक्नोलाजी के क्षेत्रों में हिन्दी प्रयोग के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि विदेशी भाषा के प्रयोग के बजाय अपनी भाषा में अच्छी प्रगति कर सकते हैं क्योंकि हिन्दी हमारी मौलिक सोच की भाषा है। कुमार सिन्हा ने आमंत्रित वक्ताओं एवं श्रोताओं का हार्दिक स्वागत किया और कहा कि इस प्रकार की गोष्ठी के आयोजन से निश्चय ही हिन्दी के प्रचार-प्रसार पर अनुकूल एवं सार्थक प्रभाव पड़ेगा। उन्होंने आगे कहा कि सोनपुर मंडल में राजभाषा हिन्दी का उत्तरोत्तर प्रयोग सुनिश्चित किया जा रहा है। विषय प्रर्वतन करते हुए राजभाषा अधिकारी, श्री द्वारिका राय ने कहा कि इस मण्डल में तकनीकी कार्यों में राजभाषा हिन्दी का बड़ा ही अनुकूल वातावरण है और यहां तकनीकी कार्यों में भी हिन्दी का प्रयोग तीव्र गति से बढ़ रहा है और संपूर्ण तकनीकी क्षेत्रों में हिन्दी के प्रयोग का अनुकूल वातावरण बन गया है।

उक्त अवसर पर पूर्वोत्तर रेलवे मुख्यालय गोरखपुर से पधारे वरिष्ठ राजभाषा अधिकारी श्री चन्द्र गोपाल शर्मा ने अपने सार गर्भित भाषण में राजभाषा नियमों एवं नीति की चर्चा करते हुए कहा कि ऐसी गोष्ठी की परम उपादेयता है और इसके लिए रेलवे बोर्ड का भी आदेश है। श्री शर्मा ने आगे कहा कि आज के मशीनी युग में कंप्यूटर का महत्व बढ़ गया है। राजभाषा प्रयोग की दिशा में इस पर लगातार सार्थक अनुप्रयोग हो रहे हैं। अतः कार्य की गुणवत्ता बनाये रखने के लिए गोष्ठी का सार्थक आयोजन अनिवार्य है। इनके अतिरिक्त वरिष्ठ चिकित्सा अधीक्षक, डा० सीताराम दास ने कहा कि चिकित्सा विज्ञान से संबंधित हिन्दी में यद्धपि कोई समुचित पुस्तक नहीं लिखी गई है तथापि इसमें आमफहम हिन्दी का प्रयोग होना चाहिए। साथ ही हिन्दी रूपान्तर में एकरुपता नहीं है जिसकी आवश्यकता है। मंडल विद्युत इंजीनियर श्री देवेन्द्र दत्त मिश्र ने कहा कि अंग्रेजी के मानक शब्दों की तरह हिन्दी के भी मानक शब्द बनाये जायें जो पूरे भारत में प्रचलित हों और हर कार्यालय तक उसका प्रचार हो। उन्होंने कहा कि हिन्दी उतनी निरीह भाषा नहीं है जिसके बदले अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग किया जाए। मंडल वाणिज्य प्रबंधक श्रीमती रजनी हसीजा ने कहा कि हिन्दी में काम करने में सुविधा है। गोष्ठी में मंडल यांत्रिक इंजीनियर (पावर) श्री विजय कुमार राजभर, सिगनल निरीक्षक श्री शशि प्रकाश त्रिपाठी आदि ने भी अपने विचार व्यक्त किये।

मंडल राजभाषा सप्ताह समारोह के दूसरे दिन के कार्यक्रमों के अंतर्गत दिनांक 26.6.96 को 15.30 बजे मंडल रेल प्रबंधक श्री विजय कुमार सहाय की अध्यक्षता में मंडल कार्यालय के सभाकक्ष में मंडल राजभाषा कार्यान्वयन समिति, सोनपुर की बैठक का आयोजन किया गया। अपने अध्यक्षीय संबोधन में श्री सहाय ने कहा कि जहां हमने पिछली यात्रा समाप्त की थी वहां से आगे कैसे बढ़ें इस पर विचार किया जाना चाहिए। कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जहां पर अभी भी अंग्रेजी में काम हो रहा है, इसका पता लगायें और उनमें हिन्दी का प्रयोग करने का प्रयास करें। उन्होंने कहा कि हिन्दी उचित संचार का माध्यम है। भाषा सम्प्रेषण का माध्यम ही तो है। एक विभाग दूसरे विभाग से जो कहना चाहे उसे दूसरा विभाग भी समझ जाये, यह क्षमता हिन्दी में है। उन्होंने आगे कहा कि हिन्दी प्रयोग की दिशा में हम काफी प्रगति कर चुके हैं और अब इसमें गुणात्मक सुधार का प्रयास करना है। यों हिन्दी का जल्द पूरी तरह आ जाना अत्यंत आवश्यक है। उन्होंने कंप्यूटरों की द्विभाषिक कार्यशीलता बनाये रखने और भविष्य में द्विभाषी कंप्यूटर ही खरीदने पर बल दिया। साथ ही साथ हिन्दी टाइपराइटरों की गुणवत्ता भी देखी जाये। इनके प्रिन्ट की गड़बढ़ियों में सुधार के लिए मुख्यालय द्वारा पहल किया जाना चाहिए। बैठक के प्रारंभ में उपमुख्य राजभाषा अधिकारी एवं अपर मंडल रेल प्रबंधक श्री सुधीर कुमार सिन्हा ने स्वागत भाषण करते हुए कहा कि यह मंडल हिन्दी प्रयोग के क्षेत्र में काफी अग्रसर है। उन्होंने आशा व्यक्त की कि इस मण्डल में हिन्दी प्रयोग के प्रति अधिकारियों एवं कर्मचारियों में जैसी लगन है उसके आधार पर हम हिन्दी प्रयोग के क्षेत्र में कीर्तिमान अवश्य स्थापित करेंगे। श्री सिन्हा ने मंडल में विगत वर्ष हिन्दी प्रयोग के क्षेत्र में विशिष्ट उपलब्धियों, हिन्दी प्रयोग संबंधी विभिन्न प्रतियोगिताओं और कार्यशालाओं का आयोजन तथा उनमें प्रदान किये गये पुरस्कारों का उल्लेख किया। उक्त अवसर पर पूर्वोत्तर रेलवे मुख्यालय, गोरखपुर के वरिष्ठ राजभाषा अधिकारी, श्री चन्द्र गोपाल शर्मा ने हिन्दी प्रयोग की अपेक्षाओं पर बल दिया। इनके अतिरिक्त वरिष्ठ मंडल इंजीनियर-प्रथम, श्री आलोक कुमार, वरिष्ठ चिकित्सा अधीक्षक, डा० सीताराम दास, मंडल विद्युत इंजीनियर श्री देवेन्द्र दत्त मिश्र, मंडल लेखाधिकारी श्री संजीव कुमार आदि ने भी अपने विचार व्यक्त किये। राजभाषा अधिकारी श्री द्वारका राय ने मंडल में हिन्दी प्रयोग की प्रगति रपट प्रस्तुत की और अंत में धन्यवाद ज्ञापन किया।

भारतीय प्राणी सर्वेक्षण विभाग, जोधपुर

सरकारी कामकाज में राजभाषा के रूप में हिन्दी के प्रति अधिकारियों व कर्मचारियों में जागरूकता तथा उत्तरोत्तर प्रयोग में गति लाने के उद्देश्य से इस कार्यालय में दिनांक 16.9.96 से 20.9.96 तक "हिन्दी सप्ताह" मनाया गया। "हिन्दी सप्ताह" का उद्घाटन दिनांक 16.9.96 को डा० क्यू० एच० बाकरी, वैज्ञानिक "एसएफ", प्रभारी अधिकारी ने किया। उन्होंने अधिकारियों व कर्मचारियों से आह्वान किया कि सरकारी कामकाज में सरल व आम बोल-चाल की हिन्दी भाषा का ही प्रयोग करें।

"हिन्दी सप्ताह" के दौरान कार्यालय में हिन्दी टिप्पणी एवं प्रारूप लेखन, हिन्दी निबन्ध, हिन्दी टंकण और प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया।

"हिन्दी सप्ताह" का समापन समारोह दिनांक 20.9.96 को आयोजित किया गया। समापन समारोह में मुख्य अतिथि प्रोफेसर ईश्वर प्रकाश, वरिष्ठ वैज्ञानिक, भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी थे, जिन्होंने "हिन्दी सप्ताह" के दौरान आयोजित प्रतियोगिताओं में प्रथम व द्वितीय स्थान प्राप्त करने वाले कर्मचारियों को पुरस्कार व भाग लेने वाले कर्मचारियों को प्रोत्साहन पुरस्कार प्रदान किए। "हिन्दी सप्ताह" के समापन समारोह की अध्यक्षता डा० क्यू० एच० बाकरी, वैज्ञानिक "एसएफ", प्रभारी अधिकारी ने की। समापन समारोह का संचालन डा० नरेन्द्र सिंह राठौड़, वैज्ञानिक "एसडी" ने किया और श्री महेन्द्र सिंह चौधरी, कनिष्ठ हिन्दी अनुवादक ने धन्यवाद ज्ञापन प्रस्तुत किया।

केंद्रीय न्यायालिक विज्ञान प्रयोगशाला, चण्डीगढ़

केन्द्रीय न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, चंडीगढ़ में 1 से 15 सितम्बर, 1996 तक हिन्दी पखवाड़े का

आयोजन किया गया। हिन्दी पखवाड़े के दौरान विभिन्न हिन्दी प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। इस प्रतियोगिताओं में काफी संख्या में अधिकारी एवं कर्मचारियों ने भाग लिया।

दिनांक 16 सितम्बर, 1996 को कार्यालय में हिन्दी दिवस का आयोजन किया गया। हिन्दी दिवस समारोह का उद्घाटन करते हुये निदेशक डा० रणजीत सिंह वर्मा ने अधिकारियों एवं कर्मचारियों से अनुरोध किया कि वे अधिक से अधिक कार्य हिन्दी में करें।

उपर्युक्त प्रतियोगिताओं के विजेताओं को प्रमाण पत्र तथा नकद पुरस्कार दिए गए तथा हिन्दी प्रतियोगिताओं में भाग लेने वाले सभी प्रतियोगियों को प्रमाण पत्र देकर उत्साहित किया गया।

केन्द्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान एवं केन्द्रीय मात्स्यिकी प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान, वेरावल (गुजरात)

केन्द्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान एवं के० मा० प्रौ० अ० सं० वेरावल (गुजरात) द्वारा दिनांक 27.9.96 को हिन्दी दिवस समारोह का आयोजन श्री राजेन्द्र बडौनिया, वरिष्ठ वैज्ञानिक (सलैक्शन ग्रेड) की अध्यक्षता में हुआ। इस अवसर पर डा० के० के० जोशी, वैज्ञानिक एवं प्रभारी अधिकारी के० स० मा० अ० सं० सहित समस्त सदस्य उपस्थित थे।

श्री राजेन्द्र बडौनिया, वरिष्ठ वैज्ञानिक (सलैक्शन ग्रेड) ने अपने अध्यक्षीय भाषण में हिन्दी भाषा की महत्ता और उपयोगिता को रेखांकित किया और इसके सरल रूप के प्रयोग पर बल दिया। उन्होंने हिन्दी भाषा के अनुसंधान तथा सरकारी कामकाज में यथावश्यक सहयोग देने की बात कही तथा प्रतियोगिता में हिस्सा लेने वाले कर्मियों का उत्साह बढ़ाते हुए इस कार्यक्रम की सफलता की कामना की।

इस दौरान विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। दोनों कार्यालयों के सदस्यों ने बड़े उत्साह से इनमें हिस्सा लिया। प्रतियोगिताओं का परिणाम प्रस्तुत करने में डा० रविशंकर, वैज्ञानिक एवं श्री पी० पी० मनोजकुमार, वैज्ञानिक, ने निर्णायक के रूप में सरहनीय योजदान दिया।

डा० के० के० जोशी, वैज्ञानिक एवं प्रभारी अधिकारी, के० स० मा० अ० सं०, द्वारा प्रतियोगिताओं में प्रथम व द्वितीय स्थान पाने वाले कर्मियों को पुरस्कार प्रदान किए गए तथा प्रतियोगिता में हिस्सा लेने वाले प्रत्येक सदस्य का मनोबल बनाए रखने के लिए उन्हें भी पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

अंत में डा० बी० मनोजकुमार, वैज्ञानिक ने समारोह को सफल बनाने में समस्त सदस्यों की सराहना की और धन्यवाद प्रस्ताव प्रस्तुत किया।

केंन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन, चंडीगढ़

केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन, चंडीगढ़ में दिनांक 13 सितम्बर, 1996 को हिन्दी दिवस समारोह का आयोजन किया गया। समारोह का उद्घाटन संगठन निदेशक डा० क० रा० शर्मा ने किया और हिन्दी विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़ के भूतपूर्व प्रमुख डा० लक्ष्मीनारायण श[...] इस अवसर पर मुख्य अतिथि थे। संगठन निदेशक ने अपने उद्घा[...] भाषण में कहा कि हिन्दी में वैज्ञानिक तथा तकनीकी प्रकृति के कार्यों [...] करने की पूरी सामर्थ्य है। इसके प्रयोग में कठिनाई केवल अभ्यास [...] कमी के कारण आती है। डा० लक्ष्मीनारायण शर्मा ने संगठन की हि[...] अधिकारी सुश्री नीरू कैला द्वारा तैयार की गई। प्रशासनिक शब्दाव[...] टिप्पणियों एवं ऐसी ही अन्य सामग्री से युक्त "कार्यालय सहायिका" [...] विमोचन किया और आशा व्यक्त की कि यह पुस्तक स्टाफ को दैनि[...] कामकाज में हिन्दी के प्रयोग में सहायक होगी।

डा० लक्ष्मीनारायण शर्मा ने संगठन स्टाफ को सम्बोधित करते हुए क[...] कि आज हिन्दी दिवस के अवसर पर हमें यह सुनिश्चित करना है कि हि[...] दिवस महज एक कर्मकांड बनकर न रह जाए। उन्होंने इस बात [...] प्रसन्नता व्यक्त की कि गत वर्षों में विभिन्न आयोजनों के अवसर पर उन[...] संगठन को हिन्दी के प्रगामी प्रयोग की दिशा में निरन्तर आगे बढ़ते [...] देखा है। उन्होंने कहा कि जब एक व्यक्ति हिन्दी में बात करता है तो [...] एक व्यक्ति ही बात नहीं करता, अपितु उसके माध्यम से पूरा भारत [...] करता है, तब हिन्दी में बात करने वाला व्यक्ति पूरे राष्ट्र का प्रतीक [...] जाता है।

संगठन में हिन्दी दिवस के उपलक्ष्य में अनेक आयोजन किए [...] जिनमें हिन्दी दिवस से पूर्व हिन्दी टिप्पण, हिन्दी भाषण, हिन्दी प्रश्नोत्तरी [...] हिन्दी टंकण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इन प्रतियोगिताओं [...] संगठन स्टाफ ने अत्यन्त उत्साह से भाग लिया। हिन्दी दिवस समारोह [...] उपरोक्त प्रतियोगिताओं में प्रथम, द्वितीय व तृतीय स्थान प्राप्त करने [...] प्रतियोगियों को पुरस्कृत किया गया है:—

इसी आयोजन की श्रृंखला में दिनांक 11 सितम्बर, 1996 को सं[...] में "पर्यावरण प्रदूषण—विभिन्न आयाम एवं समाधान" विषय पर हिन्दी [...] संगोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें नीरी, नागपुर के वैज्ञानिक [...] जयशंकर पांडेय ने अतिथि व्याख्यान दिया। इसके अतिरिक्त संगठन [...] अन्य वैज्ञानिकों द्वारा भी इस विषय पर 7 परचे पढ़े गए। संगठन [...] प्रतिभागियों तथा श्रोताओं की प्रतिक्रिया अत्यन्त उत्साहजनक [...] प्रशंसात्मक रही।

आकाशवाणी: पुणे

केन्द्र में 2 सितंबर, 96 से 13 सितम्बर, 96 तक हिन्दी पखवाड़ा [...] 13 सितम्बर, 96 को हिन्दी दिवस मनाया गया।

इस केन्द्र में दिनांक 9.9.96 को टिप्पण प्रारूप लेखन प्रतियो[...] कवितावाचन प्रतियोगिता आयोजित की गई तथा दिनांक 11.9.96 [...] परिसंवाद प्रतियोगिता आयोजित की गई जिसमें कई अधिकारियों/[...] चारियों ने भाग लिया।

13 सितम्बर, 96 को हिन्दी दिवस समारोह आयोजित किया [...] अपने स्वागत भाषण में डा० अशोकुमार शर्मा, सहायक केन्द्र निदेश[...] हिन्दी दिवस मानने, तथा हिन्दी के महत्व पर प्रकाश डाला।

हिन्दी दिवस समारोह में आमंत्रित, एस० पी० कालेज, पुणे [...] प्रधानाचार्य, श्री ह० श्री साने, ने हिन्दी को अपनी भाषा बनाने तथा [...] भाषाओं के शब्दों को अपनाकर हिन्दी को सरल और संपन्न बना[...] अपने विचार व्यक्त किये।

समारोह के अध्यक्ष श्री सुशीलचन्द्र अधीक्षण अभियंताल ने हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा का दर्जा दिया गया है उसके लिए गौरव का अनुभव करते हुए बताया कि हिन्दी भाषा ही ऐसी भाषा है जो भारत में सभी जगह बोली और समझी जाती है, सरकारी क्षेत्र के अलावा व्यवसाय, व्यापार आदि क्षेत्र में भी हिन्दी के महत्व को बताया, उन्होंने यह भी बताया कि हिन्दी ने कई देशों में स्थान पाया है। उन्होंने आकाशवाणी, पुणे के केन्द्र में पिछले वर्षों में हिन्दी के कार्य में हुई प्रगति की सराहना की।

समारोह के मुख्य अतिथि, एस० पी० कालेज के प्रधानाचार्य श्री ह० श्री साने के हाथों पखवाड़े के दौरान आयोजित प्रतियोगिताओं में विजयी प्रतियोगियों को पुरस्कार प्रदान किये गए। मुख्य अतिथि ने प्रतियोगिताओं में विजयी प्रतियोगियों को बधाई दी।

यूको बैंक, मुम्बई

हिंदी दिवस समारोह के कार्यक्रम का आरंभ श्री एस० सुब्रमण्यन् द्वारा वंदना गीत के स्वरनाद से हुआ।

राजभाषा अधिकारी ने संक्षिप्त रूप में हिन्दी दिवस के महत्व को प्रतिपादित करते हुए पश्चिम अंचल में हिंदी के क्षेत्र में की गई उपलब्धि और 14 सितंबर, 1996 तक आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं के आयोजन का उल्लेख करते हुए कहा कि हमारा अंचल पिछले 10 वर्षों से "ख" क्षेत्र में हिंदी के क्षेत्र में सर्वश्रेष्ठ एंव प्रशंसनीय कार्यों के लिए बैंक के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक द्वारा श्रेष्ठता प्रमाण-पत्र (शील्ड के रूप में) प्राप्त करता आ रहा है और हमें विश्वास है कि वर्ष 1996-97 के लिए भी पुरस्कार हम ही प्राप्त करेंगे। हमारे राजभाषा कक्ष के सभी कर्मचारी एवं अंचल के सभी सहयोगी इस संयुक्त प्रयास के लिए प्रशंसा के पात्र हैं। उन्होंने यह भी आशा व्यक्त की अन्य बातों के साथ-साथ हमारा अंचल हिंदी के प्रगामी प्रयोग के क्षेत्र में आशातीत प्रगति करेगा।

इस अवसर पर सहायक महाप्रबंधक श्री के० टी० पंजनानी ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि हमारा अंचल हिंदी के प्रगामी प्रयोग की दिशा में प्रगति की ओर है। हमें अधिक से अधिक कामकाज हिंदी में ही करना चाहिए। यद्यपि शुरू-शुरू में हिंदी में कामकाज करने में कठिनाई तो अवश्य आती है, लेकिन हिंदी का प्रयोग लगातार करते रहने से यह स्वतः ही दूर हो जाती है। हिंदी दिवस मनाने की सार्थकता इसी में है कि हम अपने दैनिक कामकाज में हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा दें। हमें हिंदी के विकास के साथ बैंक के समग्र विकास की ओर निष्ठापूर्वक ध्यान देना होगा।

मुख्य प्रबंधक कु० सुनंदा लहिरी ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि आज केन्द्र सरकार के सभी कार्यालय हिंदी दिवस मना रहे हैं। आज यहां कर्मचारियों की भारी उपस्थिति इस बात का प्रतीक है कि इस अंचल में हमारे कर्मचारी राजभाषा हिंदी के प्रति पर्याप्त रुचि रखते हैं और यहां हिन्दी का वातावरण बना हुआ। मेरे विचार से यह जागृति पूरे साल बनी रहनी चाहिए। मैं समारोह के सफलता की कामना करती हूं।

मुंबई मंडल के मंडल प्रबंधक श्री पी० एस० कोचर ने कहा कि हमें आज यह संकल्प लेना चाहिए कि हम हिंदी के प्रयोग के क्षेत्र में तो प्रगति करेंगे ही और साथ ही साथ बैंक के चहुंमुखी विकास के लिए भी अनवरत प्रयास करेंगे। मुझे समारोह में शामिल होकर बेहद प्रसन्नता हुई।

पुरस्कार वितरण कार्यक्रम के तत्पश्चात् अंचल प्रबंधक श्री गुप्ताजी ने अपने संक्षिप्त अपितु सारगर्भित व्याख्यान के दौरान हिंदी के क्षेत्र में की जा रही प्रगति की प्रशंसा की और संतोष व्यक्त करते हुए कहा कि इस अवसर पर इतने सारे कर्मचारियों द्वारा पुरस्कार प्राप्त किया जाना हिंदी के प्रति उनकी जागरूकता और निष्ठा का प्रतीक हैं। मैं इस अवसर पर सभी पुरस्कार विजेताओं और हिंदी में कामकाज करने वाले सभी कर्मचारियों को बधाई देता हूं और यह आशा व्यक्त करता हूं कि हिंदी के क्षेत्र में यह परम्परा निरंतर बनी रहेगी। उन्होंने हिंदी के विकास की दिशा में किए जा रहे प्रयासों की सराहना करते हुए हिंदी दिवस समारोह की सफलता की कामना की। उन्होंने हिंदी को सम्पर्क भाषा के रूप में पूर्णतः सक्षम बताया और कहा कि सरल हिंदी के विकास के लिए यह आवश्यक है कि हिंदी में अन्य प्रांतीय भाषाओं के शब्द ग्रहण किए जाएं। इस प्रक्रिया से हिंदी जन-साधारण की भाषा बनती चली जाएगी। यद्यपि हमारा देश विभिन्न भाषा भाषियों का देश है; इसके बावजूद भी हिंदी को ही राजभाषा बनाया गया। यह हिंदी भाषा की क्षमता का प्रतीक है। विश्व में अनेक विश्वविद्यालयों में हिंदी का पठन-पाठन हो रहा है, अब हिंदी सीमित नहीं रही है। इन्होंने इस बात का आह्वान किया कि "ख" क्षेत्र में हमें वर्ष 1996-97 के दौरान भी प्रधान कार्यालय का राजभाषा शील्ड प्राप्त करना है। इसके लिए हमें और अधिक प्रयास करने होंगे। पिछले कई वर्षों से यह शील्ड हमें प्राप्त होती आ रही है इसके लिए आप सभी बधाई के पात्र हैं।

श्री पी०जे० सेठ, मंडल प्रबंधक ने अपने विचार व्यक्त करते हुए अंचल में हो रही हिन्दी के प्रगति में उत्तरोत्तर प्रगति की प्रशंसा की और अपील की कि हमें अपने सरकारी कामकाज में हिन्दी का अधिक से अधिक प्रयोग करना चाहिए। हिन्दी दिवस समारोह हमारे लिए प्रेरणा का स्रोत है। हमें हमेशा याद रखना चाहिए।

यूको बैंक, नई दिल्ली

पिछले वर्षों की भांति इस वर्ष भी नई दिल्ली अंचल की संसद मार्ग शाखा और अंचल कार्यालय में हिन्दी दिवस बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। हिन्दी दिवस 1996 के उपलक्ष्य में हमारे यहां निम्नलिखित कार्यक्रमों का आयोजन किया गयाः—

हिन्दी वार्तालाप प्रतियोगिता का आयोजन दिनांक 2.9.96 को किया गया। यह प्रतियोगिता एक साक्षात्कार के रूप में थी जिसमें प्रत्येक प्रतियोगी से 5 मिनट तक हिंदी में सवाल-जवाब किए गए और प्रतियोगी की भाषा, अभिव्यक्ति, शैली उच्चारण आदि का मूल्यांकन करते हुए दो निर्णायकों द्वारा अलग-अलग अंक प्रदान किए गए। प्रतियोगिता में कुल 10 अधिकारियों/कर्मचारियों ने भाग लिया। प्रतियोगिता का उद्घाटन अंचल प्रबंधक, श्री पी०सी० वाही ने किया। इस अवसर पर संसद मार्ग शाखा में मुख्य प्रबंधक, श्री एम०बी० जैन और बैंक के निदेशक मंडल के सदस्य, श्री वाई०के० शर्मा भी उपस्थित थे।

अंचल कार्यालय में इस प्रतियोगिता का आयोजन बड़े व्यापक स्तर पर किया गया और इसमें भाग लेने के लिए कर्मचारियों में आपस में होड़ लगी रही। एक लिखित प्रश्न-पत्र के जरिए प्रतियोगिता प्रतियोगियों से बैंकिंग और गैर-बैंकिंग विषयों पर प्रश्न पूछे गए। प्रतियोगिता तीन चरणों में सम्पन्न हुई। प्रतियोगिता का उद्घाटन अंचल प्रबंधक, श्री पी०सी० वाही ने किया। श्री वाही अंतिम चरण की समाप्ति तक उपस्थित रहे और उन्होंने

ऐसी ज्ञानवर्धक एवं उत्साहजनक प्रतियोगिता आयोजित करने के लिए राजभाषा कक्ष के प्रयासों की भरपूर प्रशंसा की। प्रतियोगिता में पूछे गए बैंकिंग विषयों के प्रश्न श्री रामकिशन गुप्त, सहायक मुख्य अधिकारी (राजभाषा) और गैर-बैंकिंग विषयों के प्रश्न राजभाषा अधिकारी, श्री भविष्य कुमार सिन्हा ने तैयार किए थे।

यह प्रतियोगिता बैंकिंग एवं सामान्य शब्दावली पर आधारित थी। प्रतिभागियों को लिखित प्रश्न-पत्र में 20 अंग्रेजी शब्दों के हिन्दी पर्याय और 20 हिन्दी शब्दों के अंग्रेजी पर्याय और 20 अनेक शब्दों के लिए एक शब्द भी लिखने थे। इस प्रतियोगिता में अंचल कार्यालय और संसद मार्ग शाखा से कुल 25 प्रतिभागियों ने भाग लिया। इस अवसर पर अंचल कार्यालय के सहायक मुख्य अधिकारी, श्री रामकिशन गुप्त और राजभाषा अधिकारी, श्री भविष्य कुमार सिन्हा भी मौजूद थे जिनकी देख-रेख में प्रतियोगिता का सफल आयोजन संभव हुआ। प्रश्न पत्र श्री भविष्य कुमार सिन्हा ने बनाया था और उनका मूल्यांकन सहायक मुख्य अधिकारी, श्री रामकिशन गुप्त ने किया।

हिन्दी दिवस के उपलक्ष्य में आयोजित समारोह का उद्घाटन अंचल कार्यालय के मुख्य अधिकारी, श्री जे०एम० के० मल्होत्रा ने किया। मंच पर उनके साथ श्री आर० के० खेड़ा, मुख्य अधिकारी निरीक्षण एवं सतर्कता विभाग भी विराजमान थे।

तत्पश्चात अंचल कार्यालय और कुछेक शाखाओं की ओर से 12 अधिकारियों/कर्मचारियों ने उक्त कार्यक्रम ने अपनी-अपनी रचनाएं प्रस्तुत करके श्रोताओं का भरपूर मनोरंजन किया। इस काव्य-पाठ में डा० रेखा व्यास, कार्यक्रम निर्मात्री, दूरदर्शन को राजभाषा अधिकारी श्री सिन्हा ने विशिष्ट अतिथि के रूप में आमंत्रित किया था। रेखा व्यास के सस्वर काव्य-पाठ ने सभी का मन मोह लिया। कार्यक्रम का कुशल संचालन श्री भविष्य कुमार सिन्हा ने किया।

उपर्युक्त सभी प्रतियोगियों में सफल प्रतियोगियों को पुरस्कार प्रदान किए गए।

राष्ट्रीय पुनर्वास प्रशिक्षण एवं अनुसंधान संस्थान, उड़ीसा

संस्थान में दिं 14.9.96 से 20.9.96 तक हिन्दी सप्ताह मनाया गया। हिन्दी दिवस के उद्घाटन भाषण मे अध्यक्ष महोदय ने कहा कि ज्यादातर कर्मचारी हिन्दी जानते हुये भी काम करने मे झिझक महसूस करते हैं। लेकिन हिन्दी में थोड़ा-थोड़ा काम करते रहने से हिन्दी में होने वाली झिझक एवं कठिनाई अपने आप दूर हो जायेगी।

इस समारोह में विविध प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। सभी प्रतियोगिताओं में ज्यादा से ज्यादा कर्मचारियों ने सोत्साह भाग लिया। सफल विजेताओं को पुरस्कार वितरित किये गये।

वर्षभर में सरकारी कामकाज मूल रूप से हिन्दी में करके, जिन कर्मचारियों ने 10 हजार शब्द हिन्दी में लिखने का लक्ष्य पूर्ण किया उन उत्कृष्ट कार्य करने वाले सात कर्मचारियों को भी नगद राशि देकर पुरस्कृत किया गया।

हिन्दी प्रचार प्रसार हेतु श्री टी० विरेन्द्र द्वारा निर्मित एक "सेतु" नामक टी०वी० फिल्म भी दिखाई गई।

हिन्दुस्तान फोटो फ़िल्म्स, उटकमण्ड

कम्पनी के प्रधान कार्यालय में 14 सिंतबर 1996 से हिन्दी सप्ताह मनाया गया। इस सिलसिले में हिन्दी निबंध, हिन्दी टंकण, हिन्दी प्रश्न मंच, हिन्दी गीत प्रतियोगिताएं आयोजित की गयीं। 21 सितम्बर 1996 को कंपनी के प्रबंध निदेशक (प्रभारी) व राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष श्री पी० वासुदेवन की अध्यक्षता में गीत प्रतियोगिता व पुरस्कार वितरण समारोह संपन्न हुए। श्री के०एन० नटेसन, वरिष्ठ कार्मिक प्रबंधक व उपाध्यक्ष, राजभाषा कार्यान्वयन समिति ने अपने भाषण के बाद राजभाषा विभाग से प्राप्त माननीय गृह मंत्री श्री इन्द्रजीत गुप्त का संदेश को पढ़ा। श्री पी० वासुदेवन, अध्यक्ष ने हिन्दी की आवश्यकता पर ज़ोर दिया और सभी कर्मचारियों से हिन्दी पढ़ने तथा उसका प्रयोग करने का अनुरोध किया। प्रतियोगिताओं के विजेताओं को उन्होंने पुरस्कार प्रदान किये।

लघु उद्योग सेवा संस्थान, जम्मू

संस्थान में 13 सितम्बर से 25 सितम्बर 1996 तक अत्यन्त ही उत्साह एवं उल्लासपूर्ण वातावरण में हिन्दी पखवाड़े के कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। पखवाड़े के कार्यक्रमों के दौरान हिन्दी दिवस का मुख्य समारोह, हिन्दी वाक् प्रतियोगिता, निबन्ध प्रतियोगिता आयोजन, बैनर, सलोगन, हिन्दी विषयक उद्धरणों, लेखों, गद्य खण्डों, पद्य खण्डों आदि का प्रदर्शन किया गया। इससे हिन्दीमय वातावरण का सृजन हुआ। वरिष्ठ अधिकारियों एवं कर्मचारियों द्वारा हिन्दी में कार्य करने का संकल्प ग्रहण किया गया।

हिन्दी दिवस का मुख्य समारोह 17 सितम्बर 1996 को सम्पन्न किया गया। समारोह के प्रारंभ में श्री के०सी० श्रीवास्तव उपनिदेशक (धात्विकी) एवं प्रभारी राजभाषा ने कहा कि राष्ट्रीय एकता एवं सांस्कृतिक समन्वयता को सम्पर्क बनाने के लिए एक ऐसी वाणी की आवश्यकता थी जो राष्ट्र के अधिकतम भू-भाग में बोली जाती हो एवं जनसामान्य की भाषा हो। यही नहीं, उस भाषा में समकालीन ग्राह्शीलता का गुण हो तथा सापेक्षित लचीलेपन की प्रवृत्ति हो। यह गुण शक्ति हिन्दी में परिलक्षित की गयी और इन्हीं प्रवृत्तियों के आधार पर इस भारत संघ के समस्त राष्ट्रीय राजनेताओं ने राजभाषा का सम्मान दिया। सुभाष चन्द्र बोस ने अपने संगठन का नाम "हिन्द फौज" हिन्दी को अभिप्रेरित करने के लिए किया। डा० अम्बेडकर ने संविधान सभा में भाषा प्रकरण पर अपने विचार देते हुए मत प्रकट किया था कि लोकतन्त्र की सफलता तथा राष्ट्रीय युग चेतना के प्रसार के लिए एक ही भाषा और वह हिन्दी ही हो सकती है, अनिवार्य है राजभाषा के रूप में अंगीकार करने की यही सब विश्लेषणात्मक परिस्थितियां थी। राष्ट्रपिता श्री एम० के० गांधी ने बी० बी० सी० के एक अपने इन्टरव्यू में यह घोषणा कर दी कि दुनिया से कह दो गांधी अंग्रेजी नहीं जानता। अर्थात् बापू हिन्दी को राजभाषा के रूप में राष्ट्र उत्थान के लिए अनिवार्य तत्व मानते थे। वह अंग्रेजी या अंग्रेज जाति अथवा अंग्रेजी संस्कृति के विरोधी नहीं थे परन्तु भारतीय राष्ट्रीय अस्मिता की पृष्ठभूमि पर वह अंग्रेजी को नहीं हिन्दी को दृढ़ संकल्प के साथ लाना चाहते थे। चाहे गांधी हों या अम्बेडकर अथवा क्रान्ति नायक नेता जी सुभाष हों सभी राष्ट्र की एकात्मकता के लिए हिन्दी को ही कड़ी के रूप में स्वीकार करते हैं। श्रीवास्तव ने अपने भाषण का सार निरूपित करते हुए आगे कहा कि हिन्दी जम्मू कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी और असम, मेघालय से लेकर गुजरात तक सम्पर्क सूत्र के रूप में प्रयोग हो रही है। अपने भाषण के अन्त में

श्रीवास्तव अपर सचिव एवं विकास आयुक्त (लघु उद्योग) नयी दिल्ली के सन्देश के प्रति अपना आभार प्रकट करते हुए सभी अधिकारियों से हिन्दी व्यवहार की अपील की।

मुख्य अतिथि श्री अनिल कुमार गोगिया, उपनिदेशक (विद्युत) ने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा कि स्वतन्त्रता संग्राम के दौरान सभी भारतीय हिंदी बोलने में राष्ट्रीय गर्व की अनुभूति करते थे परन्तु आज उनके अन्दर हीन भावना फैल गयी है और अंग्रेजी बोलकर अपनी अवकुंठाओं का तिरोहन करते हैं। यह प्रवृति उस व्यक्ति विशेष के लिए और राष्ट्रीय बोद्ध तत्व के लिए बेहद खतरनाक है। उन्होंने सुझाव दिया हम सभी को इन प्रवृत्तियों से सजग रहना चाहिए और राष्ट्रीय भावना की सुरक्षा करनी चाहिए।

इसके बाद श्री ए० के० कालिया, उपनिदेशक (आर्थिक अन्वेषण) ने अवर सचिव एवं विकास आयुक्त (लघु उद्योग) नयी दिल्ली का हिन्दी दिवस का सन्देश पढ़ कर सुनाया। सन्देश में 14 सितम्बर 1949 की बधाई सम्प्रेषित करते हुए कहा गया कि हिन्दी दिवस का सुस्मरण अपनी वाणी को प्रणाम करना है। उन्होंने राजभाषा हिन्दी के सार्वभौमिक व्यवहार की स्थिति पर आत्म विश्लेषण पर बल दिया। सन्देश में यह आशाबाद प्रकट किया गया कि हिन्दी भी विज्ञान, तकनीकी उत्कृष्ट अनुसन्धानों एवं विधायी प्रवृत्ति के साहित्य की भाषा बनने में सक्षम है, परन्तु इस प्रयोजन के लिए भाषा विदों को अपने दायित्वों को गहन करना होगा। सन्देश के अन्त में राष्ट्रीय एकता की कड़ी में कार्य करने के लिए सरकारी कामकाज में हिन्दी व्यवहार का निवेदन किया। सन्देश वाचन के उपरान्त श्री ए० के० कालिया ने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा कि पहले संस्कृत जनभाषा था परन्तु पाविनि ने उसे व्याकरण बद्ध करके इसका मानकीकरण कर डाला और जनभाषा पद से बंचित कर दिया। भाषा की यात्रा यहीं से चल पड़ी। पाली, प्राकृत-अपभ्रंड आदि सोपानों से गुजर कर हिन्दी फिर आज की हिन्दी आयी। हिन्दी कमजोर भाषा नहीं है क्योंकि ये मानकीकरण से बाहर तथा जन साधारण की जन भाषा है। जनतन्त्र में जनभाषा अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि जनतन्त्रीय शासन की नीतियों के लाभों की सूचना जन भाषा में ही सम्भव है। अन्यथा जनता तथा शासन के बीच संवादहीनता की स्थिति आ जाएगी और जनतंत्रीय शासन का ध्येय समाप्त हो जाता है।

इसके पश्चात् संस्थान के अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने हिन्दी में काम करने का संकल्प लिया। पखवाड़े के कार्यक्रमों में हिन्दी निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन हुआ जिसमें प्रथम स्थान श्री विजय सिंह, अन्वेषक (का०/मृ०), द्वितीय श्री जय प्रकाश शर्मा, आशुलिपिक एवं तृतीय श्री पी० मुरलीधरन, लघु उद्योग प्रवर्धन अधिकारी) आ० ज०) को प्राप्त हुआ।

नेशनल टेक्स्टाइल कारपोरेशन (एम० एन० लि० मुंबई)

नेशनल टेक्स्टाइल कारपोरेशन (एम० एन०) लि०, मुंबई में निगम के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक श्री डी० आर० मेहता की अध्यक्षता में दिनांक 24 सितम्बर, 1996 को हिन्दी दिवस समारोह का आयोजन किया गया। समारोह की मुख्य अतिथि के रूप में श्रीमती सुधा श्रीवास्तव, उप निदेशक (कार्यान्वयन), भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग, मुंबई उपस्थित थीं। समारोह की मुख्य अतिथि श्रीमती श्रीवास्तव जी ने अपने भाषण में राजभाषा नीति के कार्यान्वयन पर बल देते हुए कहा कि हिन्दी सीखना तथा हिन्दी में काम करना हमारा कर्तव्य है। उन्होंने आगे कहा कि इस शुभ अवसर पर हमें संकल्प करना है कि हम अपना सब काम हिन्दी में ही करेंगे। निगम के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक श्री डी० आर० मेहता जी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि राजभाषा के रूप में हिन्दी का विकास जरूरी ही नहीं अनिवार्य भी है। सभी के सक्रिय सहयोग से ही प्रगति संभव है। श्री डी० वाई० देशमुख, निदेशक (वाणिज्यिक) ने माननीय वस्त्र मंत्री, भारत सरकार, श्री आर० एल० जालप्पा द्वारा हिन्दी दिवस के अवसर पर जारी "अपील" पढ़कर सुनाई। श्री देशमुख जी ने अपने भाषण में राजभाषा के रूप में हिन्दी के महत्व पर प्रकाश डाला।

इस अवसर पर वर्ष 1995-96 के दौरान हिंदी में अधिकाधिक कार्य करने वाले अधिकारियों/कर्मचारियों एवं प्रतियोगिताओं आदि में सफल प्रतियोगियों को पुरस्कार दिए गए।

भावनगर मण्डल, पश्चिम रेलवे

भावनगर मण्डल, में दिनांक 11.9.96 से 25.9.96 तक राजभाषा पखवाड़ा मनाया गया। दिनांक 12.9.96 व 13.9.96 को छात्र-छात्राओं के लिए विभिन्न प्रतियोगिताए आयोजित की गई। प्रतियोगिताओं में सफल हुए छात्र-छात्राओं को दिनांक 13.9.96 को पुरस्कार दिए गए। मंडल के विभिन्न स्टेशनों पर दिनांक 14.9.96 को हिंदी दिवस मनाया गया इस अवसर पर माननीय रेल मंत्री तथा महाप्रबंधक का संदेश भी पढ़ा गया। दिनांक 18.9.96 से 24.9.96 तक अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए अनेक प्रतियोगिताएं आयोजित की गई। इनमें समाचार वाचन प्रतियोगिता एक अभिनव आयोजन था। इसे सभी ने मुक्त कंठ से सराहा।

दिनांक 25.9.96 को समापन समारोह का आयोजन किया गया। इसी दिन नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक भी बुलाई गई। बैठक के उपरान्त राजभाषा पखवाड़ा समापन समारोह का शुभारम्भ हुआ। समारोह की अध्यक्षता मंडल रेल प्रबंधक ने की।

समारोह के अंत में विजेता अधिकारी व कर्मचारियों को पुरस्कार प्रदान किये गये—इस वर्ष पुरस्कार हिंदी पुस्तकें खरीदने के लिए, स्थानीय पुस्तक विक्रेताओं के सहयोग से "गिफ्ट वाउचर" प्रदान करने का नवीन तत्व जोड़ा गया था। इस प्रणाली का विजेताओं के प्रशंसापूर्वक स्वागत किया है—नगर समिति के विजेताओं को भी "गिफ्ट वाउचर" प्रदान किये गये थे।

इस तरह दिनांक 11.09.96 से 25.09.96 तक की पूरी अवधि राजभाषा प्रचार-प्रकार को लेकर चहल-पहल से भरपूर रही। आयोजनों में कई नवीनता शामिल होने से कर्मचारियों में भारी उत्साह वर्धन हुआ है।

मंडल रेल प्रबंधक श्री वें आनंद, उपमुख्य राजभाषा अधिकारी एवं वरिष्ठ मंडल इंजीनियर श्री विश्वेशन चौबे के कुशल मार्गदर्शन में राजभाषा अनुभाग ने अथक मेहनत, लगन व समर्पण की भावना से इस आयोजन को सार्थक बना दिया था।

भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण, मुम्बई

दिनांक 13 सितम्बर, 1996 को मुंबई एयरपोर्ट पर "हिन्दी पखवाड़े" का उद्घाटन किया गया। इस कार्यक्रम में भारत सरकार के नागर विमानन ... के निदेशक (राजभाषा), श्री रघुनाथ सहाय मुख्य अतिथि थे। ...थि द्वारा दीप प्रज्वलित कर विधिवत् ढंग से "हिन्दी पखवाड़े" ...या गया। "हिन्दी दिवस" के अवसर पर माननीय केन्द्रीय ...ीत गुप्त के संदेश का वाचन कु॰ माया (कार्मिक

... ने "हिन्दी दिवस" के 47 वीं वर्षगांठ पर नागर ...अधिकारियों/कर्मचारियों से यह चिंतन करने के लिए ...म करने के लिए "अब और प्रतीक्षा किस लिए" की ... कि नागर विमानन से सम्बद्ध कार्यालयों का विस्तार देश ...हीं बल्कि विदेशों में भी है। केन्द्र सरकार के इस मंत्रालय ...शिष्टता, है कि इसके "नेटवर्क" का कार्यक्षेत्र धरा के साथ-साथ अन्तरिक्ष भी रहा है और राजभाषा का पंचम पृथ्वी और आकाश दोनों जगह लहराया है। दैनिक कार्यालयी कामकाज में हिन्दी में प्रयोग के अलावा, विमानपत्तनों पर आगन्तुक हिन्दी देख और सुन सकते हैं वहां क्षितिज में तैरते विमानों के भीतर भी उनके कर्ण इस पावन वाणी का रसास्वादन करते नहीं अघाते।

इस अवसर पर अपने संबोधन में उप महाप्रबंधक (कार्मिक एवं प्रशासन) महोदया ने कहा कि हिन्दी में काम करना हम सब का पावन, संवैधानिक कर्तव्य है और "हिन्दी दिवस" मनाने का एक प्रयोजन अन्य भारतीय भाषाओं के बीच सौहार्द के महत्व को बल देना है। उन्होंने हिन्दी पखवाड़े के अन्तर्गत आयोजित कार्योन्मुखी प्रतियोगिताओं में बढ़-चढ़कर भाग लेने की अपील भी की।

इस अवसर पर कार्यालयीन कामकाज में फाइलों, कागजपत्रों पर हिन्दी टिप्पण के लिए विशेष रूप से तैयार किए गए "अंग्रेजी-हिन्दी वाक्याशों के एक संग्रह" का विमोचन भी किया गया।

उद्घाटन सत्र के उपरान्त एक "हिन्दी कार्यशाला" का आयोजन किया गया था। इस कार्यशाला में व्याख्यान देते हुए श्री सहाय ने प्रतिभागियों का परिचय संविधान में हिन्दी के संबंध में विभिन्न उपबंधों से कराया। अपने सार-गर्भित भाषण में उन्होंने कर्मचारियों से अपने रोज़मर्रा के कामकाज में आने वाली कठिनाइयों पर चर्चा की और विभिन्न स्तरों पर उनके निवारण के लिए उठाए गए उपायों पर प्रकाश डाला। कार्यक्रम के अगले चरण के अन्तर्गत दिनांक 23 से 27 सितम्बर, 1996 तक हिन्दी पत्राचार सप्ताह मनाया गया। हिन्दी पत्राचार सप्ताह के दौरान हिन्दी में अधिक से अधिक पत्र भेजे जाने का अनुरोध किया गया।

हिन्दी पखवाड़े के दौरान, हिन्दी निबन्ध लेखन, पत्र-लेखन, अनुवाद शुद्ध और श्रुत लेखन, टाइपिंग तथा स्वरचित कविता-पाठ आदि प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। इसके अतिरिक्त पहली बार राजभाषा प्रश्न मंच का भी आयोजन किया गया। बड़ी संख्या में उपस्थित कर्मचारियों ने प्रश्न मंच का आनन्द लिया।

पखवाड़े के दौरान, श्रीमती सुधा श्रीवास्तव, उप निदेशक (कार्यान्वयन), गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग, मुंबई ने दिनांक 20 सितम्बर, 1996 को एयरपोर्ट पर हिन्दी के प्रगामी प्रयोग सम्बन्धी गतिविधियों का निरीक्षण किया। इस अवसर पर उन्होंने एयरपोर्ट निदेशक महोदय के कार्यालय में कुछ विभाग प्रमुखों से हिन्दी में काम बढाए जाने के संबंध में विचार-विमर्श भी किया।

दिनांक 27 सितम्बर 1996 को मुंबई एयरपोर्ट के एयरपोर्ट निदेशक श्री पी॰ एस॰ नायर ने हिन्दी पखवाड़े के दौरान आयोजित विभिन्न कार्योन्मुखी प्रतियोगिताओं में विजेता कर्मचारियों को पुरस्कार प्रदान कर सम्मानित किया। इस अवसर पर उन्होंने कहा कि हिन्दी जनता की भाषा है। आम आदमी हिन्दी आसानी से समझ सकता है। हम हिन्दी में काम करके लोगों के नजदीक पहुंचा जा सकता हैं।

द्रव नोदन प्रणाली केन्द्र, वलियमला

भारत सरकार की राजभाषा नीति के अनुसार पिछले वर्षों की तरह इस वर्ष भी द्रव नोदन प्रणाली केन्द्र में हिन्दी पखवाड़े का आयोजन हुआ। दिनांक 02.09.1996 से 16.09.1996 तक हमारे केन्द्र में हिंदी के क्रियाकलाप संपन्न हुए। 02.09.1996 की सुबह हमारे केन्द्र के मुख्यालय — द्रव नोदन प्रणाली केन्द्र, वलियमला में पखवाड़े का उद्घाटन समारोह हुआ। केन्द्र के कार्यकारी निदेशक श्री एन श्रीधरन दास की अध्यक्षता में आयोजित उद्घाटन समारोह में एअर कमोडोर एस एम सेठी, दक्षिण वायु कमान, तिरुवनंतपुरम ने पखवाड़े का उद्घाटन किया। उन्होंने अपने उद्घाटन भाषण में इस बात पर बड़ा संतोष प्रकट किया कि भारत के दक्षिणी कोने में स्थित केरल और तमिलनाडु मे भी हिंदी के प्रयोग में काफ़ी उन्नति हो रही है। उद्घाटन समरोह में हिंदी के जाने-माने विद्वान एवं कोचिन विश्वविद्यालय कें हिंदी विभाग के भूतपूर्व अध्यक्ष डॉ॰ एन ई विश्वनाथ अय्यर जी भी उपस्थित थे। उन्होंने सभी उपस्थित वैज्ञानिकों, अधिकारियों एवं कर्मचारी 'ग' को संबोधित करते हुए राजभाषा हिंदी की ओर उनकी जागरुकता की सराहना की। अपने गंभीर शैली में उन्होंने व्यक्त किया कि "आप वैज्ञानिक लोग विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में दुनिया के सामने कामयाबी की मिसालें पेश कर सकते हैं, तो निश्चय ही राजभाषा हिंदी के प्रगामी प्रयोग को भी काफ़ी आगे बढ़ा सकते हैं और उसे विश्व भाषा का दर्जा प्रदान कर सकते हैं।" उद्घाटन समारोह में श्री एन के गुप्ता, प्रभाग प्रधान ने स्वागत भाषण तथा श्री मोहम्मद मुस्लिम, सह परियोजना निदेशक ने धन्यवाद प्रस्ताव दिया।

राजभाषा हिंदी के प्रगामी में प्रगति लाने के उद्देश्य से केन्द्र ने एक संदर्भ पुस्तिका तैयार की है। 'राजभाषा पीयूष' नामक इस पुस्तिका का विमोचन भी उद्घाटन समारोह में हुआ। केंद्र के हिंदी अधिकारी श्री अशोक कुमार बिल्लूरे द्वारा लिखी गई यह पुस्तक हिंदी अनुभाग के कर्मचारियों की मदद से केंद्र की आंतरिक सुविधाओं से प्रकाशित की गई है।

सितंबर 16 को केंद्र के तीनों यूनिटों में हिंदी दिवस का आचरण किया गया। इस सिलसिले में कार्यालय परिसर में सभी कर्मचारियों से निवेदन किया गया था कि वे एक दूसरे से हिंदी में बात करें, टिप्पणी आदि हिंदी में लिखें और हिंदी में हस्ताक्षर करें। जिसका अनुपालन अधिकतर कर्मचारियों द्वारा किया गया। तिरुवनंतपुरम नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के तत्वावधान में दिनांक 16.09.1996 से संयुक्त रूप से आयोजित हिंदी पखवाड़ा समारोह के कार्यक्रमों में भी केंद्र के कर्मचारियों ने भाग लिया। □

भारतीय लेखा तथा लेखा परीक्षा विभाग, जयपुर

अनुपालना में महालेखाकार (लेखा परीक्षा) प्रथम तथा द्वितीय, राजस्थान जयपुर कार्यालयों के संयुक्त तत्वावधान में दिनांक 19.8.96 से 23.8.96 तक आयोजित एक हिंदी कार्यशाला चलाई गई।

दिनांक 19.8.96 को कार्यशाला का उद्घाटन करते हुए श्री आर० पी० कटारिया, कल्याण अधिकारी ने प्रशिक्षणार्थियों से कार्यशाला का भरपूर लाभ उठाने एवं राजकार्य में हिन्दी का अधिकाधिक उपयोग करने का अनुरोध किया। उन्होंने इस बात पर भी बल दिया कि हिन्दी में कार्य करना न केवल हमारा संवैधनिक कर्त्तव्य है बल्कि यह हमारा नैतिक दायित्व भी है। हम यथासंभव अधिकाधिक कार्य हिन्दी में करें तभी हमारा राष्ट्र अपनी आस्मिता एवं सम्मान को बनाये रख सकेगा।

5 दिवस तक चली इस कार्यशाला में सरकारी कामकाज में बहुधा प्रयुक्त होने वाले शब्दों तथा वाक्यों की जानकारी के साथ-साथ विभिनन समूहों की कार्यप्रणाली से संबंधित आवश्यक जानकारी भी प्रशिक्षणार्थियों को उपलब्ध करवाई गई।

दिनांक 23.8.96 को कार्यशाला का समापन करते हुए कल्याण अधिकारी ने प्रशिक्षणाथियों द्वारा प्रदर्शित रूचि एवं उत्साह की सराहना करते हुए यह आशा प्रकट की कि सभी प्रशिक्षित कर्मचारी हिन्दी में कार्य करने का वातावरण निर्मित करने का भरसक प्रयत्न करेंगे तथा अर्जित जानकारी का लाभ दूसरे कर्मचारियों को भी प्रदान करेंगे।

आकाशवाणी, पोर्ट ब्लेयर

आकाशवाणी, पोर्ट ब्लेयर में अधिकारियों / कर्मचारियों को हिन्दी का प्रशिक्षण देने के लिए दिनांक 19-8-96 से 23-8-96 तंक पांच दिवसीय हिन्दी कार्यशाला आयोजित की गई। इसमें 36 अधिकारियों / कर्मचारियों को प्रशिक्षित करवाया गया।

कार्यशाला का उद्घाटन दिनांक 19-8-96 को प्रातः 11 बजे केन्द्र अभियंता श्री ईश्वर सिंह मेहला ने किया। उन्होंने कहा कि किसी भी देश की आत्मा उसकी राष्ट्रभाषा होती है और उसका सम्मान देश का सम्मान है, इसमें कोई सन्देह नहीं है कि हिन्दी जितनी सरल और ग्राह्य भाषा है उतनी ही वह देश की विकास प्रक्रिया को आगे बढ़ाने वाली भाषा [illegible] अवसर पर कार्यशाला के महत्व पर प्रकाश डालते हुए सहायक [illegible] निदेशक, श्री एम० एच० खान ने कहा कि कार्यशाला का उद्देश्य सरकारी काम-काज में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ाना है और कर्मचारियों में हिन्दी में काम करने की झिझक को मिटाता है। कर्मचारियों को प्रोत्साहित करते हुए आगे कहा कि सरकारी काम-काज में हिन्दी की अनिवार्यता तो है ही साथ ही साथ हिन्दी देश को जोड़ने वाली एक स्वाभाविक गरिमामय कड़ी भी है।

दिनांक 20-8-96 को कर्मचारियों को भारत सरकार की नीति, अधिनियम, नियम और गृह मंत्रालय के हिन्दी सम्बन्धी आदेशों का सामान्य परिचय एवं वार्षिक कार्यक्रम की जानकारी दी गयी। इसके अतिरिक्त पत्र, उसके विभिन्न प्रकार, अवकाश, अनुशासनिक कार्रवाई से सम्बन्धित हिन्दी में टिप्पण / आलेखन एवं अभ्यास कराया गया। यह कक्षा स्थानीय प्रशासन के सहायक सचिव (राजभाषा), श्री श्रीराम ने ली।

दिनांक 21-8-96 को श्री दीपक चन्द्र तिवारी, हिन्दी अनुवादक, दूरदर्शन केन्द्र ने कक्षा ली। इस दिन पदों का सृजन, भर्ती, नियुक्तियां, बिलों का भुगतान, लेखा आपत्तियां, भत्ते पेशगियां, यात्रा सम्बन्धी मामले आदि से सम्बन्धित टिप्पण / आलेखन एवं अभ्यास करवाया गया।

दिनांक 22-8-96 को श्री पी० के० मिश्रा, हिन्दी अनुवादक अण्डमान लक्षद्वीप बंदरगाह निर्माण कार्य ने प्रशिक्षण प्रदान किया। पदोन्नति, स्थायीवत्ता, फर्नीचर, टेलीफोन, लेखन सामग्री सरकार बैठकों से सम्बन्धित टिप्पण / आलेखन एवं अभ्यास कराया गया।

शुक्रवार दिनांक 23-8-96 को केन्द्र अभियंता श्री ईश्वर सिंह मेहला ने अपने सरल और प्रगल्भ वक्तव्यों से कर्मचारियों का उत्साह वर्धन किया। उन्होंने तकनीकी शब्दावली, सामान्य टिप्पण / आलेखन, लॉग बुक में प्रविष्टियां, प्रसारण रिपोर्ट आदि हिन्दी में सरल तरीके से कैसे किया जा सकता है इस पर विचार-विमर्श किया एवं अभ्यास करवाया गया।

हिंदुस्तान जिंक लिमिटेड

हिन्दुस्तान जिंक लिमिटेड की इकाई राजपुरा दरीबा खान के राजभाषा विभाग के तत्वावधान में राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार एवं कार्यालयीन काम-काज में हिन्दी का प्रयोग करने का व्यावहारिक ज्ञान देने के उद्देश्य से दिनांक 29 व 30.8.96 को "दो दिवसीय हिन्दी कार्यशाला" आयोजित की गई।

शुभारम्भ सत्र के मुख्य अतिथि श्री डी॰ एस॰ भण्डारी, मुख्य प्रबन्धक (खान) एवं सदस्य, राजभाषा कार्यान्वयन समिति ने कहा कि इस प्रकार की कार्यशालाओं ने दरीबा में हिन्दी कार्य को गति दी है, उन्होंने कहा कि सरकारी काम-काज में हमें आम बोलचाल के शब्दों तथा सरल हिन्दी का प्रयोग करना चाहिए।

कार्यशाला में राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य-सचिव एवं क॰राजभाषा अधिकारी डा॰ जयप्रकाश शाकद्विपीय ने राजभाषा से संबंधित संवैधानिक उपबंधों, राजभाषा अधिनियम, नियम, आमतौर पर की जाने वाली अशुद्धियां एवं उनके शुद्ध रूप हिन्दी वर्तनी का मानकीकरण, विराम चिह्न, देवनागरी में तार, पत्राचार, पुरस्कार योजनाओं आदि के बारे में जानकारी दी।

प्रबन्धक (राजभाषा) डा॰ पुरूषोत्तम छंगाणी ने टिप्पणी लेखन का अभ्यास करवाया एवं हिन्दी में तथा द्विभाषा में किए जाने वाले कार्यों की जानकारी दी।

समापन सत्र में मुख्य अतिथि श्री आर॰के॰गौड़, मुख्य प्रबन्धक (अयस्क सज्जीकरण) ने कार्यशाला को हिन्दी के कार्य में होने वाली कठिनाइयों एवं झिझक को दूर करने में लाभकारी बताया तथा अधिकाधिक कार्यालयीन कार्य हिन्दी में करने का आह्वान किया।

अध्यक्षीय उद्बोधन में डा॰ पुरूषोतम छंगाणी ने कहा कि हिमालय पर जमी बर्फ जब पिघलती है तो गगां में पानी आता है। इसी प्रकार उच्चाधिकारी यदि हिन्दी लिखना प्रारंभ कर दें तो अधीनस्थ कर्मचारी स्वतः ही हिन्दी लिखने लगेंगे।

कार्यशाला के प्रतिभागियों, श्री रविन्द्र शंकर जौहरी, श्री लहरी लाल पालीवाल, श्री हीरा लाल खटीक, श्री नानूराम पारगी, श्री आर॰पी॰ श्रीमोली ने भी कार्यशाला की उपयोगिता पर विचार व्यक्त किए।

केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड

केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड में 16 जुलाई, 1996 तक पन्द्रह दिवसीय हिन्दी कार्यशाला/प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया गया। कार्यशाला का उद्घाटन करते हुए अध्यक्ष के॰मा॰शि॰बो॰ ने कहा कि संविधानिक उपबंधों के अन्तर्गत कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ाने के अतिरिक्त हिन्दी के प्रति सही व्यावहारिक दृष्टिकोण होना भी अनिवार्य है। भाषा संप्रेषण का माध्यम होती है, इसलिए वैज्ञानिक जानकारी के आधार पर भाषा का प्रयोग किया जाना चाहिए। हिन्दी भाषा के विकास के लिए सामाजिक योगदान एवं अनुकूल वातावरण अत्यंत आवश्यक है। हिन्दी भारत की प्रमुख सम्पर्क भाषा के रूप में विकसित हो सकती है, यह एक व्यावाहारिक तथ्य है।

कार्यशाला में बोर्ड के 24 कर्मचारियों ने भाग लिया। प्रशिक्षण के दौरान उन्हें हिन्दी वर्तनी देवनागरी लिपि, हिन्दी की संविधानिक स्थिति एवं राजभाषा अधिनियम की विभिन्न धाराओं से अवगत कराया गया। सभी प्रतिभागियों को कार्यशाला के दौरान हिन्दी में प्रारूप एवं टिप्पणियां लिखने का अभ्यास कराया गया। इसके अतिरिक्त उन्हें प्रारूप एवं टिप्पणियों की परिभाषाएं, प्रकार एवं विशेषताओं की जानकारी दी गई, पत्राचार के विभिन्न रूपों से अवगत कराया गया और नेमी टिप्पणियों के नमूने भी वितरित किए गए। कार्यशाला के दौरान सभी प्रतिभागी सहायकों ने विशेष रूचि ली और विश्वास दिलाया कि वे अपना अधिक से अधिक सरकारी कामकाज हिन्दी में करने का प्रयास करेंगे।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जालंधर

अध्यक्ष, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के निदेशानुसार 20 अगस्त, 1996 को आयकर कार्यालय के पुस्तकालय-हाल में "एक दिवसीय" "संयुक्त हिन्दी कार्यशाला" का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला में जालन्धर नगर के केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों/बैंकों/निगमों आदि से 55 से भी अधिक प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इस कार्यशाला में प्रतिभागियों को "संघ की राजभाषा नीति" "देवनागरी लिपि की संशोधित वर्तनी", "सामान्य शब्दावली का संक्षिप्त ज्ञान दिया गया व हिन्दी में नोटिंग/ड्राफ्टिंग व पत्राचार का अभ्यास करवाया गया। इस कार्यशाला का उदघाट्न अध्यक्ष, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति व आयकर आयुक्त, श्री एस॰सी॰ ग्रोवर ने किया। उन्होंने कहा कि इस कार्यशाला का मुख्य उद्देश्य हिन्दी जानने वाले अधिकारियों/कर्मचारियों की हिन्दी में काम करने के प्रति झिझक को दूर करना है और उन्होंने प्रतिभागियों से आशा व्यक्त की, कि वे कार्यशाला के इस उद्देश्य को पूरा करने में अपना सक्रिय सहयोग देंगे। कार्यशाला में सर्वकार्यभारी अधिकारी, हिन्दी शिक्षण योजना व अपर आयकर आयुक्त, श्री अनिल कुमार जी ने अपना सक्रिय सहयोग प्रदान किया। प्रशिक्षण कार्य, दूरदर्शन केन्द्र, ओरिएण्टल बैंक ऑफ कामर्स, सैंट्रल बैंक ऑफ इंडिया, व आयकर विभाग के राजभाषा अधिकारियों द्वारा दिया गया।

वरिष्ठ गुणता आश्वासन स्थापना (इंजिनियरिंग उपस्कर), फरीदाबाद

दिनांक 19.8.96 को वरिष्ठ गुणता आश्वासन स्थापना (इंजिनियरिंग उपस्कर) फरीदाबाद ने गुणता आश्वासन निदेशालय (इ॰उ॰) नई दिल्ली के सानिध्य में एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन कर्नल जे॰के॰ बजाज संयुक्त निदेशक गु॰आ॰नि॰ (इ॰उ॰) की अध्यक्षता में किया। फरीदाबाद के 20 अधिकारियों एवं कर्मचारियों के अतिरिक्त गु॰आ॰नि॰ (इ॰उ॰) के श्री सुरेन्द्र मोहन धुन्ना ए॰सी॰एस॰ओ॰ ने भी इस कार्यशाला में भाग लिया। श्री पी॰एस॰ वागमाड़े क॰वै॰अ॰ ने मंच का संचालन किया। श्री सुरेन्द्र मोहन धुन्ना ने 15 विषयों का विवरण दिया, जिनका पालन करना

सब के लिए अनिवार्य है। श्री धुन्ना ने राजभाषा संबंधी संविधानिक एवं विधिक प्रावधानों तथा महानिदेशालय द्वारा चलाई जा रही प्रोत्साहन योजनाओं का विवरण दिया तथा कविता पाठ द्वारा आग्रह किया कि हिन्दी सारे संसार की मातृभाषा है। कर्नल बजाज ने कहा कि इस स्थापना द्वारा प्रथम कार्यशाला का आयोजन प्रशंसनीय कार्य है तथा अगामी हिन्दी दिवस (14 सितम्बर 96) को स्थापना द्वारा अन्य कार्यक्रमों का आयोजन किया जाए ताकि अधिक से अधिक अधिकारी एवं कर्मचारी लाभान्वित हों।

स्थापना के कई कर्मचारियों ने कविता पाठ, चुटकलों आदि से मनोरंजन किया। कार्यशाला की समाप्ति पर ले० कर्नल जी०पी० कृष्णपूर्ति ने कार्यशाला की सफलता पर सब को बधाई दी एवं आश्वासन दिया कि उनकी स्थापना हिन्दी में अधिक से अधिक कार्य करने में प्रयत्नशील रहेगी।

कॉर्पोरेशन बैंक, गुन्टूर

क्षेत्रीय कार्यालय, गुंटूर ने दिनांक 17.09.96 एवं 18.09.96 को न्यू इंडिया एशोरेन्स, मंडल कार्यालय, गुंटूर एवं भारतीय कपास निगम, गुंटूर के साथ एक संयुक्त हिन्दी कार्यशाला का आयोजन न्यू इंडिया एंशोरेन्स, मंडल कार्यालय के सम्मेलन कक्ष में किया।

हिन्दी कार्यशाला का उद्घाटन न्यू इंडिया एशोरेन्स के मंडल प्रबन्धक श्री रवीन्द्रनाथ बाबू ने दीप प्रज्वलित कर उन्होंने कहा की हिन्दी के लिए सौहादर्यपूर्ण वातावरण तैयार किया जाना चाहिए, जिससे लोगों की मानसिकता को बदला जा सकें। इसके अतिरिक्त उन्होंने यह भी कहा कि देश का आर्थिक प्रगति के संबंध में सभी बैंकों एवं बीमा कंपनियों का दायित्व है कि वे अपनी कार्यशैली और कार्य शालाओं के द्वारा राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था को सुदृढ़ करने एवं आर्थिक विकास के संबंध में समुचित कार्यान्वयन पद्धति अपनाएं जहां कि भाषा की महत्वपूर्ण भूमिका है। उहोंने कहा कि भाषा के द्वारा ही हम किसी से सद्भावनापूर्ण संबंध स्थापित कर सकते हैं जिससे हमारी ग्राहक सेवा और व्यावसायिक प्रगति अधिक शक्तिशाली बन सकती है।

श्री बी वी रमण क्षे० प्र० ने भी प्रतिभागियों को संबोधित किया। क्षेत्रीय कार्यालय, गुंटूर के वरिष्ठ प्रबन्धक, श्री के शिव प्रसाद ने सभी कर्मचारियों को प्रेरणा देते हुए कहा कि जिस हिन्दी को संविधान ने राजभाषा का सम्मान प्रदान किया है उसके प्रति श्रद्धा, उसमें काम करने की इच्छा और लगन ही कार्यालय में हिन्दी का प्रयोग संभव है तथी हिन्दी कार्यशालाएं सार्थक होंगी। उन्होंने कहा कि आप अपने अपने कार्यालयों में जाकर कुछ न कुछ हिन्दी में कार्य करना प्रारंभ करेंगे एवं अपने अधीनस्थ कर्मचारियों को भी इसके लिए प्रेरित करेंगे।

भारतीय कपास निगम के शाखा प्रबन्धक श्री भानुजी राव ने अपने भाषण में हिन्दी कार्यशाला का महत्व बताते हुए कहा कि इससे हिन्दी में काम करने वाले अधिकारियों एवं कर्मचारियों को अपना संकोच दूर करने में मदद मिलती है।

न्यू इंडिया एशोरेन्स के मंडल प्रबन्धक ने अपनी अध्यक्षीय भाषण में कहा कि हिन्दी भाषा देश की अभिव्यक्ति की सबसे सशक्त कड़ी है। हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है और सरकार का यह प्रयास है कि जहां हिन्दी का प्रचार प्रसार हो रहा है वहां देश की दूसरी भाषाओं को भी उन्नति और विकास का अवसर मिले। देश के विभिन्न क्षेत्रों में संपर्क बढ़ाने और राष्ट्रीय एकता मजबूत बनाने में हिन्दी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। अतः हिन्दी के प्रचार प्रसार के लिए तथा कार्यालय में कार्यान्वयन के लिए आप सभी मिलकर समर्पित भाव से प्रयास करें।

दूसरे दिन कर्मचारियों की एक परीक्षा ली गई एवं तीनों संस्थाओं के कर्मचारियों को तीन-तीन प्रथम, द्वितीय, एवं तृतीय पुरस्कार दिये गये। सभी कर्मचारियों को अंग्रेजी-हिन्दी शब्दकोश भी भेंट किये गये। प्रमाण-पत्र वितरित किये गये।

बैंक ऑफ इंडिया, जयपुर

बैंक ऑफ इंडिया के जयपुर स्थित क्षेत्रीय कार्यालय ने दि० 9 व 10 अगस्त, 1996 को अपनी शाखाओं के अधिकारियों के लिए दो दिवसीय उन्नत हिन्दी कार्याशाला का आयोजन किया। कार्यशाला का प्रबन्धन एवं आयोजन क्षेत्रीय राजभाषा अधिकारी श्री एस पी गर्ग "सुमन" ने किया। कार्यशाला के लिए बैंक की राजस्थान में स्थित 41 शाखाओं के 25 अधिकारियों को आमंत्रित किया गया था, जिनमें वरिष्ठ अधिकारी, प्रबन्धक एवं नामित राजभाषा अधिकारी वर्ग के अधिकारी सम्मिलित थे।

कार्यशाला में सहभोगियों को राजभाषा सम्बन्धी महत्वपूर्ण अपेक्षाओं एवं शब्दावली की विशद् जानकारी दी गई एवं पर्याप्त व्यावहारिक कार्य कराया गया। आंचलिक राजभाषा मुख्याधिकारी श्री शैलन मेहता ने भी कार्यशाला के आयोजन में सहयोग दिया। कार्यशाला के समापन सत्र में बैंक के क्षेत्रीय प्रबन्धक श्री चन्द्र शंकर जौहरी ने राजभाषा के प्रयोग का महत्व बताया एवं अधिकारियों से अपना सम्पूर्ण कार्य व पत्राचार हिन्दी में करने का आग्रह किया। व्यावहारिक कार्य में सर्वाधिक अंक प्राप्तकर्ता सर्वश्री श्याम वरयानी (जयपुर मुख्य शाखा) व श्री रमेश कौल (जोधपुर ई०ए० शाखा) को भी इस अवसर पर पुरस्कृत किया गया।

इस अवसर पर बैंक नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य सचिव श्री उमाकांत स्वामी ने भी बैंकों में हिन्दी के कार्यान्वयन की जानकारी देते हुए प्रतिभोगियों को उनके दायित्वों से अवगत कराया।

सभी सहभोगियों ने इस उन्नत हिन्दी कार्यशाला में पूरी रूचि ली एवं ऐसे आयोजनों को उद्देश्य-परक, सार्थक एवं उपयोगी बताया।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, वडोदरा

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, वडोदरा की 28वीं बैठक दिनांक 5/8/96 को श्री एॅ॰के॰ मित्र, आयुक्त केन्द्रीय उत्पाद एवं सीमा शुल्क की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में श्री मित्र ने सभी सदस्यों से अनुरोध किया कि वे वर्ष 1996-97 के वार्षिक कार्यक्रम में निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए निष्ठापूर्वक कार्य करें। तत्पश्चात् पिछली बैठक के कार्यवृत की पुष्टि की गई और सदस्य कार्यालयों हिंदी की प्रगति की समीक्षा की गई। राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) तथा राजभाषा नियम, 1976 के नियम 6 में की गई व्यवस्था के अनुपालन के संबंध में समिति को बताया गया कि कुछ कार्यालय इन व्यवस्थाओं का पूर्णतः अनुपालन नहीं कर रहे हैं। इस संबंध में यह सुझाव दिया गया कि जिन कार्यालयों में कर्मचारियों की संख्या 25 से कम है वहां पर भी अनुवादक के पद का सृजन किया जाए। इस पर चर्चा करते हुए अंततः यह निर्णय किया गया कि ऐसे कार्यालयों की एक सूची बनाकर उसे राजभाषा विभाग को भेजा जाएगा। तथापि जब तक अनुवादक की नियुक्ति नहीं होती तब तक संबंधित कार्यालय अपने यहां किसी योग्य कार्मिक से हिंदी अनुवाद का कार्य मानदेय के आधार पर करवा सकते हैं। हिंदी पत्राचार के अन्तर्गत जिन कार्यालयों ने अभी तक निर्धारित लक्ष्य प्राप्त नहीं किया है, उन्हें यह सुझाव दिया गया है कि वे क्षेत्रीय भाषाओं में प्राप्त पत्रों के उत्तर हिंदी में देकर हिंदी पत्राचार के लक्ष्य में वृद्धि कर सकते हैं। हिंदी प्रशिक्षण के लिए शेष कार्मिकों को तत्काल प्रशिक्षण देने का निर्णय किया गया। बैठक में राजभाषा विभाग के क्षेत्रीय कार्यालय, मुम्बई के उप निदेशक श्रीमती सुधा श्रीवास्तव ने कहा कि राजभाषा नीति का अनुपालन सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी प्रत्येक कार्यालयाध्यक्ष की है। अतः जब तक वे स्वयं इन बैठकों में नहीं आएंगे तो इस संबंध में आने वाली कठिनाइयों को दूर करने के लिए कोई ठोस निर्णय नहीं लिया जा सकेगा।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, सूरत

नगरा राजभाषा कार्यान्वयन समिति सूरत की 17वीं बैठक दिनांक 6 अगस्त, 1996 को आयुक्त सीमा एवं केन्द्रीय उत्पाद शुल्क श्री के॰वी॰ वैद्यनाथ की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। बैठक में 25 अधिकारियों/कर्मचारियों ने भाग लिया। अध्यक्ष महोदय ने कहा कि सभी कार्यालय संघ की राजभाषा नीति का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए उचित कदम उठाएं। तत्पश्चात् पिछली बैठक में किए गए निर्णयों तथा टेलीफोन डायरेक्टरी का प्रकाशन, हिंदी टंकण प्रशिक्षण, हिंदी में उत्कृष्ट कार्य करने के लिए पुरस्कार देने तथा गुजरात सरकार के भाषा निदेशालय के कंप्यूटरीकरण में गुजराती/हिंदी का प्रयोग करने आदि पर की गई कार्रवाई पर विस्तृत चर्चा की गई और कार्यवृत की पुष्टि की गई।

बैठक में वार्षिक कार्यक्रम 1996-97 में निर्धारित लक्ष्यों को मद्देनजर रखते हुए यह निर्णय किया गया कि प्रत्येक सदस्य कार्यालय के सभी कर्मचारी 25 प्रतिशत टिप्पण हिंदी में अनिवार्य रूप से लिखें। धारा 3(3) के अनुपालन का कड़ाई से पालन किया जाए और उसके उल्लंघन को गम्भीरता पूर्वक लिया जाए तथा कर्मिकों को प्रशिक्षण देने के लिए रोस्टर बनाया जाए। इसके अलावा बैठक में नगरीय कार्यक्रम के अन्तर्गत आयोजित की जाने वाली विभिन्न प्रतियोगिताओं के आयोजन के संबंध में अपेक्षित दिशा-निर्देश जारी करने के संबंध में भी विचार हुआ जिससे प्रतियोगिताओं का सफलता पूर्वक आयोजन किया जा सके।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, इन्दौर

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, इन्दौर की 24वीं बैठक आयुक्त केन्द्रीय उत्पाद शुल्क/सीमा शुल्क श्री गोबिंदन शेतंपी की अध्यक्षता में हुई। उन्होंने अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में कहा कि प्रायः इन्दौर स्थित केन्द्रीय कार्यालयों के अधिकारीगण सरकार की राजभाषा नीति के कार्यान्वयन में पर्याप्त रूचि ले रहे हैं। तथापि इस संबंध में अभी काफी कुछ किया जाना बाकी है। राजभाषा कार्यान्वयन के संबंध में हिंदी की प्रगति रिपोर्टों की समीक्षा पर चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि 84 कार्यालयों में से केवल 4[illegible] कार्यालयों की रिपोर्टें प्राप्त हुई हैं। और उन्होंने चिंता व्यक्त की अधिकारियों से अपने दायित्व के प्रति सचेत रहने तथा उसमें अपेक्षित सुधार लाने का अनुरोध किया। बैठक में हिंदी प्रशिक्षण, द्विभाषी टाइपराइटर, टैलेक्स मशीन आदि की उपलब्धता, हिंदी में प्राप्त पत्रों के उत्तर हिंदी में दिए जाने, धारा 3(3) के अनुपालन आदि की दिशा में हुई प्रगति पर चर्चा की गई और जिन कार्यालयों में स्थिति संतोषजनक नहीं थी, उन्हें अपेक्षित सुधार लाने के लिए कहा गया। इसके पश्चात पिछली बैठक के कार्यवृत की पुष्टि की गई।

द्विभाषी इलैक्ट्रानिक टाइपराइटरों पर टंककों एवं आशुलिपिकों को प्रशिक्षण देने के संबंध में राजभाषा विभाग से सम्पर्क करने के लिए कहा गया। बैठक में क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय भोपाल, के अनुसंधान अधिकारी, राजभाषा विभाग के प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित थे। उन्होंने कहा कि हिंदी पत्राचार, धारा 3(3) के अनुपालन तथा प्रशिक्षण संबंधी मदों में अगली बैठक में कुछ सुधार दिखाई देना चाहिए।

भिलाई इस्पात संयंत्र के अनुसंधान एवं नियंत्रण प्रयोगशाला में राजभाषा समन्वय समिति की बैठक

अनुसंधान एवं नियंत्रण प्रयोगशाला में विभागीय राजभाषा समन्वय समिति की दिनांक 17.8.96 को प्रथम बैठक सम्पन्न हुई।

बैठक की अध्यक्षता करते हुए श्री एम एन ठाकुर, उप महाप्रबंधक प्रभारी ने अपने सम्बोधन में कहा कि हम सबने यह तय कर लिया है कि आर॰सी॰एल॰ में भी राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार को एक अभियान का रूप दिया जाए। आर॰ सी॰ एल॰ में यद्यपि संवाद एवं पारस्परिक सम्प्रेषण तथा विचार-विमर्श में हिन्दी का ही प्रयोग होता है परन्तु लेखन में हिन्दी को किसी प्रकार प्रतिष्ठित किया जाये, इसी उद्देश्य पर विचार करना जरूरी है। हिन्दी में काम करना अब सम्मानजनक हो गया है। तकनीकी कार्यों में भी हिन्दी का प्रयोग बढ़ रहा है, अतः आर॰ सी॰ एल॰ में भी इसे स्वीकारने में कोई बाधा नहीं है। प्रारंभिक दौर में यद्यपि कठिनाइयां अवश्य हो सकती है परन्तु कालान्तर में हिन्दी में काम करना सरल व सहज हो जायेगा। श्री ठाकुर ने हिन्दी कार्य को "राष्ट्रीय दायित्व का एक अंग" स्वीकार करने की आवश्यकता पर जोर देते हुए कहा कि बिना किसी प्रोत्साहन के भी हम सबको हिन्दी में काम करना चाहिए।

उप महाप्रबंधक श्री कृष्ण कुमार शर्मा ने कहा कि जहां अपनी भाषा के उपयोग से हम अपेक्षित कार्य को उत्तम गुणवत्ता के साथ सम्पन्न करवाते है, वहीं स्वाभाविक रूप से सबकी भागीदार कार्य सम्पादन करने में मिलती है।

प्रबंधक (राजभाषा), डा॰ गिरीश जीत सिंघु ने उन बिन्दुओं की चर्चा की जहां से हिन्दी में कार्यों को प्रारंभ किया जा सकता है। हिन्दी कार्य करने पर प्रबंधक द्वारा उपलब्ध कराई गई विभिन्न प्रोत्साहन योजनाओं की जानकारी भी सदस्यों को दी। उन्होंने कहा कि तकनीकी शब्दों को हिन्दी में यथावत लिखने तथा स्वीकार करने से अभिव्यक्ति प्रभावी हो जाती है। हिन्दी को जटिलता के बंधनों से मुक्त करना होगा।

भिलाई इस्पात संयंत्र

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, भिलाई दुर्ग की तीसरी बैठक दिनांक 31.7.96 को अध्यक्ष एवं कार्यकारी प्रबंध निदेशक श्री विनोद कुमार सिंह की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई।

अध्यक्ष श्री विनोद कुमार सिंह ने स्पष्ट रूप से कहा कि कई लोग यह कहते है कि हम हिंदी की सेवा कर रहे हैं। परन्तु वास्तव में देखा जाय तो हम हिन्दी का प्रयोग कर अपनी सेवा कर रहे हैं। हिन्दी के प्रयोग से दूसरे व्यक्ति को काम के बारे में हम सही समझते है, उसकी भागीदारी बढ़ती है। और इसके साथ ही कार्य समय से पूर्व गुणवत्ता के साथ सम्पन्न हो जाता है इसलिए जरूरी है कि हम सभी संस्थान हिन्दी को अपनी कार्यशैली का अंग बनाएं। वास्तविकता तो यह है कि हिन्दी में काम करना बहुत सरल है। अपने देश में ही कई राज्यों में पूरा काम हिन्दी में हो रहा है जिसमें हिन्दीतर भाषी बड़े उत्साह से योगदान दे रहे हैं। उन्होंने सोचा और इसे कर दिखाया। आज कम्प्यूटर पर हिन्दी शब्द संसाधन का उपयोग कर हिन्दी में काम किया जाना, हिन्दी का प्रयोग बढ़ाना बहुत सरल हो गया है। अब वातावरण बनाइये— हिन्दी अपने आप बढ़ेगी। ▭

☐ **राजभाषा सम्मेलन/संगोष्ठियां**

आठवां अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन, कोवालम (केरल)

राष्ट्रीय हिन्दी अकादमी रूपाम्बरा, कलकत्ता द्वारा दिनांक 25-26 फरवरी, 1996 को 'आठवां अखिल राजभाषा' सम्मेलन का आयोजन केरल में किया गया केरल के राज्यपाल महामहिम श्री पी॰ शिव शंकर ने अपने संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित उद्बोधन में राजभाषा प्रेमियों का आह्वान करते हुए कहा कि देश की भाषा समस्या का आदान-प्रदान के माध्यम से हल निकाला जाना चाहिए। केरल बहुभाषी मानसिकता वाला प्रदेश है। "मलयालम" के मलय समीर की धरती पर राजभाषा प्रेमियों का स्वागत करते हुए महामहिम ने सबकी भलाई के लिए राष्ट्र के हित में सक्रियात्मक निर्णय लेने का आह्वान किया।

राष्ट्रगान, स्वागतगान और दीप प्रज्वलन के बाद, राष्ट्रीय हिन्दी अकादमी के अध्यक्ष श्री स्वदेश भारती ने कहा कि केरल हिन्दी प्रचार सभा ने गंगा-वासियों को अरब सागर के जल से भगवान पद्मनाभ के चरणों को पखारने का अवसर प्रदान किया। देश की परम्परा और संस्कृति को भाषा के माध्यम से ही अक्षुण्ण रखा जा सकता है, उसका विकास किया जा सकता है। भाषा हमारी मां तथा साहित्य "जनक" है और बिना जनक-जननी के कोई संस्कृति पनप नहीं सकती, आगे नहीं बढ़ सकती। यदि संविधान सम्मत 18 भारतीय भाषाओं के बीच समरसता का व्यापक आदान-प्रदान नहीं हुआ तो हम अन्दर के साथ-साथ बाहर से भी टूट जाएंगे। हम आदि संस्कृति के प्रतीक हिमालय से निकली नदियों से सागर के चरणों को धोते हैं। हमें एक ऐसा मार्ग निकालना है जिससे एक राजभाषा/राष्ट्रभाषा के लिए 18 भाषाओं में एकात्मभाव को जागृत कर सकें। श्री भारती ने कहा कि हिन्दी को आंकड़ों की राजनीति के चक्रव्यूह से बाहर निकाला जाए।

राष्ट्रीय हिन्दी अकादमी के मानद अध्यक्ष, प्रखर राजभाषा सेवी डा॰ रत्नाकर पाण्डेय ने अपनी ओजस्वी वाणी में राष्ट्रीय हिन्दी अकादमी की उन उपलब्धियों का उल्लेख किया जिनके अन्तर्गत नेपाली, मणिपुरी और कोंकणी को संविधान की आठवीं अनुसूची में स्थान मिला और तत्कालीन केन्द्रीय मंत्री (वर्तमान राज्यपाल) के योगदान का संकेत भी दिया। जिस आदि गुरु शंकराचार्य ने मानवता को नई दिशा दी, उसी आदि गुरु की धरती से राजभाषा हिन्दी को भी नई दिशा, एक नया उत्साह, एक नया प्रेरक मार्ग मिलेगा। राजभाषा हिन्दी के संबंध में केरल की नीति का उल्लेख करते हुए डा॰ रत्नाकर पांडे ने बताया कि इस प्रदेश में कक्षा 5वीं से कक्षा दसवीं तक हिन्दी अनिवार्य रूप से पढ़ाई जाती है। स्वाधीनता के बाद से यहां अनेक सरकारें बदलीं, लेकिन सभी ने इस हिन्दी नीति को

अक्षुण्ण रखकर राष्ट्रीयता को भरपूर सम्मान दिया। हमें भाषा संस्कृति की मात्र चर्चा नहीं करनी है बल्कि कुछ सार्थक कार्य करना है। डा० पांडेय ने सुझाव दिया कि मलयालम अकादमी की तरह यहां "मलयालम-हिन्दी अकादमी" की स्थापना कर नए समताभाव के युग का सूत्रपात होना चाहिए जिससे मलयालम साहित्य हिन्दी में और हिन्दी साहित्य मलयालम में उपलब्ध हो सके। इस संदर्भ में कोई अधिक संकोच/बाधा नहीं आनी चाहिए। अब समय आ गया है कि राष्ट्रीयता, देश-प्रेम और अखण्डता के लिए कमर कसना होगा।

हिन्दी, संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान, नवभारत टाइम्स के पूर्व सम्पादक डा० विद्यानिवास मिश्र ने कहा कि राष्ट्रीय हिन्दी अकादमी बिना किसी दबाव, सहयोग, सहमति और मित्रता से काम करती है। इनकी मित्रता अब संक्रामक हो गई है। भारतवर्ष में साहित्य की मूल धारा एक जैसी है। साहित्य मे निरन्तर संवाद की स्थिति बनाए रखनी चाहिए। डा० मिश्र ने शंकराचार्य तथा केरल के अनेक लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यकारों का स्मरण करते हुए कहा कि इस भूमि पर आना अपने आप में ही प्रेरणास्पद है। इस भूमि के मनुष्य का पुरुषार्थ—समुद्र से छीनना है और यही पुरुषार्थ हमें सीखना है। महाकवि कालिदास के श्लोकों को उद्धृत कर समुद्र-तट की महिमा का वर्णन करते हुए गतिशीलता की अद्‌भुत अवधारणा को राष्ट्र भाषा हिन्दी की उस विशालता से जोड़ दिया जो "स्वदेशी" मन बनाने का काम करती है। हिन्दी दूसरी भारतीय भाषा को पराया नहीं मानती। उसकी उन्नति, उसका स्पन्दन असम तक और असम का स्पन्दन यहां आ रहा है। वातावरण परिवेश, अलग मानव मन की आंतरिक समस्याओं के समान है। मनुष्य के सहज धर्म को आगे लाना प्रत्येक साहित्य का मूल है। लेखक, साहित्यकार, कलाकार को किसी प्रांत तक नहीं बंधना चाहिए। हमारा हर्ष, उत्कर्ष, चिन्ता, चिन्तन संकुचित नहीं बल्कि समुद्र की लहरों की भांति विशाल होना चाहिए।

भारत में पोलैंड के राजदूत प्रो० वृस्की ने संस्कृत श्लोक का पाठ किया और उपस्थित समुदाय को हिन्दी भक्त निरुपित कर सबका मन मोह लिया। पुरस्कार लेने, देने से अपनी बात प्रारम्भ करते हुए कहा कि यदि पुरस्कारों से प्रेरणा मिलती है तो हमें हिन्दी के लिए ज्यादा प्रयत्नशील रहना चाहिए। पुरस्कार प्राप्तकर्त्ताओं पर जो भरोसा किया जा रहा है उसे विफल नहीं होना चाहिए। जिस भाषा के लिए जिस भाषा के नाम पर हम यहां इकट्ठे हुए हैं उसकी सेवा करना हमारा दायित्व है। प्रो० बृस्की ने भाषा संबंधी अनेक उदाहरण दिए। उन्होंने कहा कि भाषा एक खजाने की कुंजी है। जो भाषा, निःसंदेह हिन्दी, विश्व भाषा का स्तर पाना चाहती है उसे अन्य भाषाओं के खजाने को भी समाहित करना चाहिए। सभी भारतीय भाषाओं की संपदाएं इसमें मिल जाएं, प्रत्येक अंचल की जानकारी हिन्दी में होनी चाहिए। हिन्दी ऐसी चमकदार कुंजी बन जाए कि सब इसकी ओर आकर्षित हों। मलयालम के चन्द शब्द बोलकर प्रो० वृस्की सबकी चाहत के केन्द्र बिन्दु बन गए।

राजभाषा विभाग के सचिव श्री चन्द्रधर त्रिपाठी जी ने कहा कि आजादी के 48 वर्ष बाद भी पूछा जाता है कि हिन्दी को राजभाषा क्यों बनाना है? आज इस प्रश्न का कोई औचित्य नहीं है, वह तो पहले से ही राजभाषा बनी हुई है। किसी भी केन्द्रीय सरकारी कमरचारी को यह सवाल पूछने से पहले सरकारी नौकरी से इस्तीफा देना चाहिए। आपने मद्रास रेल विभाग के हिन्दी निरीक्षण के दौरान हुए अनेक संस्मरण सुनाकर उपस्थित जन-समुदाय को प्रेरित किया। श्री त्रिपाठी जी ने कहा कि हिन्दी के विरोध में यदा-कदा उभरने वाले स्वर राजनीति से प्रेरित हैं।

शुभारम्भ सत्र पर आभार व्यक्त करते हुए केरल हिन्दी प्रचार सभा के श्री बालकृष्ण पिलै ने कहा कि राजनीतिक इच्छा शक्ति का अभाव इस दिशा में सबसे बड़ी बाधा है। उन्होंने कहा — पोलैण्ड के विद्वान राजदूत प्रो० वृस्की ने संस्कृत, हिन्दी और मलयालम में अपने विचार व्यक्त कर सबको मुग्ध कर यह प्रेरक संदेश दिया कि हमें अपनी भाषाओं का साधिकार ससम्मान प्रयोग करना चाहिए।

शुभारम्भ सत्र के दौरान केरल के राज्यपाल महामहिम श्री पी० शिवशंकर ने पोलैण्ड के भाषाविद् और भारत में राजदूत प्रो० वृस्की, केरल हिन्दी प्रचार सभा के प्रधान सचिव श्री वेलायुधन नायर, मलयली-हिन्दी लेखक अनुवादक श्री सुधांशु चतुर्वेदी, हिन्दी-सेवी, कवि श्री रुक्माजी राव "अमर" को राष्ट्रभाषा रत्न राष्ट्रीय सम्मान से अलंकृत किया। बैंक नोट मुद्रणालय, देवास के उप महाप्रबन्धक श्री टी०के० रामास्वामी को "बैनोप्रिन" पत्रिका के बेहतर प्रकाशन हेतु श्रेष्ठ पत्रिका प्रकाशन शील्ड से महामहिम राज्यपाल ने सम्मानित किया। भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण, नई दिल्ली, भारतीय निर्यात ऋण गांरटी निगम, भारतीय इस्पात प्राधिकरण, पावर ग्रिड कार्पोरेशन ऑफ इंडिया को राजभाषा शील्ड से सम्मानित किया गया। इसी अवसर पर भारतीय इस्पात प्राधिकरण के कार्यालयीन भाषा-कोश (सं० श्री मनमोहन चन्द्र मिश्र) का महामहिम राज्यपाल महोदय ने लोकार्पण किया तथा राष्ट्रीय हिन्दी अकादमी की स्मारिका का लोकार्पण प्रो० वृस्की ने किया।

दूसरे सत्र में कार्यालयीन भाषा, राजभाषा की समस्याएं, कठिनाइयां और समाधान आदि पर खुला सत्र आयोजित किया गया। डा० रत्नाकर पाण्डे, श्री स्वदेश भारती, साहित्यकार डा० बालशौरि रेड्डी के साथ-साथ बैंक नोट मुद्रणालय देवास के विभागाध्यक्ष एवं उपमहाप्रबंधक श्री टी० के० रामास्वामी भी विशेष रूप से मंचासीन थे।

विषय प्रवर्त्तन करते हुए श्री स्वदेश भारती ने कहा कि ऐसा माना जाता है कि हिन्दी अधिकारी एक निरीह प्राणी होता है और कार्यपालक, प्रबंधक से 3-4 सीढ़ी नीचे रहता है। वह न तो आक्रोश व्यक्त कर पाता है और न ठीक से कार्य कर पाता है। जब तक वरिष्ठ कार्यपालक सहृदयता से काम नहीं लेंगे तब तक राजभाषा अधिकारी में हताशा की भावना रहेगी और राजभाषा अधिनियम का उल्लंघन होता रहेगा। 1976 के नियमों के अन्तर्गत हम कब तक धारा 3(3) के कागजातों, रबर की मोहरों और नामपट्ट की द्विभाषिकता/त्रैभाषिकता पर अटके रहेंगे। हमें समस्त अन्तर्विरोधों के बावजूद लक्ष्य बनाकर आगे बढ़ना है। निःसंदेह राजभाषा कार्य मंथर गति से हो रहा है। हमे इसकी गति को तीव्र करना होगा। हिन्दी अधिकारी, राष्ट्रीय अस्मिता और एकता से जुड़ा इस राष्ट्र का सच्चा सिपाही है। उसे सम्मानित स्थितियां उपलब्ध कराना है।

विशिष्ट अतिथि के रूप में अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए बैंक नोट मुद्रणालय, देवास के उप-महाप्रबन्धक श्री टी० के० रामास्वामी ने कहा कि आजादी के 50 वर्ष पूरे होने वाले हैं लेकिन हम अभी तक राजभाषा के मार्ग और प्रवाह को सुगम नहीं बना पाए हैं। इसके मार्ग में निःसंदेह अनेक कठिनाइयां हैं। परेशानियां हैं। लोगों की हिन्दी में कार्य करने संबंधी हिचक और झिझक को दूर करने के लिए कुछ अच्छी व्यवहारिक सार्थक सिफारिशें करनी होंगी। निर्णय लेने होंगे। हिन्दी का कार्य राष्ट्र का कार्य है।

लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यकार डा० बालशौरि रेड्डि ने कहा कि 48 वर्ष बाद भी राजभाषा कार्यान्वयन की चर्चा किसी भी राष्ट्र के लिए स्वाभिमान की

बात नहीं है। समय बीतने के साथ-साथ राजभाषा की स्थिति जटिल होती जा रही है। मातृभाषा हिन्दी में वोट मांगने वाले संसद में अंग्रेजी इस्तेमाल करने लगते हैं। हिन्दी में अक्षमता की बात करना बेमानी है, हिन्दी सक्षम और सार्थक है। अंग्रेजी का वर्चस्व हटाने के लिए श्री रेड्डी ने सुझाव दिया कि कुछ समय तक हिन्दी का विरोध करने वाले क्षेत्रों में हिन्दी के साथ अंग्रेजी अनुवाद के स्थान पर तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम का अनुवाद किया जाए। अन्यथा राजभाषा मात्र अनुवाद की भाषा बनकर रह जायेगी।

भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण, नई दिल्ली के श्री मंगतराम धसमाना ने कहा कि तिमाही रिपोर्ट में प्रारूप में सुधार करने की जरूरत है। हिन्दी में प्रशिक्षित व्यक्तियों से काम लिया जाना चाहिए। भारत सरकार की सुविधाएं सभी को समान रूप से मिलनी चाहिएं।

भारतीय औद्योगिक विकास बैंक के श्री विश्वनाथन ने निजीकरण और लाभप्रदता के दौर में हिन्दी को भी लाभप्रदता से जोड़ने की अपनी नीति (कूट/रण) बदलकर हम जरूर कामयाब होंगे। द्वितीय सत्र की चर्चा को विराम देते हुए सत्राध्यक्ष, डा० रत्नाकर पाण्डे ने कहा कि राजभाषा नियम-अधिनियम सभी कुछ होते हुए भी स्पष्ट नहीं कि हम क्या चाहते हैं। दमन को अनन्तकाल तक चलाने का एक षडयंत्र है। अपनी चिरपरिचित ओजस्वी वाणी में डा० पाण्डे ने कहा कि हिन्दी संस्कृति से जुड़ी है। सृष्टि के अन्त तक रहेगी। कितनी विडम्बना है कि हम एकता की भाषा को प्रतिशत में बांट रहे हैं। भारत सरकार के विभिन्न संस्थानों से काफी संख्या में पत्र-पत्रिकाएं निकल रही हैं, इसमें प्रकाशित काफी रचनाएं, व्यावसायिक रचनाओं की तुलना में बहुत सार्थक और समीचीन हैं। बड़े-बड़े अधिकारियों को राजभाषा का ज्ञान नहीं है। अन्य अधिनियमों की भांति राजभाषा अधिनियम का पालन होना चाहिए। हिन्दी के लिए वित्तीय संकट आ जाता है। महाकवि नेपाली की कविता को उद्धृत करते हुए कहा कि "दो वर्तमान को सत्य सरल सुन्दर भविष्य के सपने दो।" तीसरे सत्र में भारतीय इस्पात प्राधिकरण के श्री मनमोहन चन्द्र मिश्र ने राजभाषा अधिकारियों की प्रबंधकीय भूमिका के संदर्भ में कहा कि गुणवत्ता हिन्दी में विशेषकर अनुवाद के क्षेत्र पर लागू होती है। अनुवाद की क्लिष्टता के संबंध में मिश्र जी ने कहा कि कोई शब्द कठिन नहीं होता बल्कि हमारी उससे परिचितता, अपरिचितता इस स्थिति को जन्म देती है। भाषा में सम्प्रेषणीयता सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। कार्यान्वयन हेतु हमें कार्यनीति, सुनियोजित योजना बनानी होगी। हमें अपनी शक्तियों, कमजोरियों को पहचानकर भावी अवसरों का आभास होना चाहिए तभी लक्ष्यों को प्राप्त कर पाएंगे। श्री मिश्र जी ने राष्ट्रीय हिन्दी अकादमी को राजभाषा कार्यान्वयन संबंधी डिप्लोमा स्तर का हिन्दी पाठ्यक्रम चलाने का सुझाव दिया। मध्य प्रदेश के अपर संचालक—जन सम्पर्क तथा मुख्य मंत्री के प्रेस अधिकारी श्री राजेन्द्र जोशी ने कहा कि उद्देश्यकी गरिमा शाश्वत रहनी चाहिए। देश हमारा और समस्याएं भी हमारी हैं। समस्याएं हम ही पैदा करते हैं, और हमें ही इन्हें सुलझाना है। भाषा दिल और दिमाग से जुड़ी है, इसके लिए हमें वही नीति अपनानी होगी जो बिनोवाजी ने भूदान हेतु अपनायी थी।

सेवा में आते समय प्रत्येक स्तर के कर्मचारी की यह प्रतिबद्धता रहनी चाहिए कि वह राजभाषा में काम के प्रति वचनबद्ध हो, उसी में काम करेगा। इससे सार्थक रूप में बल मिलेगा। बैंक मुद्रणालय, देवास के डा० आलोक रस्तोगी ने सुझाव दिया कि सबसे पहले हमें अहिन्दी भाषी शब्दों का प्रयोग बन्द कर देना चाहिए और इसके स्थान पर हिन्दीतर भाषी या भाषा-भाषी शब्द का प्रयोग करने से भारतीयता की भावना को बल मिलता है। इलेक्ट्रानिक उपकरणों से मानक कुंजीपटल का अभाव भी हमारा मार्ग अवरुद्ध करने में प्रेरक भूमिका निभा रहा है। अधीनस्थ कार्यालय के हिन्दी अधिकारियों और अन्य कर्मियों को पिछले 15-20 वर्षों से पदोन्नति न मिल पाने तथा उनके भविष्य पर प्रश्न चिन्ह ने भी हमारे सम्मुख कठिनाइयां उत्पन्न कर दी हैं। जब बैंकों, उपक्रमों, निगमों, मंत्रालयों एवं विभागों के राजभाषा कर्मियों को 15 वर्ष में 2-3 पदोन्नति मिल सकती है तब अधीनस्थ कार्यालय के राजभाषा कर्मियों के साथ भेदभाव क्या अन्याय नहीं है? डा० रस्तोगी ने विभिन्न परीक्षाएं उत्तीर्ण करने पर 12 माह तक के लिए वेतनवृद्धि को अपर्याप्त बताते हुए यह सुझाव दिया कि वेतनवृद्धि पूरे सेवाकाल के लिए तब तक दी जाए जब तक संबंधित अधिकारी/कर्मचारी अपना काम नियमित रूप से हिन्दी में करता रहे, विपरीत स्थिति में यह अग्रिम वेतन वृद्धि वापस ली जा सकती है। इसके अतिरिक्त राजभाषा नियम, निजी फर्मों पर लागू नहीं होते। वर्तमान दौर में विभिन्न मशीनों, कलपुर्जों, रसायनों तथा आधारभूत कच्ची सामग्री के लिए तथाकथित सामग्री खरीदने वाले अनुभाग भी अपनी सुविधा को देखते हुए अंग्रेजी में पत्राचार करना चाहते हैं। ऐसी स्थिति में शत-प्रतिशत पत्राचार का लक्ष्य कैसे प्राप्त किया जा सकता है? यह एक विचारणीय बिन्दु है। श्री बालकृष्ण नीमा (भारत हैवी इलेक्ट्रिकल्स लि०, भोपाल) ने कहा कि राजभाषा हिन्दी का कार्य आन्तरिकता तथा सेवाभाव से जुड़ा होना चाहिए। श्री राजीव सिंह ने भी कार्यान्वयन संबंधी पाठ्यक्रम से सहमति व्यक्त करते हुए पत्राचार माध्यम को अपनाने का प्रस्ताव किया तथा वरिष्ठ कार्यपालकों को राजभाषा नीति और कार्यान्वयन पक्ष से अवगत कराने के लिए एक या दो दिवसीय प्रशिक्षण दिया जाए। हिन्दी में अधिकाधिक कार्य करने वालों को यथोचित सम्मान देना, दिलाना चाहिए। राजभाषा के विषय में अपने विचार व्यक्त करते हुए पोलैण्ड के राजदूत प्रो० बृस्की ने कहा कि वह यहां राजदूत के रूप में नहीं बल्कि भारतीय संस्कृति के अध्येता और हिन्दी भक्त के रूप में उपस्थित हैं। भाषा के रूप के बारे में अपनी दो टूक राय व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा कि भारत में सम्पर्क भाषा हिन्दी संस्कृति नष्ट ही हो सकती है। चालू भाषा नहीं। लक्ष्य सर्वोत्तम होना चाहिए और बाकी सबको उसका पालन करना चाहिए।

पश्चिम में लागू "समता नियम" को हम भाषा के क्षेत्र में अपनाना चाह रहे हैं। भाषा के कला का नियम लागू होना चाहिए। अकादमी को उन स्थानों पर विशेष ध्यान देना चाहिए जहां भाषा का संस्कार किया जा सकता है। हम पानी का शुद्धिकरण स्त्रोत से कहते हैं। अनुवाद के बारे में प्रो० बृस्की ने कहा कि हिन्दी में अपने आप में ऐसी क्षमता विकसित करनी चाहिए जिससे हर तरह, हर भाषा का ज्ञान उसमें मिल सके। अंग्रेजी से पहले हर नया ज्ञान हिन्दी में उपलब्ध होने से हिन्दी का मान स्वमेव बढ़ जायेगा। रूसियों ने भी इस क्षेत्र में अग्रता प्राप्त कर तकनीकी विकास किया। पावर ग्रिड कारपोरेशन आफ इंडिया के उप-महाप्रबंधक श्री पी० के० धर ने पूर्वोत्तर क्षेत्र में हिन्दी का वातावरण बनाने के लिए उस क्षेत्र में हिन्दी सम्मेलन आयोजित करने का सुझाव दिया। उन्होंने राजभाषा सम्मेलनों की गुणवत्ता पर प्रकाश डाला और उन्हें उपयोगी बताया। मैसूर हिन्दी संस्थान के प्रभारी डा० कृष्णकुमार गोस्वामी ने कहा कि अब हिन्दी केवल साहित्य तक सीमित नहीं है। आज 118 विश्वविद्यालयों/कालेजों में कामकाजी/प्रयोजनमूलक हिन्दी पढ़ाई जा रही है।

तीसरे दिन भाषा, संस्कृति और राष्ट्रीयता: भारत तथा विदेशों में हिन्दी का विकास एवं प्रचार-प्रसार सत्र लम्बा चला। विदेशों में हिन्दी में चर्चा के लिए प्रो० बृस्की ने विषय का प्रवर्तन करते हुए कहा कि आशान्वित रहना बहुत जरूरी है। शब्द और संस्कृति का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि भाषा-शब्द संस्कृत संस्कृति के बिना नहीं हो सकती और संस्कृति भाषाहीन नहीं हो सकती। संस्कृति हमारी अस्मिता को स्थापित करेगी। शब्द, भाषा, संस्कृत और संस्कृति में जब तक पूरी तरह परिपक्व नहीं होंगे, हम स्वयं को नहीं समझ पाएंगे और

स्वयं को समझे बिना विदेशों में क्या कर पाएंगे। विदेशों में हमारे साथ कैसा व्यवहार होगा? पहले स्वयं को समझिये, उस पर गर्व कीजिए। भाषानिष्ठ संस्कृति के साथ विदेशों में जाइए। यदि हम चाहते हैं कि वर्तमान हिन्दी, हमारी प्राचीन भाषा संस्कृति की भूमिका निभाए तब हिन्दी भाषा-भाषी जगत को हिन्दी की दुनिया में इस तरह छोड़ देना चाहिए जिस तरह मां-बच्चे का पालन-पोषण कर वयस्क बना और यथार्थ स्थिति का सामना करने के लिए छोड़ देती है। उर्दू तथा उत्तरी भारत की विभिन्न आंचलिक बोलियों के शब्दों की बहुलता से हिन्दी दक्षिण भारतीयों के लिए दुरूह बन जाती है। यदि हिन्दी को अखिल भारत/विश्व की भाषा बनाना है तो इसमें संस्कृत सम्मत/शब्दों को अधिक अपनाना होगा, क्योंकि दक्षिण भारतीय भाषाएं बंगला आदि भी संस्कृत के निकट हैं। इससे हिन्दी स्वमेव अखिल भारतीय भाषा हो जाएगी और शब्द सम्पदा में भी कोई कमी नहीं रहेगी। सुपरिचित लेखिका सुश्री मणिका मोहिनी ने गुयाना में व्यतीत तीन वर्षों के स्मरणों के साथ दूरदर्शन और जी०टी०वी० के कार्यक्रमों/समाचार बुलेटिनों में हिन्दी की दुर्दशा का उल्लेख किया। 1991 के एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत और आयरलैंड में ब्रिटेन के बाद अंग्रेजी सर्वाधिक व्यवहृत होती है। हिन्दी वालों की अंग्रेजी के प्रति मानसिक गुलामी पता नहीं कब तक चलेगी। राजस्थान के जनसम्पर्क निदेशक श्री आशुतोष गुप्ता ने हिन्दी की विकास यात्रा का उल्लेख करते हुए इस आवश्यकता की ओर बल दिया कि हमें नियमित क्षेत्रों तथा उद्योगों की भाषा की ओर भी ध्यान देना है। हिन्दी प्रचार-प्रसार में व्यय की जाने वाली राशि आयकर मुक्त होनी चाहिए। हिन्दी को विश्व भाषा बनाने के लिए उसे उद्योगों की भाषा बनाना जरूरी है। राष्ट्रीय हिन्दी अकादमी के सचिव डा० शंकरलाल पुरोहित ने कहा कि भाषा कल्पवृक्ष है इससे जो मांगो वही मिल जाता है। दुःख इस बात का है कि हम आज भाषा से क्या मांग रहे हैं। उसे चोली, खटिया तक खींच लाए हैं। बींसवी सदी के अन्त में भोगवादी हमें कहां ले जाएंगे। हम भोगवादी थे लेकिन पतनोन्मुख तो नहीं थे। भाषा के कल्पवृक्ष के छत से बरसती संस्कृति न मांगों। अंग्रेजी की जूठन को राजभाषा बनाकर मेरे भाई गर्व न करो। केरल के हिन्दी साहित्यकार श्री विश्वनाथ अय्यर ने केरलीय मसालेदार हिन्दी में कहा कि हिन्दी के लिए कभी भी कुछ भी किया जाए लाभ अवश्य मिलेगी। हिन्दी में पर्यटन विवरण देने वाली पुस्तकों का प्रायः अभाव है। पर्यटन मंत्रालयों को इस दिशा में काम करना चाहिए। हिन्दी के कथा साहित्य में हिन्दीतर पात्रों का अभाव है। हिन्दीतर क्षेत्रों के पात्रों को अपनाकर हिन्दी आगे बढ़ेगी। हिन्दीतर प्रदेशों की राजधानियों में राजभाषा हिन्दी संबंधी कार्यक्रम/संबंधित प्रदेशों में साहित्यकारों के साथ किए जाए।

गांधीवादी विचारक, साहित्यकार, महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा के उपाध्यक्ष 80 वर्षीय श्री प्रभाकर द० पुराणिक ने कहा कि भावात्मक एकता केवल कहने से नहीं आएगी बल्कि हिन्दी और सरकार की जागृति के लिए सत्याग्रह जरूरी है। संत तुकाराम ने शक्त शक्ति के लिए कहा कि शब्द हमारे जीवन को प्रेरित करते हैं। भाषा-संस्कृति संरक्षण शक्ति है। किसी शब्द को लोकप्रिय और प्रचलित करने के लिए कुछ समय तक कोष्ठक में अंग्रेजी शब्द दिया जा सकता है। आपने टी०वी० के प्रदूषण से परिवार को बचाने का भी आव्हान किया। सुयोग्य समीक्षक नाटककार डा० एन० चन्द्रशेखरन नायर ने अपनी बात प्रारम्भ करते हुए कहा कि हिन्दी मेरे लिए स्वभाषा है। और हिन्दी का अध्ययन उस समय किया था जब केरल में हिन्दी का कोई वातावरण नहीं था। गांधीजी के संदेश को अपनाकर अनेक कष्ट सहकर संस्कृति की वाहिका, समस्त भारत की जिह्वा अर्थात हिन्दी का अध्ययन किया। सम्पूर्ण विश्व में राष्ट्रभाषा हिन्दी की धाक है लेकिन राजभाषा हिन्दी की स्थिति क्या है? हमारे देश के उच्च पदाधिकारी हिन्दी को न केवल उसका स्थान देने में सकुचाते हैं बल्कि उसे हेय दृष्टि से देखते हैं। इस संबंध में अनेक उदाहरण देते हुए डा० नायर ने कहा कि अपने हित के साथ देशहित की सोचने वाले हिन्दी को अपनाने में पीछे नहीं रहते। यह देश एक है, इसकी भाषा एक है। उत्तर हो या दक्षिण, सभी इसी भाषा को गर्व से और गौरव के साथ अपनाएं तभी यह देश की भाषा बनेगी। यदि हम हिन्दी के प्रति निष्ठा व्यक्त नहीं करते तो पिछड़ जाएंगे। राष्ट्रीयता की दौर में हमारा स्थान कहां होगा। हमारी एक भाषा बनी है उसे इसका स्थान पद दीजिए।

राष्ट्रीय हिन्दी अकादमी के अध्यक्ष श्री स्वदेश भारत ने कहा कि इस सत्र में संगोष्ठी के विषय चिंतनीय और गहन दायरे के है। हमारी नदियां गंगा, यमुना जिस मार्ग से प्रवाहित होती है वहां की भाषा भी सृजित करती जाती है और उन सभी भाषाओं का स्वर लगभग एक है। इस तरह गोदावरी, कृष्णा, कावेरी भी जिस मार्ग से बहती हैं, उसकी भाषा को समान आत्मा, स्वर देती चलती है। समस्त नदियों का अन्तिम पड़ाव सागर है। कन्याकुमारी में तीनों सागर मिलते हैं, इसी संगम स्थल पर हम सभी भाषायी नदियों का संगम कराने और एक स्वभाव, एक राजभाषा और एक राष्ट्रभाषा को निष्ठा, गौरव के साथ अपनाने, भावनात्मक एकता को पल्लवित कर समस्त मानव के शुभ/आनंद को समाहित करने की आकांक्षा लिए आए हैं और आशा है कि भगवान पद्मनाम हमारी इस आशा को शीघ्र पूर्ण करेंगे।

डा० रत्नाकर पांडेय ने सत्र समापन करते हुए कहा कि काठमांडू सम्मेलन का यह सार्थक परिणाम है कि हिन्दी को नेपाली की 10 श्रेष्ठ पुस्तकें तथा नेपाली को 10 हिन्दी श्रेष्ठ पुस्तकें संबंधित भाषाओं को मिली। आदि गुरु शंकराचार्य की इस भूमि ने एक बार सारे देश को जोड़ दिया है। केरल का साहित्य बहुत समृद्ध है। केरल से प्राप्त इस स्नेह और सहयोग से राष्ट्रीय हिन्दी अकादमी मलयालम की 5 श्रेष्ठ पुस्तकों को हिन्दी में तथा 5 हिन्दी की श्रेष्ठ पुस्तकों को मलयालम में अनुवाद कराएगी। राजभाषा विभाग को यह आदेश देना चाहिए कि हिन्दी साहित्य के पाठ्यक्रमों में हिन्दीतर क्षेत्रों के विद्वानों की रचनाएं भी शामिल होनी चाहिए। त्रिदिवसीय इस साधना का फल हमें अवश्य मिलेगा। केरल हिन्दी प्रचार सभा ने हमारी लघुता को विराटता दी। डा० पाण्डेय ने आगे कहा कि हम कब तक हिन्दी सप्ताह/पखवाड़े मनाते रहेंगे। जनभाषा को उसका स्थान देने में आनाकानी करते रहेंगे। गंगा, यमुना का कृष्णा-कावेरी से संगम कराकर हमें सम्पूर्ण भारतीयता संस्कृति को एक आत्मा देनी है। जिस तरह केरल में 6-10 कक्षा तक हिन्दी अनिवार्य है उसी तरह उत्तर भारत में दक्षिण की भाषा पढ़ाने की व्यवस्था होनी चाहिए। नैतिक मूल्यों के पतन रुकने पर ही मानवीय मूल्यों की पुनर्स्थापना होगी। हम सब एक हों, दिल से दिल मिले, राष्ट्र प्रगतिशील हो और राष्ट्रीय प्रगति में हमारा अधिकतम योगदान हो।

केरल हिन्दी प्रचार सभा के श्री बेलायुधन नायर ने आभार व्यक्त करते हुए कहा कि भाषा के बारे में आजादी के पूर्व हमारी जो भावना थी आज तिरोहित हो गयी है। एक समय था जब अंग्रेजी, उत्तर और दक्षिण दोनों क्षेत्रों के लिए विदेशी भाषा थी और आज की स्थिति में कोई अपरिचित नहीं है (14 सितम्बर को केन्द्र में रखकर हिन्दी सप्ताह/पखवाड़ा बनाने का सुझाव तत्तकालीन प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी को श्री नायर ने दिया था जिसे मान्य किया गया।)

प्रतिभागियों की ओर से श्री राजेन्द्र जोशी (भोपाल) ने आभार व्यक्त करते हुए कहा कि हम अनुभूति, उमंग-उत्साह के साथ जिस प्राप्त की आशा से भाग लेते हैं उसे पाकर आविर्भूत हो जाते हैं। हमें सुखद भविष्य हेतु आशाओं का संचार होता है।

मनोहारी सांस्कृतिक कार्यक्रम

प्रथम दिन शुभारम्भ और प्रथम सत्र की चर्चा के उपरान्त केरल हिन्दी प्रचार सभा के 35 कलाकारों ने केरल की छटा में शुभ श्यामल लहरों की कलकल में लय ताल का अदभुत संगम व्यक्त करते हुए "तिरूवाष नाट्य" प्रस्तुत किया इसे देखकर ऐसा लगा कि मानों समुद्र तट की शुभ श्यामल लहरें और उनके आवेग मंचासीन हो गए हैं।

"भाषा संगम" (18 भाषाओं की नृत्य नाटिका) की प्रस्तुति बहुत मनोहर थी। सीताजी की अग्नि परीक्षा नामक पौराणिक गाथा को दो महिला कलाकारों ने बहुत सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया। सांस्कृतिक संध्या के अंत में भजन प्रस्तुत किया गया।

समापन सत्र में भारतीयता के उपासक प्रो॰ बृस्की ने राजभाषा प्रदर्शनी पुरस्कार, स्वमूल्याकन पुरस्कार तथा स्मृति चिन्ह वितरित किए। राजभाषा प्रदर्शनी पुरस्कार पावर ग्रिड कारपोरेशन आ ॅफ इंडिया लिमिटेड, स्टील अथारिटी आ ॅफ इंडिया लिमिटेड तथा उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान को प्राप्त हुए। स्वमूल्यांकन पुरस्कार सर्व श्री बी॰आर॰ सैनी (स्टील अथारिटी आ ॅफ इंडिया लिमिटेड, नई दिल्ली), श्री मंगतराम धस्माना (नई दिल्ली) तथा बालकृष्ण नीमा (भोपाल) को प्राप्त हुए।

इस संगोष्ठी में भारतीय संस्कृति के अनन्य भक्त भारत में पोलैण्ड के राजदूत प्रो॰ वृस्की राष्ट्रभाषा, राजभाषा हिन्दी और उसके स्वरूप के बारे में अपने स्पष्ट, सुविचरित मत से आकर्षण के केन्द्र बने रहे।

तीन रत्नाकरों की गोद, नारियल वृक्षों की छा ँह, मसालों की सुगंध ने इस सम्मेलन और इसके प्रतिभागियों को मौलिक चिन्तकों के सान्निध्य में ऐसे नए और प्रेरक आयाम दिए जिनसे राजभाषा प्रेमी वर्षों तक दिशा निर्देश पाते रहेंगे।

कवि गोष्ठी

संस्कृति विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय में दिनांक 27.9.96 को आजादी के पचासवें वर्ष के उपलक्ष्य में एक कवि-गोष्ठी का आयोजन किया गया। प्रख्यात आलोजक डा॰ नामवर सिंह ने गोष्ठी की अध्यक्षता करते हुए कहा कि साहित्य सृजन का कार्य महत्वपूर्ण कार्य है। उन्होंने स्वतंत्रता के बाद के साहित्य सृजन पर विस्तार से प्रकाश डाला और कहा कि साहित्यकारों ने इस व्यवस्था के बावजूद जो साहित्य रचा उसकी तारीफ की जानी चाहिए। आज के राजनैतिक माहौल को देखते हुए लगता है कि सन् 1947 से 1964 नेहरू जी का युग स्वर्ण युग कहा जा सकता है। उन्होंने आगे कहा कि इतिहास में दर्द नहीं होता, कविता में दर्द होता है। इतिहास अनुभवों का वर्णन नहीं करता बल्कि कविता अनुभवों का वर्णन करती है। पचास साल के आजादी का सिंहावलोकन होना चाहिए। उनहोंने कहा जिन परिस्थितियों से आज हम गुजर रहे हैं उसको देखकर लगता है कि आजादी के पहले जो सुकून था वह अब नहीं है फिर भी ऊपर देखने से लगता है हमने उन्नति की है।

गोष्ठी में मुख्य अतिथि श्री अशोक वाजपेयी ने कहा कि कविता में वह दर्द व्यक्त होता है जो इतिहास अक्सर छोड़ देता है। नई कविता में हिचक और संकोच नहीं है। कविता का कार्य है कि वह कविता को वहां ले जाए जहां वह न पहुंची हो। कवि गोष्ठी का संचालन संस्कृति विभाग के उप-सचिव तथा संस्कृतिकर्मी कवि एवं चित्रकार श्री शिवनारायण सिंह ने किया।

सर्व श्री मंगलेश डबराल, विनोद भारद्वाज, जोगेन्द्र सिंह, क्षमा कौल, और अनामिका ने अपनी कविताएं सुनाई।

गोष्ठी के आरम्भ में संस्कृति विभाग के उप-निदेशक (राजभाषा) श्री राजेन्द्र सिंह ने संस्कृति विभाग, अधीनस्थ कार्यालयों और स्वायत्त संगठनों में हिन्दी के कार्य की समीक्षा प्रस्तुत की।

दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी

दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी में व्याख्यानमाला का सूत्रपात भूतपर्वू अध्यक्ष स्व॰ शंकर दयाल सिंह द्वारा वर्ष 1994 में हुआ जिसके अंतर्गत देश के मूर्धन्य साहित्यकारों, राजनीतिज्ञों, एवं गांधीवादी विचारकों ने अपने विचारों से लाइब्रेरी के प्रबुद्ध पाठकों को लाभान्वित किया। इसी श्रृंखला की अगली कड़ी में दिनांक 6.9.96 को प्रसिद्ध साहित्यकार श्रीदेवेन्द्र सत्यार्थी का "मैंने पुस्तकालयों से क्या सीखा" विषय पर व्याख्यान दिया। इस अवसर पर सत्यार्थी जी का स्वागत करते हुए दिल्ली लाइब्रेरी बोर्ड की उपाध्यक्ष, प्रो॰ माजदा असद ने कहा कि आप हिंदी जगत के जाने-माने साहित्यकार हैं। पंजाबी, उर्दू और हिंदी तीनों भाषाओं पर आपका समान रूप से वर्चस्व है। हिंदी साहित्य में सत्यार्थी जी का गद्य विधाओं में उल्लेखनीय स्थान है। इसके अतिरिक्त आपने लोकगीत, लोक संस्कृति और लोककथा पर भी काफी कुछ लिखा है। गद्य की विधा रेखाचित्रों में भावात्मक शैली के जन्मदाता आप ही कहे जाते हैं। इसके अतिरिक्त आपने हिन्दी साहित्य की नवीन विधाओं—इण्टरव्यू, रिपोर्ताज़, संस्मरण, आत्मकथा, यात्रा वृतांत आदि पर भी साहित्य की रचना की और आपने कहानी, उपन्यास और निबंध लेखक के रूप में भी काफी ख्याति प्राप्त की।

श्री देवेन्द्र सत्यार्थी, साहित्यकार ने अपने भाषण में पुस्तकों के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि पुस्तकें ही इंसान की सबसे बड़ी मित्र हैं। व्यक्ति इन्हीं पुस्तकों से अच्छे विचारों को ग्रहण करता है और उसे नई-नई बातों की जानकारी होती है। उन्होंने कहा कि जो कुछ हम पुस्तकों से

शेष पृष्ठ 76 पर

केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो के त्रैमासिक अनुवाद प्रशिक्षण पाठ्यक्रम का 91वां सत्र

केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो के त्रैमासिक अनुवाद प्रशिक्षण पाठ्यक्रम का 1 जुलाई, 1996 से 30 सितंबर, 1996 तक आयोजित 91वां सत्र सुचारू रूप से संपन्न हुआ। दिनांक 30.9.1996 को इस सत्र का समापन समारोह आयोजित किया गया। इस समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्री विष्णु प्रभाकर भी पधारे थे। उन्हीं के कर-कमलों से पदक और प्रमाण-पत्र वितरित किए गए। इस सत्र में कुल 56 प्रशिक्षणार्थियों ने प्रशिक्षण प्राप्त किया। इनमें से 13 प्रशिक्षणार्थियों ने उत्कृष्ट स्थान प्राप्त किया। प्रथम स्थान संयुक्त मुख्य विस्फोटक नियंत्रण के आगरा स्थित कार्यालय की श्रीमती श्रावणी गांगुली और द्वितीय स्थान केंद्रीय सड़क अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के श्री संजय चौधरी को प्राप्त हुआ। सभी प्रशिक्षणार्थियों ने इस प्रशिक्षण पाठ्यक्रम की उपयोगिता और व्यवस्था की सराहना की।

इस अवसर पर मुख्य अतिथि ने सारगर्भित दीक्षांत भाषण दिया। निदेशक, केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो, श्री राजकुमार सैनी और पूर्व निदेशक श्री बी॰डी॰ पांडे ने प्रशिक्षणार्थियों को संबोधित किया। पूरे प्रशिक्षण सत्र की रिपोर्ट प्रशिक्षण प्रभारी डा॰ कुसुम अग्रवाल ने प्रस्तुत की और धन्यवाद ज्ञापन ब्यूरो के उप-निदेशक एवं संयुक्त निदेशक (प्रभारी) श्री बिचार दास ने किया। कार्यक्रम का संचालन प्रशासन प्रभारी श्री दयाशंकर पाण्डेय ने किया।

केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो की सितंबर, 1996 की महत्वपूर्ण गतिविधियां

(क) प्रशासन संबंधी विवरण

श्री राजकुमार सैनी ने 19 सितंबर, 1996 को केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो के निदेशक का कार्यभार संभाल लिया है।

(ख) प्रशिक्षण संबंधी अन्य विवरणः

1. 5 दिवसीय संक्षिप्त अनुवाद प्रशिक्षण पाठ्यक्रमः

इस माह 9 से 13 सितंबर, 1996 तक नेशनल थर्मल पावर कारपोरेशन, दादरी में और 16 से 30 सितंबर, 1996 भारत एल्यूमीनियम कारपोरेशन लिमिटेड, कोरबा (मध्य प्देश) में आयोजित किए गए। इन दोनों कार्यक्रमों के बारे में भी सभी संबंधित अधिकारियों और प्रशिक्षणार्थियों ने बहुत अच्छी रिपोर्ट दी। इस प्रकार 30 सितंबर, 1996 को समाप्त वर्ष 1996-97 की पहली छमाही में 12 कार्यक्रम आयोजित किए गए और इनमें 275 अधिकारियों/कर्मचारियों को प्रशिक्षण दिया गया।

(ख) अनुवाद संबंधी विवरणः

अगस्त, 1996 में (1) ब्यूरो की नियमित स्थापना द्वारा लगभग 4600 मानक पृष्ठों का अनुवाद किया गया और (2) अनुवाद क्षमता विस्तार योजना के अधीन बाह्य अनुवादकों द्वारा लगभग. 2645 मानक पृष्ठों का अनुवाद किया गया। इस प्रकार इस माह उपर्युक्त दोनों योजनाओं के अधीन 7245 मानक पृष्ठों का अनुवाद किया गया।

इस माह केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान की रिपोर्ट का हिन्दी से अंग्रेजी में अनुवाद कर कंप्यूटर पर फीड किया गया। इसके अतिरिक्त गृह मंत्रालय और संयुक्त सचिव, राजभाषा के निर्देश पर गृह मंत्रालय जा कर रमेश चन्द्र समिति की गोपनीय रिपोर्ट का अनुवाद किया गया।

(ग) अनुवादकों के अखिल भारतीय पैनल के संबंध में विवरण

दिल्ली क्षेत्र से प्राप्त आवदेन-पत्रों की संवीक्षा के बाद 16 अगस्त, 96 को तीसरी और अंतिम लिखित परीक्षा आयोजित की गयी। उम्मीदवारों की संख्या अधिक होने के कारण पूर्वाह्न और अपराह्न में दो बैचों में परीक्षा ली गयी। प्रथम बैच में 48 आवेदकों को बुलाया गया जबकि परीक्षा के लिए केवल 36 व्यक्ति उपस्थित हुए। दूसरे बैच में 46 आवेदकों को पत्र भेजे गये जबकि परीक्षा के लिए केवल 25 व्यक्ति उपस्थित हुए। उत्तर-पुस्तिकाएं जांची जा रही हैं। साहित्य अकादमी के अनुवादकों के पैनल में दर्ज हिन्दी से अंग्रेजी तथा अंग्रेजी से हिन्दी भाषा के लगभग 700 अनुवादकों को पत्र भिजवा दिए गए हैं और राजभाषा विभाग के अनुवादकों के पैनल में शामिल होने के संबंध में उनकी सहमति मांगी गयी है।

(घ) केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो में हिन्दी पखवाड़ा और हिन्दी दिवस का विवरण

राजभाषा विभाग के निदेशों के अनुसार केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो द्वारा दि॰ 13-9-96 से 27-9-96 तक हिन्दी पखवाड़ा मनाया गया और 27-9-96 के अपराह्न में हिन्दी दिवस मनाया गया, जिसमें मुख्य अतिथि के रूप में आधुनिक साहित्य के मूर्धन्य सहित्यकार और नाटककार, श्री भीष्म साहनी को मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित किया गया। इस अवसर पर राजभाषा विभाग के निदेशक (नीति), उप सचिव (सेवा), निदेशक (तकनीकी), निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान और राजभाषा विभाग के अन्य अधिकारी भी ब्यूरो में पधारे थे। इस अवसर पर मुख्य अतिथि ने सभी प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कार भी वितरित किए।

बैंक नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, नागपुर

अंतर-बैंक हिन्दी टाइपिंग प्रतियोगिता

बैंक नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, नागपुर संयोजक — बैंक ऑफ इंडिया के तत्वावधान में यूनियन बैंक ऑफ इंडिया के क्षेत्रीय कार्यालय में सभी सदस्य-बैंकों के हिन्दी टाइपिस्टों के लिए दिनांक 3.8.1996 को अन्तर-बैंक हिन्दी टाइपिंग प्रतियोगिता आयोजित की गई।

इस प्रतियोगिता में 38 टंककों ने भाग लिया। यह प्रतियोगिता दो वर्ग में बांटी गई थी जिसमें एक प्रशासनिक कार्यालय वर्ग तथा दूसरी शाखा कार्यालय वर्ग।

अन्तर-बैंक सुगम संगीत प्रतियोगिता

बैंक नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, नागपुर की विगत 10.5.1996 को हुई बैठक के अनुसरण में सोमवार, दिनांक 12.8.1996 को सायं 6.00 बजे आइएमए हॉल, नॉर्थ अंबाझरी रोड, नागपुर में सदस्य-बैंकों के कर्मचारियों के लिए अन्तर-बैंक सुगम संगीत प्रतियोगिता आयोजित की गई। इसमें 24 स्टाफ-सदस्यों ने भाग लिया। इस प्रतियोगिता को दो वर्गों में बांटा गया एक गैर-फिल्मी तथा दूसरी फिल्मी।

कार्यक्रम की रूपरेखा पर समिति के सदस्य-सचिव, श्री तारादत्त जोशी, मुख्य अधिकारी (राजभाषा) ने प्रकाश डाला।

सरस्वती प्रतिमा पर माल्यार्पण तथा दीप प्रज्वलन मुख्य अतिथि, श्री मित्तल, मुख्य महाप्रबंधक, भारतीय रिज़र्व बैंक ने किया। इस कार्यक्रम की अध्यक्षता समिति अध्यक्षा श्रीमती मंजुषा वि० नाफडे, आंचलिक प्रबंधक ने की। इस अवसर पर अन्य बैंकों के वरिष्ठ उच्चाधिकारी तथा बैंकों के लगभग 450 स्टाफ-सदस्य उपस्थित थे।

इस रोचक प्रतियोगिता का संचालन, श्री सतीश मुकटे, राजभाषा अधिकारी, सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया ने किया। इस प्रतियोगिता के निर्णायक शहर के प्रसिद्ध संगीतज्ञ श्री ओ० पी० सिंह एवं श्री उन्नीकृष्णन्, वेस्टर्न कोलफिल्ड्स् लिमिटेड थे।

इस प्रतियोगिता में प्रथम, द्वितीय, तृतीय तथा प्रोत्साहन पुरस्कार निम्नानुसार प्रदान किए गए।

राजभाषा प्रयोग हेतु स्वस्थ वातावरण का सृजन करते हैं। उन्होंने विविध बैंकों के कलाकारों की प्रशंसा करते हुए कहा कि बैंकिंग क्षेत्र में सराहनीय सेवा के साथ बैंककर्मियों की कलाक्षेत्र में संलग्नता प्रशंसनीय हैं।

कार्यक्रम के अंत में पुरस्कृत प्रतियोगियों को श्रीमती मित्तल, श्री मित्तल एवं श्रीमती नाफडे ने पुरस्कार वितरित किए। आभार प्रदर्शन श्री कंतिलाल ठक्कर, मंडल प्रबंधक, यूको बैंक ने किया।

इस अवसर पर मुख्य अतिथि श्री मित्तल, मुख्य महाप्रबंधक, भारतीय रिजर्व बैंक, नागपुर ने अपने सम्बोधन में कहा कि सांस्कृतिक कार्यक्रम

बैंक ऑफ इण्डिया, राजस्थान

बैंक ऑफ इण्डिया के राजस्थान क्षेत्र के राजभाषा कक्ष ने जयपुर में दिनांक 9 सितम्बर, को जयपुर के सभी प्रमुख विद्यालयों के विद्यार्थियों के लिए अंतर-विद्यालय हिन्दी, बैंकिंग एवं सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता का आयोजन किया। इस प्रतियोगिता में 15 विद्यालयों के 30 विद्यार्थियों ने रूचि एवं उत्साह के साथ भाग लिया। विद्यालयों के अध्यापकों ने इस आयोजन की काफी सराहना की एवं हिन्दी के प्रयोग को प्रोत्साहित करने वाले इस आयोजन को उपादेय बताया।

प्रतियोगिता की व्यवस्था बैंक के राजभाषा अधिकारी श्री एस० पी० गर्ग "सुमन" द्वारा की गई थी एवं यह आयोजन बैंक नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जयपुर के तत्वावधान में सम्पन्न हुआ।

बैंक नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जयपुर के तत्वावधान में जयपुर में दिनांक 9 सितम्बर को बैंक ऑफ इंडिया के राजस्थान क्षेत्र के राजभाषा कक्ष द्वारा शहर की सभी प्रमुख बैंकों के स्टाफ सदस्यों के लिए अंतर बैंक प्रश्न मंच प्रतियोगिता का आयोजन किया गया।

इस प्रतियोगिता की व्यवस्था बैंक के राजभाषा अधिकारी श्री एस० पी० गर्ग "सुमन" द्वारा की गई थी, जिसमें 12 बैंकों के सभी संवर्गों के 24 स्टाफ सदस्यों ने बड़ी रूचि एवं उत्साह के साथ भाग लिया। इस कार्यक्रम में बैंकिंग/राजभाषा/हिन्दी एवं सामान्य ज्ञान से संबंधित प्रश्न पूछे गये थे। सहभागियों ने इस आयोजन की भूरि-भूरि सराहना की एवं हिन्दी के प्रयोग में बैंक की सक्रिय भूमिका को रेखांकित करते हुए आयोजन को अत्यंत सार्थक एवं सफल बताया।

लाइब्रेरी विज्ञान, पर्यटन पाठ्यक्रम हिंदी में

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (इग्नू) के लाइब्रेरी विज्ञान और पर्यटन पाठ्क्रम जल्दी ही हिन्दी माध्यम में उपलब्ध होंगे। हिन्दी मास के समापन समारोह में इग्नू के समकुलपति डा० एस० के गन्थे ने यह जानकारी दी। उन्होंने कहा कि विश्वविद्यालय में अनेक पाठ्यक्रम हिन्दी में भी चलाए जा रहे हैं। कम्प्यूटर विज्ञान की पाठ्य सामग्री भी तैयार की जा चुकी है। विश्वविद्यालय के मानविकी विद्यापीठ के हिन्दी के आचार्य डी० वी० जगन्नाथ ने कहा कि भारत का संविधान ही एक ऐसा संविधान है जिसमें राजभाषा का उल्लेख किया गया है। हिन्दी हमारे मौलिक अधिकारों का प्रतीक है। हर व्यक्ति को यह अधिकार होना चाहिए कि वह अपनी भाषा में काम करे और वह अधिकार हिन्दी के राजभाषा होने से व्यक्त होता है। जब हम हिन्दी की बात करते हैं तो सभी क्षेत्रीय भाषाओं की बात करते हैं। जब हम अंग्रेजी में काम करते हैं तो वह केवल अंगूठा लगाने के समान होता है।

नेशनल फर्टिलाइजर्स की मैनेजमेंट ट्रेनीज की भर्ती परीक्षा में हिन्दी का विकल्प

दैनिक नवभारत टाइम्स के 17 अक्तूबर 1996 के अंक के छपे एक समाचार के अनुसार नेशनल फर्टिलाइर्स लिमिटेड, नई दिल्ली-3 द्वारा मैनेजमेंट ट्रेनीज की भर्ती के लिए जो प्रतियोगी परीक्षा ली जाएगी उसमें सामान्य अभिरूचि, विश्लेषणात्मक क्षमता तथा तकनीकी/व्यवसायिक ज्ञान की परीक्षा होगी। प्रश्न-पत्र दोनों भाषाओं अर्थात हिन्दी-अंग्रजी में होंगे।

सर्वाधिक समाचार पत्र अभी भी हिन्दी में

अभी भी कई व्यक्तियों को यह भ्रम है कि भारत में भाषाई समाचार पत्रों की अपेक्षा अंग्रेजी से समाचार पत्र न केवल संख्या में ही अधिक हैं अपितु उनकी प्रसार सख्या भी अधिक है। किन्तु पिछले लगभग 15 साल से हिन्दी के समाचार पत्र अंग्रेजी समाचार पत्रों की अपेक्षा दोनों ही दृष्टियों से काफी आगे बढ़ गए हैं। हिन्दी समाचार पत्रों की यह वृद्धि निरन्तर जारी है। समाचार पत्र पंजीयक की जो 39वीं रिपोर्ट प्रकाशित हुई है और जिसमें 1994 की स्थिति दी गई है उसके अनुसार, जैसा कि दैनिक नवभारत टाइम्स के 15 अक्तूबर 1996 के अंक में सूचना प्रकाशित हुई है, सख्या की दृष्टि से 1993 के समान 1994 में भी हिन्दी समाचार पत्र छाए रहे। हिन्दी कुल 13650 पत्रों से सबसे आगे रही। अंग्रेजी के कुल 5525, उर्दू के 2553, बंगला के 2115, मराठी के 1639 तथा तमिल भाषा के 1540 पत्र छप रहे थे।

प्रसार संख्या के क्षेत्र में हिन्दी प्रेस 2 करोड़ 99 लाख 45 हजार प्रतियों के साथ पहले, अंग्रेजी 97 लाख 61 हजार प्रतियों के साथ दूसरे तथा मलयालम प्रेस 65 लाख 11 हजार प्रतियों के साथ तीसरे स्थान पर रही।

सर्वाधिक दैनिकों की दृष्टि से भी 1994 के दौरान प्रथम स्थान हिन्दी प्रस 1790 दैनिक को ही मिला। इस मामले में 419 दैनिकों के साथ उर्दू दूसरे, 311 के साथ तमिल प्रेस तीसरे, 284 दैनिकों के साथ अंग्रेजी प्रेस चौथे, 244 दैनिकों के साथ मराठी प्रेस पांचवें, 241 दैनिकों के साथ कन्नड़ प्रेस छठे तथा 191 दैनिकों के साथ मलयालम प्रेस सातवें स्थान पर रहा।

प्रसार संख्या के क्षेत्र में एक करोड़ 23 लाख 30 हजार प्रतियों के साथ हिन्दी दैनिक प्रेस चोटी पर रही है। अंग्रेजी प्रेस 46 लाख 50 हजार प्रतियों के साथ दूसरे स्थान पर रही।

2. हिन्दी समाचार पत्रों की बढ़ती हुई लोकप्रियता के कारण अब देशी-विदेशी बड़ी-बड़ी कंपनियां भी उनमें अपने विज्ञापन देना अधिक लाभदायक समझने लगी हैं। विश्वास है कि अन्य क्षेत्रों में भी हिन्दी अंग्रेजी भाषा को बहुत शीघ्र पछाड़ देगी।

भारतीय भाषाओं की उन्नति के लिए

संघ लोक सेवा आयोग द्वारा ली जाने वाली सिविल सेवा परीक्षा (जिसके आधार पर आई०ए०एस० आदि लगभग 30 राजपत्रित सेवाओं के लिए भर्ती की जाती हैं) में अंग्रेजी के इलावा संविधान की अष्टम अनुसूची में उल्लिखित भाषाओं में से एक भारतीय भाषा भी अनिवार्य है। शेष प्रश्न-पत्रों के उत्तर अंग्रेजी के अतिरिक्त संविधान में उल्लिखित किसी भी भारतीय भाषा में दिए जा सकते हैं। इस विकल्प का लाभ उठाकर पर्याप्त संख्या में परीक्षार्थियों ने भारतीय भाषाओं के माध्यम से आई०ए०एस० में भी सफलता प्राप्त की है। किन्तु यह बहुत जरूरी है कि भारतीय भाषाओं के माध्यम से परीक्षा देने वालों के लिए सभी राज्य सरकारें अपने राज्य में अनुशिक्षण एवं मार्गदर्शन के लिए विशेष कोचिंग क्लासों तथा कार्याशालाओं का आयोजन करें और संदर्भ-पुस्तकालयों की स्थापना भी करें। दिल्ली सरकार की हिन्दी अकादमी, समुदाय भवन, पदम नगर, किशनगंज, दिल्ली-7 ने ऐसी व्यवस्था दिल्ली में रहने वाले परीक्षार्थियों के लिए की है। अब जबकि देश स्वतंत्रता की स्वर्ण जयन्ती मना रहा है, यह जरूरी है कि अन्य राज्य सरकारें भी ऐसी ही व्यवस्था करें। कुछ अन्य प्रतियोगी परीक्षाओं में भी हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं के माध्यम का विकल्प दिया जा चुका है। उनकी तैयारी के लिए भी विशेष कक्षाओं का

आयोजन किया जाना चाहिए जिससे कि भारतीय भाषाओं के माध्यम से परीक्षार्थियों की संख्या में वृद्धि हो तथा अंग्रेजी का वर्चस्व और इन सेवाओं में अंग्रेजी दां अधिकारियों का एकाधिकार समाप्त हो सके।

सभी जन प्रतिनिधियों, धार्मिक, सामाजिक और भारतीय भाषाओं की सेवा में कार्यरत संस्थाओं से भी अनुरोध है कि इसके लिए पूर्ण संगठन शक्ति से राज्य सरकारों पर दबाव बनाए रखें और निरन्तर प्रयत्न करते रहे। ये स्वयं अथवा धर्मार्थ ट्रस्टों के माध्यम से भी विशेष कक्षाओं का आयोजन कर सकती है। इस रचनात्मक कार्य में व्यय कम होगा और लाभ अधिक। जब भारतीय भाषाओं के माध्यम से सफल होकर युवक और युवतियां सरकारी पदों पर नियुक्त होंगी तो कार्यालयों में अंग्रेजी का वर्चस्व अपने आप कम होता जाएगा और भारतीय भाषाओं का व्यवहार पक्ष सबल होगा।

अभियंताओं/अधिकारियों की भर्ती परीक्षा में हिन्दी का विकल्प

इंडियन ऑयल कॉरपोरेशन लिमिटेड, नई दिल्ली ने अपने 1.10.96 के पत्र संख्या-पी/आर/36 द्वारा श्री जगन्नाथ, संयोजक, राजभाषा कार्य, के०स०हि० परिषद को सूचित किया है कि निगम में अभियंताओं/अधिकारियों तथा स्नातक प्रशिक्षु अभियंताओं की भर्ती परीक्षा में सभी विषयों के लिए प्रश्न-पत्र अंग्रेजी के अतिरिक्त हिन्दी में भी छापे जाएंगे। क्योंकि लिखित परीक्षा वस्तुनिष्ठ होगी, अतः उम्मीदवारों को उत्तर पुस्तिका में प्रत्येक प्रश्न में समक्ष उचित गोले को एच को एच बी पैंसिल से काला करना होगा। इसके अतिरिक्त लिखित परीक्षा में सफल उम्मीदवारों को समूह वार्ता/कार्य और साक्षात्कार में हिन्दी या अंग्रेजी किसी भी माध्यम से बोलने का विकल्प दिया जाएगा। प्रसंगवश उक्त प्रतियोगिता के आधार पर 206 अभियन्ताओं/अधिकारियों आदि का चयन किया जाना है।

***

पृष्ठ 72 का शेष

सीखतें है उसका हमारे जीवन पर, साहित्य पर प्रभाव पड़ता है। पुस्तकालय सच्चे मायने में ज्ञान का भंडार हैं। इन पुस्तकालयों ने मुझे जितना अमृत दिलाया, उसका जीता-जागता प्रमाण है— उनका अपना साहित्य, अपना छोटा-सा पुस्तकालय और पुस्तकालय में रहकर जो बरसों बरस गुजारे हैं, पुस्तकालयों में जो कुछ भी सीखा है, ग्रहण किया है उस का सार उन्होंने अपनी पुस्तकों में व्यक्त किया है।

श्रीमती कानन बाला सिंह, अध्यक्ष दिल्ली लाइब्रेरी बोर्ड ने कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए कहा कि श्रद्धेय सत्यार्थी जी ने अपने साहित्य में यथार्थ का ऐसा चित्रण किया है जैसे समाज के उस दर्द को, उस पीड़ा को इन्होंने बहुत करीब से देखा हो, जिया हो। पुस्तकें वास्तव में हमारी सबसे अच्छी मित्र हैं। किताबें हमारी सुप्त चेतना को जगा कर हमें जागृत करती हैं और अपनी संस्कृति से जुड़ने का माध्यम बनती है। उन्होंने कहा कि लाइब्रेरी ही वह माध्यम है जहां पाठकों को हर प्रकार की पुस्तकें उपलब्ध कराई जाती है। लाइब्रेरी का उद्देश्य ही है लोगों में पठन-पाठन की अभिरुचि जागृत कराना। उन्होंने कहा कि पुस्तकालयों के महत्व पर श्री देवेन्द्र सत्यार्थी जी ने जो विचार प्रकट किए हैं उनको संजोकर हमारी युवा पीढ़ी पुस्तकालयों से बहुत कुछ पाने एवं सीखने का अवसर प्राप्त कर सकेगी।

प्रस्तुतिः सुधि सक्सेना

***

आदेश-अनुदेश

राजभाषा विभाग का दिनांक 28.10.96 का कार्यालय ज्ञापन सं॰ 11014/8/96-रा॰ भा॰ (प॰)

विषयः राजभाषा विभाग द्वारा समय-समय पर हिंदी में प्रकाशित पुस्तकों/पत्रिकाओं की संस्तुति।

संदर्भः राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय का समसंख्यक का॰ ज्ञा॰ दिनांक 25/7/1996

राजभाषा विभाग द्वारा समय-समय पर हिंदी की स्तरीय पुस्तकों एवं पत्रिकाओं की सूचियां जारी की जाती हैं। इन पुस्तकों एवं पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से केन्द्र सरकार के अधिकारियों और कर्मचारियों को जहां एक ओर पठनीय साहित्य उपलब्ध होता है वहीं दूसरी ओर गैर सरकारी क्षेत्रों द्वारा प्रकाशित पुस्तकों एवं पत्रिकाओं को भी प्रोत्साहन मिलता है। इसी दृष्टि से राजभाषा विभाग द्वारा निम्नलिखित पत्रिकाओं के कुछ अंकों में संकलित सामग्री पर विचार किया गया है:—

पत्रिका का नाम	लेखक का नाम	मूल्य	प्राप्ति स्थान
1. "दक्षेस संस्कृति"	श्री सोमदत्त शर्मा	30/-	दक्षेस संस्कृति, आई-94 गोविंदपुरम, गाजियाबाद (उ॰प्र॰)
2. "तथ्य भारती"	श्री दीनानाथ दुबे	5/-	1. तथ्य भारतीय .प पेल टी-160/46, तिलक नगल र, कोटा-324007 2. तथ्य भारतीय, 338 खजूरी, पाडेपुर, वाराणल सी-221002
3. "ओजस्विनी"	डा॰ सुधा मलैया	12/-	100/22, शिवाजी नगर, भोपाल-462016.(म॰प्र॰)
4. "सर्वोत्तम रीडर्स डाइजेस्ट"	श्री अरुण कुमार	21.50/-	बी-15, झिलमिल, इंडस्ट्रीयल, एरिया, नई दिल्ली-95
5. "हंस"	श्री राजेन्द्र यादव	15/-	अक्षर प्रकाशन, प्रात लि॰, 2/36, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-2.

सभी मंत्रालयों/विभागों/कार्यालयों/सार्वजनिक उपक्रमों/बैंकों/स्वायत्त निकायों/प्रशिक्षण संस्थाओं आदि से अनुरोध है कि वे अपने पुस्तकालय/वाचनालयों और संदर्भ प्रकाष्ठों आदि में उपर्युकत पत्रिकाएं उपलब्ध कराने हेतु इन पत्रिकाओं के ग्राहक बनने पर विचार करें।

पाठकों के पत्र

राजभाषा भारती का 73वां अंक प्राप्त हुआ। इस अंक में शंकर दयाल सिंह के विषय में अच्छी सामग्री प्रकाशित हुई है। यह कहने में अतिश्योक्ति नहीं होगी कि स्वर्गीय शंकर दयाल सिंह का हिंदी साहित्य को योगदान अपना अनोखा महत्व रखता है। हिन्दी आशुलिपिकों और हिंदी टंककों का महत्व शीर्षक लेख पर श्री जगन्नाथ ने अच्छा प्रकाश डाला अंक बहुत सुन्दर बन पड़ा है।

विठ्ठल नारायण चौधरी, महासचिव, अखिल भारतीय हिंदी शिक्षक समिति, नंदभवन कालोनी, नागपुर (महाराष्ट्र)

राजभाषा भारती का अप्रैल-जून, 1996 का अंक प्रात हुआ, धन्यवाद।

प्रस्तुत अंक पिछले सभी अंकों को पीछे छोड़ गया है। वस्तुतः यह अंक डा० शंकर दयाल सिंह की स्मृति में उनके अनुरूप बन गया है।

श्री बाल्मीकि प्रसाद सिंह का आलेख "संस्कृति और प्रशासन" बेजोड़ है। डा० द्विवेदी के लेख से अनेक नई सूचनाएं प्राप्त हुई। डा० ब्रजकिशोर जी ने सरलीकरण ने मुद्दे को सही परिप्रेक्ष्य में उठाया है। सभी रचनाएं मर्मस्पर्शी एवं प्रेरणाप्रद हैं।

ऐसे अद्वितीय अंक के लिए आपको तथा आपके सहयोगियों को बधाइयां।

कैलाशचन्द्र भाटिया, डी०लिट्, पूर्व फोफेसर (हिंदी) नंदन, भारती नगर, मौरिस रोड़, अलीगढ़

हमें राजभाषा भारती का अंक मिला; आपने अंक भेजकर जो कृपा हम पर की है इस का बहुत-बहुत शुक्रिया। "राजभाषा भारती" का अंक पढ़कर हमें हिंदी की उन महान हस्तियों के बारे में और हिंदी की बोलियों की अच्छी जानकारी मिली। हिंदी भाषा के प्रचार और प्रसार के लिए जो कदम हमारी सरकार ने उठाए हैं वो अच्छे और सही हैं। जिस राष्ट्र की राष्ट्रभाषा ही न हो वह मुर्दा राष्ट्र जिंदा लाश है। हमारी राष्ट्रभाषा पर हमें गर्व है और हमेशा रहेगा। हमारे देश के हर नर-नारी युवा-युवती के होंठों पर हिंदी बोली ही हो, और हमेशा राष्ट्रभाषा पर गर्व हो यही ईश्वर से हमारी प्रार्थना है।

अनिल कुमार भानुदास पठारे वालवने, अ० नगर

आपके उत्कृष्ठ संपादन में "राजभाषा भारती" का अंक 68 देखा, पढ़ा। नई अनुभूति हुई। रचनाओं के चयन में औपचारिकता की गंध नहीं मिली। चिंतन खंड "हिंदी कहां अटकी" हिंदी ही उच्चतर शिक्षा का माध्यम हो", अंग्रेजी समर्थकों की दुखती रग" विशेष रूप से विचारोत्तेजक एवं हिन्दी के वास्तविक मूल्यांकन की दिशा में सक्षम हैं। रचनाकारों को बधाईयां।

जयप्रकाशमानस, सचिव, सृजन-सम्मान, जी-II / 24, ई०एस०सी० कालोनी, रायपुर (म०प्र०) 492001।

"राजभाषा भारती" का अंक 72 (जनवरी-मार्च, 1996) पढ़कर विशेष आनंद की अनुभूति हुई। चिंतन के अन्तर्गत "हिंदीः एक परिप्रेक्ष्य" (दयानाथ लाल) व "कार्यालयी भाषा हिंदी का स्वरूप" (डा० किरणपाल सिंह) आलेख विशेषतः पठनीय है। "साहित्यिकी" स्तंभ में डा० पांचाल ने मीर पर तथ्य परक विवरण दिया है तथा श्री राजकुमार ने "गीतकाव्य का भविष्य" भली प्रकाश स्पष्ट किया है।

संस्कृति दर्शन में संस्कृत के साथ भारतीय भाषाओं के परस्पर संबंधों की चर्चा की जा सकती है। विविधा में अरूणाचल प्रदेश तथा नागलैंड में हिंदी की स्थिति की महत्वपूर्ण जानकारी मिली। यह विदित ही होगा कि अरूणाचल प्रदेश में रा०श०अनु० परिषद से प्रकशित हुई है। नागालैंड के लिए केन्द्रीय हिंदी संस्थान, आगरा ने तैयार की है।

"समाचार दर्शन" स्तंभ में कई उपयोगी जानकारियां प्राप्त हुई। "सेतु" वृत्तचित्र का व्यापक प्रसार होना चाहिए।

अंतिम पृष्ठ पर गांधी जी के 27 दिसम्बर, 1917 के उद्धरण की सहस्त्रो प्रतियां करवाकर नई सरकार के मंत्रियों और उच्चाधिकारियों के समक्ष बोलते पोस्टर के रूप में टंगवा दी जायें, शायद कुछ सोच में अंतर आए।

कैलाश चन्द्र भाटिया नंदन, भारती नगर, मौरिस रोड़, अलीगढ़-202001

संस्था के पुस्तकालय में "राजभाषा भारती" का 72वां अंक (जनवरी-मार्च, 96) देखने को मिला। मेरे लिए यह एक सुखद आश्चर्य था कि एक सरकारी पत्रिका में भी चिंतनपरख, वैचारिक और सांस्कृतिक-साहित्यिक सामग्री।

इस अंक का विशेष आकर्षण "बूंदे रचती जलकथा" के अंतर्गत देवेन्द्र शर्मा "इन्द्र" के दोहे हैं। 40 के 40 दोहे एक से एक बढ़कर हैं। मीर पर डा० परमानंद पांचाल का लेख तथा उर्दू गुलदस्ते का संकलन भी बहुत खूब रहा है। आप ही के द्वारा संपादित राजभाषा पुष्पमाला के मार्च और अप्रैल अंकों में भी उच्च स्तरीय ज्ञानवर्धक सामग्री का समावेश है। अप्रैल अंक में "भाषा की वैज्ञानिकता और बोलियों का अंतसंबंध तथा मार्च अंक में देवेन्द्र इस्सर का वैचारिक आलेख "मृत्युपूर्व और लिखना भविष्य का" विचारोत्तेजक है।

सुरेन्द्र वर्मा, उपनिदेशक, पार्श्वनाथ विद्यापीठ, आई॰टी॰आई॰ रोड, करोंदी पो॰ आ॰ बी॰ एच॰ यू॰ वाराणसी-221005

"राजभाषा भारती" का एक अंक पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। पत्रिका का स्वरूप एवं विषयवस्तु मन को भा गए। राजभाषा के विकास एवं प्रगति के विषय में ऐसी सारगर्भित एवं सटीक जानकारी उपलब्ध कराने के लिए मेरी ओर से हार्दिक अभिनंदन स्वीकार करें। मैं चाहूंगा कि इस पठनीय व प्रशंसनीय पत्रिका के अंक मुझे नियमित रूप स मिलते रहें। पत्रिका की निरंतर उन्नति के लिए मेरी शुभकामनाएं।

अभयकुमार, मुक्त पत्रकार, एफ-12, चन्द्र नगर, दिल्ली-110051.

आपके द्वारा प्रेषित "राजभाषा भारती" अंक 72, जनवरी-मार्च, 96 की एक प्रति साभार प्राप्त हुई। पत्रिका में प्रकाशित लेख "प्राचीन से अर्वाचीन की ओर", कार्यालयी भाषा हिंदी का स्वरूप", भारतीय भाषा के भविष्य के लिए जनधर्म" इत्यादि लेख उच्च स्तरीय हैं।

"साहित्यिकी" के अन्तर्गत प्रकाशित "गीत काव्य का भविष्य" कहते है कि अगले जमाने में कोई मीर भी था "इत्यादि लेख भी रोचक व पठनीय हैं।

नरसिंह राम, सहायतक निदेशक (राजभाषा), परमाणु ऊर्जा विभाग, तूतीकोरिन, तमिलनाडु

जनवरी-मार्च, 1996 का अंक प्राप्त हुआ। पत्र के द्वारा काफी ज्ञानवर्द्धक जानकारी मिली। विशेष रूप से दो लेख "कार्यालयी भाषा हिंदी का स्वरूप-भारतीय भाषा के भविष्य के लिए जनधर्म" बहुत पसन्द आए।

उम्मीद है कि भविष्य में भी आप पत्रिका भेजने का क्रम जारी रखेंगे। धन्यवाद।

रंजन कुमार, सहायक प्रबंधक (राजभाषा), राष्ट्रीय आवास बैंक, कोर 5-ए, तृतीय तल इंडिया हैबीटेट संटर, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.

"राष्ट्रभाषा हिंदी एकमात्र संयुक्त प्रान्त की स्वभाषा नहीं है, राजस्थान की भी है...हिंदी को यदि राष्ट्रभाषा होना है तो राष्ट्र की अन्य भाषाओं की शक्ति और सौंदर्य को इसमें लाना चाहिए ।"

कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी

"हमारे लिए एक परम सौभाग्य और गर्व की बात है कि भारत में अनेक महान् भाषाएं हैं, और प्रत्येक एक दूसरे से संबंधित हैं। हमें इन सभी भाषाओं को समृद्ध बनाना चाहिए तथा अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त, अन्य भाषाओं के प्रति विरोध की भावना नहीं रखनी चाहिए। सभी भाषाएं युगों-युगों से विकसित होकर भारत की मिट्टी में ही पनपी और बढ़ी हैं। इनमें से किसी एक भाषा की क्षति सारे भारत की क्षति है।

राष्ट्र भाषा के रूप में हिन्दी हमारे देश की एकता में सबसे अधिक सहायक सिद्ध होगी, इसमें दो राय नहीं।"

—पंडित जवाहर लाल नेहरू

"हम सब चाहते है कि हिन्दी आगे बढ़े। हिन्दी किस प्रकार की हो, हम सबको मिलकर यह निर्णय करना है। मुझे बहुत कठिन हिन्दी नहीं आती है। इसलिए मेरी इच्छा यही है कि सरल हिन्दी हो लेकिन संग-संग जो दूसरे लोग हैं, चाहे महाराष्ट्र में हैं, चाहे गुजरात में और चाहे मलयालम बोलते हैं, उनकी दूसरी भाषा हिन्दी ज्यादा सरल लगती है जिसमें संस्कृत के शब्द हैं। इसलिए इन सब चीजों का हमें ध्यान रखना है।

इतने बड़े देश में जहां इतनी भाषाएं है, वहां देश की एकता के लिए एक कड़ी की आवश्यकता है। कोई भाषा ऐसी हो, जिसे सब बोल सकें, जो एक कड़ी की तरह सबको मिला-जुला कर रख सके। इसलिए हिन्दी को बढ़ावा देना सबका काम है।"

—श्रीमती इन्दिरा गांधी

1 - 48/D. of OL/ND/97

नेताजी सुभाषचन्द्र बोस जन्मशताब्दी वर्ष

देश के सबसे बड़े भू–भाग में बोली जाने वाली हिंन्दी ही राष्ट्रभाषा पद की अधिकारिणी है ।

---सुभाष चन्द्र बोस

प. स. 3246/77

आई एस एस एन 0970-9398

"शायद हममें कुछ ऐसे आदमी हैं, जिन्हें इस बात का डर है कि हिंदीवाले हमारी मातृभाषा को छुड़ाकर उसके स्थान में हिंदी रखवाना चाहते हैं । यह भी निराधार भ्रम है । हिंदी प्रचार का उद्देश्य केवल यही है कि आजकल जो काम अंग्रेजी से लिया जाता है वह आगे चलकर हिंदी से लिया जाए । अपनी माता से भी ज्यादा प्यारी मातृभाषा बंगला को तो हम कदापि नहीं छोड़ सकते, किंतु भारत के विभिन्न प्रान्तों के भाइयों से बातचीत करने के लिए हिंदी या हिंदुस्तानी तो सीखनी ही चाहिए । स्वाधीन भारत के नवयुवकों को हिंदी के अतिरिक्त जर्मन, फ्रेंच आदि यूरोपीय भाषाओं में ऐसी एक-दो सीखनी पड़ेगी, नहीं तो अतंर्राष्ट्रीय मामलों में हम दूसरी जातियों का मुकाबला नहीं कर सकेंगे ।...

...कुछ लोगों का विचार है कि बंगला राष्ट्रभाषा हो, क्योंकि इसमें उच्च कोटि का साहित्य है । हिंदी में उच्च साहित्य है अथवा नहीं, यह विवादग्रस्त विषय उठाना ठीक नहीं है । हिंदी व्यापक रूप से भारत में बोली जाती है और इसमें संग्रहण शक्ति है तथा यह सरल है ।"

–सुभाष चन्द्र बोस

एंडवास, जुलाई 1938

राजभाषा विभाग, भारत सरकार, (गृह मंत्रालय) लोकनायक भवन, नई दिल्ली-110003 के लिए उप संपादक द्वारा प्रकाशित तथा प्रबंधक, भारत सरकार फोटोलिथो मुद्रणालय फरीदाबाद द्वारा मुद्रित ।